स्वनिर्मित जीवन

खण्ड – 2

सृजनक भीतर समाज

स्वनिर्मित जीवन

खण्ड – 2

सृजनक भीतर समाज

डॉ. उमेश मण्डल

पल्लवी प्रकाशन
बेरमा/निर्मली

SWANIRMIT JEEVAN - 2

Society Within Creation
A Collection of Maithili Reflections on Life and Society by Dr Umesh Mandal

Swanirmit Jeevan – 2 continues this reflective project through fifty essays concerned with literature, creativity, and public life. Taking selected statements from Jagdish Prasad Mandal's **Payasvinee** as points of departure, the volume explores authorial identity, the relationship between lived experience and writing, marginal voices, creative independence, readers, criticism, literary institutions, recognition, digital media, linguistic confidence, discipline, and the use of time.
Jagdish Prasad Mandal's self-made life, rooted in farming, social struggle, sustained reading, and a literary practice that began relatively late yet developed with remarkable continuity, remains an important living context for these reflections. The volume, however, neither becomes a biography nor turns into an exercise in praise. Its central concern is to examine how society enters the creative process and how creation, in turn, can question, influence, and reshape society.
At the heart of the volume is a view of literature not merely as individual expression, but as a shared ethical and social practice. Writers, readers, critics, and institutions all participate in this larger process through dialogue, resistance, reflection, and change.

Published by: Pallavi Prakashan
Tulsi Bhawan, Nehru Marg, Ward no. 06, Nirmali, District: Supaul, Bihar: 847452

First Edition: 2026
ISBN: 978-93-48865-65-6
Price: 299/-
Copyright: © Author (Dr. Umesh Mandal)

Printed by: Manav Art (Pallavi Prakashan)
Typesetting: Dr. Umesh Mandal, umeshberma@gmail.com
Cover Design: Mrs. Poonam Mandal, Nirmali, Supaul, Bihar- 847452

Website: http://pallavipublication.blogspot.com
Email: pallavi.publication.nirmali@gmail.com
Mobile: +91 99316 54742, +91 62006 35563
Font Source: Google Fonts

All rights reserved. No part of this book may be reproduced, distributed, transmitted, adapted, paraphrased, stored in a retrieval system, or processed in any form or by any means, including electronic, mechanical, digital, or artificial intelligence systems, without the prior written permission of the copyright holder or the publisher.

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन

आरम्भिक लेख

दुनू खण्डक वैचारिक सेतु : जीवनसँ सृजन धरि

प्रवेश : सृजनक भीतर समाज

विचार-बिन्दु

1. हम केकर रचनाकार छी?
2. संस्कारक प्राण लोक-कण्ठमे अछि
3. धरतीसँ जन्मल साहित्य दुनियाँक सम्पैत बनैत अछि
4. रक्त सम्बन्ध नहि, पाठ सम्बन्ध देखू
5. आइक सामाजिक परिवेशमे केहेन साहित्य चाही?
6. दर्पण साफ रहत तखनहि समाज देखाइत रहत
7. रचनाकारक समदृष्टि : प्रिय-अप्रियसँ ऊपर
8. कथा नहि, जीवन हुनका पकड़ने छैन
9. मन झुझुआइए, तखन रचना निष्पक्ष अभिव्यक्तिक खोजमे रहैत अछि
10. शब्द जीवनक नक्शा अछि, खाली भाषाक रूप नहि
11. केन्द्रक कुर्सी आ हाशियाक आवाज
12. सत्ता नहि, दबल-कुचलल समाज हमर आधार
13. कतियाएल नहि, निष्पक्षधाराकेँ गति देनिहार

14. साहित्यकेँ भक्त नहि, निर्भीक पाठक चाही
15. लोभसँ मुक्त जीवनहि कलमकेँ स्वतंत्र रखैत अछि
16. सम्मानपत्रसँ साहित्यक दायित्व पूरा नहि होइत
17. रचनाक मूल्य प्रचारमे नहि, जीवन-दिशामे अछि
18. वर्तमानक कर्मे भविष्यक साहित्य बनबैत अछि
19. जे माँगै नहि, दइ छैथ, ओकर हिसाब साहित्य रखैत अछि
20. संघर्ष जखन साहित्य बनैत अछि, समाज प्रेमक बाट पबैत अछि
21. लोक पढ़ैत अछि, मुदा बजैत किए नहि?
22. लोक धरि नहि पहुँचल साहित्य सीमित रहि जाइत अछि
23. मैथिली साहित्यक लोकतंत्रीकरण अखन प्रतीक्षामे अछि
24. मंचक मनमानी साहित्यिक अराजकता बनैत अछि
25. सत्ताक निकटता जखन कसौटी बनैत अछि
26. मोबाइल युगमे साहित्यक परीक्षा
27. प्रतिष्ठा देल नहि जाइत, कर्मसँ बनैत अछि
28. स्वीकृति घोषणा नहि, लोकस्मृतिमे उतरबाक प्रक्रिया छी
29. अवसर बाहरसँ नहि अबैत, दृष्टि ओकरा चिन्हैत अछि
30. पुरस्कार अन्तिम लक्ष्य नहि, सृजनक यात्रा अनवरत अछि
31. भाषा कमजोर नहि, भरोस कमजोर अछि
32. सत्य हाशियाक नहि, ओकर स्वीकृति विलम्बित अछि
33. अतीतक गौरवमे अँटकल साहित्य वर्तमानक धड़कन नहि सुनैत
34. लोकक भाषामे लिखल साहित्य लोककेँ प्रेमक सूत्रमे जोड़ैत अछि
35. मिथिला सबहक, मैथिली सबहक, सेवा सेहो सबहक
36. पोथीसँ फेसबुक धरि विचारक यात्रा

37. आँगुरक इशाराक युगमे सुस्त समाज नहि चलि सकत
38. कागतपर लिखल मूल्यक परीक्षा साहित्यकारक बेवहारमे होइत अछि
39. गुट साहित्यकेँ सीमित करैत अछि
40. विचारक विनिमय संवाद बढ़बैत अछि
41. रचना बैसारी समयक खेल नहि, जीवनक नियमित वृत्ति अछि
42. समाजसँ कटि साहित्यक भाँज नहि लगैत
43. एक आँखि समाजपर, दोसर कागत-कलमपर
44. समाजसँ सटल साहित्ये आन्दोलन बनैत अछि
45. साहित्यक मूल स्वर प्रेम आ भायचारा
46. जीवनक प्रति प्रेम साहित्य अछि, जीवनक लड़ाइ ओकर सृजन
47. विचारक संघर्षमे साहित्य सभसँ प्रभावशाली अस्त्र
48. रचनाक दशा-दिशा नीक रहत, तँ साहित्यक धारा बनबे करत
49. मूल्यांकन समय करत, साहित्यकार सृजन करैत रहत
50. समाजक साँस जाधैर चलत, साहित्यक धारा ताधैर बहत

अन्तिम सामग्री

समापन : सृजनसँ जीवन धरि
स्रोत आ पाठ-सन्दर्भ

समर्पण

श्री जगदीश प्रसाद मण्डलजीक
ओइ स्वनिर्मित जीवन आ अविराम सृजनकेँ,
जइमे मिथिलाक माटि, श्रम आ संघर्षक संग
हाशियाक मनुक्ख अपन भाषा, गरिमा
आ आवाज पबैत अछि।

प्राक्कथन

✺

मनुक्ख जन्मक संग जीवन तँ पबैत अछि, मुदा ओकर भावी रूप, अर्थ आ दिशासँ अनभिज्ञ रहैत अछि। परिवार, भाषा, भूगोल आ सामाजिक सम्बन्ध ओकर जीवनक प्रारम्भिक आधार तैयार करैत अछि; अनुभव, प्रश्न, श्रम आ निर्णयक बीच ओ धीरे-धीरे अपन जीवनकेँ आकार दैत आ ओकर दिशा निर्धारित करैत अछि। एहि निरन्तर प्रक्रियामे जीवन मनुक्खक एकटा दीर्घ रचना बनि उठैत अछि, जकर निर्माणमे व्यक्तिक अपन चेतना आ समाजक सहभागिता दुनूक महत्त्वपूर्ण भूमिका रहैत अछि। डॉ. उमेश मण्डलक द्विखण्डीय कृति 'स्वनिर्मित जीवन' व्यक्ति आ समाजक एहि पारस्परिक सम्बन्धक वैचारिक पड़ताल करैत अछि।

'स्वनिर्मित' शब्द सामान्यतः व्यक्तिगत उपलब्धि आ आत्मनिर्भरताक बोध करबैत अछि। प्रस्तुत कृतिमे एकर अर्थ अधिक व्यापक अछि। जाति, लिंग, आर्थिक स्थिति, शिक्षा आ अवसरक असमानता जीवनक वास्तविक परिस्थिति अछि; तथापि मनुक्ख केवल एहि परिस्थितिक निष्क्रिय परिणाम नहि। ओ अपन स्थिति बुझि सकैत अछि, प्राप्त मान्यताक परीक्षण कऽ सकैत अछि आ अपन सामर्थ्य तथा सामूहिक सहयोगसँ परिवर्तनमे सहभागी भऽ सकैत अछि। स्वनिर्माण एतए सामाजिक सम्बन्धक भीतर अपन विवेक आ उत्तरदायित्व विकसित करबाक प्रक्रिया अछि।

एहि धारणाक एक आवश्यक नैतिक पक्ष अछि। शोषित मनुक्खकेँ ओकर शोषणक दोष देब अथवा प्रत्येक अभावकेँ व्यक्तिगत प्रयत्नक कमी मानब स्वनिर्माणक अर्थकेँ विकृत करत। कृति, विशेषतः एकर पहिल खण्ड, एहि सरलीकरणसँ स्पष्ट दूरी रखैत अछि। ओकर आग्रह परिस्थितिक अन्याय चिन्हब, जीवनक आधारभूत आवश्यकतासँ जुड़ल प्रश्न उठाएब आ परिवर्तनक प्रक्रियामे प्रभावित लोकक सहभागिता सुनिश्चित करब अछि। व्यक्तिगत आत्मबल आ

सामाजिक न्याय एहि दृष्टिमे परस्पर सम्बद्ध अछि।

दुनू खण्डमे पचास-पचास विचार-बिन्दु अछि। पहिल खण्ड 'समाजक भीतर मनुक्ख' प्रश्नधर्मी चेतना, आत्मबल, जीवनक द्वन्द्व आ आत्मपरीक्षणसँ आरम्भ भऽ संस्कृति, लोकस्मृति, स्त्री-अनुभव, परम्परा, आधुनिकता, भूख, जाति आ वर्चस्वक प्रश्न धरि बढ़ैत अछि। समस्याक पहचान आ सामूहिक समाधानक विवेचनसँ गुजरैत ई यात्रा गाम, जमीन, पानि, मातृभूमि आ भाषिक आत्मविश्वास धरि पहुँचैत अछि। एहि क्रमक मूल प्रश्न अछि जे समाज हमरा भीतर केना बसैत अछि आ हम अपन व्यवहारसँ ओकर निर्माणमे केना सहभागी होइत छी।

एहि खण्डक विशेषता सामाजिक आलोचनाकेँ आत्मपरीक्षणसँ जोड़ब अछि। अन्यायकेँ केवल सत्ता, संस्था वा दोसर व्यक्तिक आचरणमे देखल जाए, तँ प्रश्नकर्ताक अपन भूमिका अनदेखल रहि सकैत अछि। कृति पाठककेँ एहि एकपक्षीय दृष्टिसँ बाहर आनैत अछि। समानता आ मानवीय गरिमाक जे मूल्य हम सार्वजनिक रूपसँ स्वीकार करैत छी, से हमर पारिवारिक सम्बन्ध, जातिगत व्यवहार, श्रमक प्रति दृष्टि आ असहमत व्यक्तिक संग आचरणमे केतेक उतरैत अछि? एहि प्रश्नसँ सामाजिक विचार दैनिक जीवनक कसौटी बनैत अछि।

संस्कृतिक विवेचन एहि आत्मपरीक्षणकेँ ऐतिहासिक आ सामूहिक आधार दैत अछि। संस्कृति केवल पाबनि-तिहार वा औपचारिक संस्कार धरि सीमित नहि। खेतक श्रम, किसानक अनुभव, घर-परिवारमे विकसित ज्ञान, बोली-बानी, गीत आ लोकस्मृति सेहो ओकर निर्माण करैत अछि। एहि दृष्टिसँ लोकजीवन ज्ञानक स्रोतक रूपमे प्रतिष्ठित होइत अछि। संस्कृतिक मूल्यांकनमे ई देखब आवश्यक भऽ जाइत अछि जे ओकर प्रचलित परिभाषामे केकर अनुभव समाहित अछि आ केकर जीवन उपेक्षित रहि गेल अछि।

स्त्रीक मौखिक अनुभव आ संस्कार-गीतक चर्चा एहि प्रसंगमे विशेष महत्त्व रखैत अछि। औपचारिक शिक्षासँ वञ्चित अथवा ओहि धरि सीमित पहुँच रखनिहार स्त्रीसभक अनुभव, पीड़ा, हास्य, सम्बन्ध-बोध आ लोकबुद्धि गीतक माध्यमसँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी सुरक्षित रहल। मुदा पोथी लोकगीतकेँ घटनाक प्रत्यक्ष आ क्रमबद्ध अभिलेख नहि मानैत। ओ सामाजिक इतिहास आ सामूहिक स्मृतिक स्रोत अछि, जकर अध्ययनमे अवसर-विशेष, क्षेत्र, समुदाय, स्वर आ पाठान्तरक

ध्यान आवश्यक अछि। तहिना प्रत्येक गीतकेँ प्रतिरोधक घोषणा मानबो उचित नहि; स्वीकार, तनाव आ असहमतिसँ जुड़ल भिन्न स्वर ओकर सामाजिक प्रसंगमे खुलैत अछि।

परम्परा आ आधुनिकताक विवेचनमे सेहो एहि प्रकारक सावधानी अछि। विरासत जीवनदायी अनुभव सँजोगैत अछि, मुदा ओकर भीतर रूढ़ि आ वर्चस्वक संस्कार सेहो रहि सकैत अछि। जीवनोपयोगी परम्पराक संरक्षण आ अमानवीय मान्यताक पुनर्परीक्षण एक संग आवश्यक अछि। तहिना नव साधनक उपयोग मात्रसँ चेतना आधुनिक नहि भऽ जाइत। तकनीकक सामाजिक अर्थ ओकर उपलब्धता, प्रयोगक दिशा आ लोकजीवनपर पड़ैत प्रभावसँ निर्धारित होइत अछि। प्रश्न, प्रमाण, समानता आ मानवीय गरिमाक स्वीकृति साधनक आधुनिकताकेँ वैचारिक आधुनिकतासँ जोड़ैत अछि।

परम्परा आ आधुनिकताक एहि विवेकक सामाजिक परीक्षा भूख, जाति आ क्षेत्रीय भेदक प्रश्नपर होइत अछि। अभावक कारण अनदेखल राखि केवल व्यक्तिक आचरणपर निर्णय देलासँ न्याय अधूरा रहैत अछि। जातिगत अपमान आ आर्थिक शोषणक परस्पर सम्बन्ध बुझब सेहो आवश्यक अछि। समाधानक आधार केवल नैतिक उपदेश अथवा कोनो एक व्यक्तिक पहल नहि भऽ सकैत; समस्याक जड़ि चिन्हब, प्रभावित लोकक अनुभव सुनब आ सामूहिक निर्णयक प्रक्रिया विकसित करब आवश्यक अछि। एहि ठाम स्वनिर्माणक सामाजिक अर्थ अधिक स्पष्ट होइत अछि।

पहिल खण्डक अन्त मैथिलीक प्रति आत्मविश्वासक आह्वानसँ होइत अछि। एहि ठामसँ दोसर खण्ड 'सृजनक भीतर समाज'क आरम्भिक प्रश्न उठैत अछि: 'हम केकर रचनाकार छी?' अपन भाषा आ सामाजिक सामर्थ्यक पहचानक बाद प्रश्न उठैत अछि जे ओकर उपयोग कोन जीवनकेँ अभिव्यक्ति देबाक लेल होएत। लेखक केकर अनुभव देखैत अछि, केकर श्रम आ संघर्षकेँ साहित्यिक गरिमा दैत अछि आ केकर जीवन ओकर दृष्टिसँ बाहर रहि जाइत अछि?

दोसर खण्ड एहि प्रश्नकेँ रचनाकारक सामाजिक दृष्टि आ रचना-विधानसँ जोड़ैत अछि। लेखक असगर लिखि सकैत अछि, मुदा ओकर भाषा, स्मृति आ अनुभव सामाजिक सम्बन्धसँ विकसित होइत अछि। ओकर विषय-चयन, पात्र-

गठन, शब्द-प्रयोग आ मौनमे सेहो समाज उपस्थित रहैत अछि। साहित्यक पक्षधरता तखन केवल घोषित मत धरि सीमित नहि रहैत; ओ एहि बातमे प्रकट होइत अछि जे रचना मनुक्खकेँ केतेक गहराइसँ बुझैत अछि आ पाठककेँ विचार करबाक केहन अवसर दैत अछि।

एहि सन्दर्भमे सामाजिक उत्तरदायित्व आ कलात्मक अनुशासनक सम्बन्ध महत्त्वपूर्ण अछि। लोकहितकारी उद्देश्य अपने-आप प्रभावी साहित्यक प्रमाण नहि बनैत। अनुभवकेँ उपयुक्त भाषा, संरचना, संवेदना आ शिल्प चाही। कृति रचनाक 'दशा' आ 'दिशा'क विवेचनमे एहि सम्बन्धकेँ स्पष्ट करैत अछि। कमजोर रचना-विधान विचारक प्रभाव सीमित कऽ सकैत अछि; तहिना कलात्मक चमक मात्र मानवीय सार्थकताक पर्याप्त आधार नहि। साहित्यक सामाजिक दृष्टिक विश्वसनीयता ओकर रचनात्मक गठनसँ सेहो परखल जाएबाक चाही।

लेखकक प्रश्नसँ आगू बढ़ि ई खण्ड पाठक, आलोचना, साहित्यिक संस्था आ सार्वजनिक मंचक भूमिकापर विचार करैत अछि। साहित्यिक लोकतन्त्रीकरणक अर्थ विभिन्न वर्ग, क्षेत्र आ अनुभवसँ उठैत आवाजकेँ अभिव्यक्तिक अवसर, पाठकीय पहुँच आ निष्पक्ष मूल्यांकन भेटब अछि। रचनाकारक सम्मानक संग पाठकक प्रश्न करबाक स्वतन्त्रता बनल रहए, ई आवश्यक अछि। रचनाक मूल्यांकन नाम, निजी निकटता वा गुटगत सम्बन्धक आधारपर हेबाक बदला पाठ, तर्क आ रचनात्मक सामर्थ्यक आधारपर होए, तखने साहित्यिक संवाद सार्थक बनैत अछि।

प्रचार, पुरस्कार आ प्रतिष्ठाक विवेचन सेहो एहि कसौटीसँ जुड़ैत अछि। सम्मान आ प्रचार रचनाकेँ पाठक धरि पहुँचेबामे सहायक भऽ सकैत अछि, मुदा ओकर साहित्यिक मूल्य निर्धारित करबाक पर्याप्त प्रमाण नहि। पुरस्कार स्वीकार करब अथवा ओकरासँ दूरी राखब मात्रसँ लेखकक स्वतन्त्रताक निर्णय नहि कएल जा सकैत। मूल प्रश्न ओकर विवेक आ सृजनक प्राथमिकताक अछि। रचनाक दीर्घकालीन अर्थ पुनर्पाठ, आलोचना आ बदलैत सामाजिक अनुभवक बीच विकसित होइत अछि; 'समयक मूल्यांकन' एहि सक्रिय प्रक्रियासँ जुड़ल अछि।

डिजिटल माध्यमसम्बन्धी विमर्श एहि चर्चाकेँ नव पाठकीय परिवेश धरि

लऽ जाइत अछि। मोबाइल आ सामाजिक माध्यम रचनाक पहुँच बढ़ा सकैत अछि, संगहि अधूरा पाठ, तात्कालिक प्रतिक्रिया आ क्षणिक दृश्यताक दबाव सेहो उत्पन्न कऽ सकैत अछि। प्रश्न माध्यमक उत्तरदायी उपयोगक अछि। संक्षिप्त प्रस्तुति पाठककेँ मूल पोथी दिस मोड़ए, प्रश्न जगाबए आ गम्भीर संवादक अवसर बनाबए, तँ ओकर साहित्यिक उपयोगिता अछि। बदलैत माध्यमक एहि प्रश्नसँ आगू खण्ड सृजनक अनुशासन आ नियमिततापर सेहो विचार करैत अछि। अध्ययन, अवलोकन, पुनर्लेखन आ आवश्यक विरामकेँ सेहो एहि नियमिततामे स्थान देल गेल अछि; निरन्तरताक अर्थ केवल प्रतिदिन लिखल पृष्ठक संख्या नहि।

एहि समूचा विमर्शक रचना-पद्धति ध्यान देबाक योग्य अछि। ‘पयस्विनी’मे संकलित श्री जगदीश प्रसाद मण्डलक कथनसभ अधिकांश विचार-बिन्दुक प्रमुख आधार अछि। किछु विचार-बिन्दु आ जीवन-सन्दर्भकेँ स्पष्ट करबाक लेल गजेन्द्र ठाकुर लिखित ‘जगदीश प्रसाद मण्डल : एकटा बायोग्राफी’क सेहो सहायक स्रोतक रूपमे उपयोग भेल अछि। चुनल कथन अथवा जीवन-सन्दर्भ विचारक प्रवेश-सूत्र बनैत अछि; ओकर बाद डॉ. उमेश मण्डल स्वतन्त्र प्रश्न, विश्लेषण आ समकालीन अर्थ-विस्तार विकसित करैत छथि। मूल स्रोत आ विकसित विवेचन परस्पर सम्बद्ध रहितो अपन-अपन बौद्धिक उत्तरदायित्व रखैत अछि।

‘विचार-बिन्दु’क रचनात्मक सम्भावना एहि सूत्रसँ विमर्श धरि बढ़बाक प्रक्रियामे अछि। एकरा उद्धरण-संग्रह वा मूल पाठक सरल पुनर्कथन धरि सीमित नहि कएल जा सकैत। लेखक एहि प्रयोग लेल ‘सूत्र-विमर्शात्मक लघुगद्य’ नाम प्रस्तावित करैत छथि। ई नामकरण विधागत सम्भावनाक संकेत अछि; ओकर सार्थकता स्रोतक प्रति उत्तरदायित्व, तर्कक स्पष्टता, संक्षिप्तताक अनुशासन आ पाठकीय संवादसँ परखल जाएत। छोट आकार पाठककेँ रुकि कऽ विचार करबाक अवसर दऽ सकैत अछि, जँ रचना अपन मूल प्रश्नक संग सम्बद्ध रहैत अर्थक तह खोलए।

श्री जगदीश प्रसाद मण्डलक जीवन एहि वैचारिक यात्राक एक प्रासंगिक जीवन-सन्दर्भ अछि। दुनू खण्डमे प्रस्तुत खेती, श्रम, सामाजिक संघर्ष आ सृजनक प्रसंग विचार आ कर्मक सम्बन्ध बुझबाक अवसर दैत अछि। हुनकर

जीवन-सन्दर्भक उपयोग सम्पूर्ण जीवनी प्रस्तुत करबाक लेल नहि, स्वनिर्माणक व्यावहारिक पृष्ठभूमि स्पष्ट करबाक लेल भेल अछि। एहि कारण स्रोतक सम्मानक संग ओकरा प्रश्न आ पुनर्परीक्षणक लेल खुलल राखब कृतिक घोषित पद्धतिक अनुकूल अछि।

जीवन-सन्दर्भक ई उपस्थिति कृतिक वैचारिक धरातलकेँ अमूर्त नहि रहए दैत। दुनू खण्डक स्थानीय आधार सेहो एहि दृष्टिसँ उल्लेखनीय अछि। मिथिलाक खेत, गाम, लोकगीत, जातिगत सम्बन्ध आ भाषा एतए ठोस जीवनानुभवक भूमि अछि। एहि अनुभवक गम्भीर विवेचनसँ श्रम, ज्ञान, न्याय, स्वतन्त्रता आ मानवीय गरिमाक व्यापक प्रश्न खुलैत अछि। स्थानीयताक अर्थ एतए अपन समाजकेँ गहराइसँ बुझैत व्यापक मनुष्यता धरि पहुँचेबाक सम्भावना अछि। मैथिली जटिल सामाजिक प्रश्न आ वैचारिक संवादक समर्थ भाषा रूपमे एहि प्रक्रियामे सक्रिय होइत अछि।

'स्वनिर्मित जीवन'क मूल आग्रह प्राप्त संसारकेँ विवेकपूर्ण कर्ममे रूपान्तरित करबाक अछि। समाज मनुक्खक चेतनाकेँ आकार दैत अछि; मनुक्ख प्रश्न, निर्णय आ सामूहिक प्रयत्नसँ समाजकेँ प्रभावित करैत अछि। समाजक भीतर अर्जित एहि जीवन-बोधसँ जन्मल सृजन पाठकक जीवनमे प्रवेश कऽ नव संवादक सम्भावना खोलैत अछि। स्वनिर्माण तखन कोनो अन्तिम उपलब्धि नहि, सीखब, आत्मपरीक्षण करब आ उत्तरदायी कर्ममे सक्रिय रहबाक निरन्तर प्रक्रिया बनैत अछि। 'समाजक भीतर मनुक्ख' आ 'सृजनक भीतर समाज' एहि प्रक्रियाक दू परस्पर सम्बद्ध धरातल अछि। दुनूकेँ एक संग पढ़ब जीवन आ साहित्यक सम्बन्धकेँ अधिक सजग आ मानवीय दृष्टिसँ बुझबाक अवसर दैत अछि।

- डॉ. राम अशीष सिंह

पूर्व प्रधानाचार्य,

एच.पी.एस. कॉलेज, निर्मली,

बी.एन. मण्डल विश्वविद्यालय,

मधेपुरा (बिहार)

मो.: +91 99316 63744

दुनू खण्डक वैचारिक सेतु : जीवनसँ सृजन धरि

✳

'स्वनिर्मित जीवन'केँ दू खण्डमे प्रस्तुत करब केवल विस्तृत सामग्रीकेँ बाँटबाक सुविधा नहि अछि। पोथीक विचार-यात्रा सोभाविक रूपसँ दू अलग, मुदा परस्पर जुड़ल दिशामे विकसित होइत अछि; खण्ड-विभाजन ओही वैचारिक संरचनाक परिणाम अछि। पहिल खण्ड मनुक्खक सामाजिक निर्माणकेँ देखैत अछि; दोसर खण्ड मनुक्खक रचनात्मक कर्ममे समाजक उपस्थिति खोजैत अछि। पहिल खण्डक केन्द्रमे प्रश्न अछि जे समाज मनुक्खकेँ केना बनबैए आ दोसर खण्ड पुछैत अछि जे समाजक भीतर बनल मनुक्ख अपन सृजनक माध्यमे समाजकेँ कोन दिशा दैत अछि। अही कारण दुनू खण्ड अलग रहितो एक्के यात्राक दू परस्पर जुड़ल पड़ाव छी।

पहिल खण्डक उपशीर्षक 'समाजक भीतर मनुक्ख' अछि। मनुक्ख जखन जन्म लैत अछि, तखन ओकरा भाषा, परिवार, संस्कृति, जाति, लिंग, धर्म, क्षेत्र आ आर्थिक स्थितिक पहिनेसँ बनल संसार भेटैत अछि। समाज ओकरा परिचय, सम्बन्ध, मूल्य आ बेवहारक प्रारम्भिक आधार दैत अछि। मुदा ओही समाजमे असमानता, अन्धविश्वास, वर्चस्व, अवसरक अभाव आ मनगढ़न्त नैतिकताक अनेक रूप सेहो रहैत अछि। जँ मनुक्ख ऐ सभकेँ बिना प्रश्न स्वीकार करैत रहए, तँ ओ समाजक बनौल सीमाक भीतर बन्न भS सकैत अछि। जँ ओ प्रश्न करैत, अनुभवसँ सीखैत आ अपन बेवहारक परीक्षण करैत अछि, तँ अपन जीवनक निर्माणमे सक्रिय भूमिका निभबए लगैत अछि।

पहिल खण्डक यात्रा अही सक्रिय चेतनाक निर्माणसँ आरम्भ होइत अछि। आत्मबल, जीवनक ओझरी, सुविधा आ दायित्वक द्वंद्व, अहंकार तथा आत्मपरीक्षणसँ शुरू भेल ई विचार-यात्रा संस्कृति, लोकस्मृति, महिला-अनुभव, परम्परा, आधुनिकता, जाति, क्षेत्र, वर्चस्व आ सामाजिक समाधान धरि पहुँचैत अछि। अन्तमे जमीन, पानि, भाषा, स्वतंत्रता, मातृभूमि आ मैथिलीक प्रति

आत्मविश्वासक प्रश्न सामने अबैत अछि। ई क्रम पाठककेँ पहिने अपन भीतर देखबैत अछि, पछाइत समाजक संरचना चिन्हबैत अछि आ अन्ततः अपन भाषा तथा सामाजिक जीवनक प्रति जिम्मेदारीक बोध करबैत अछि।

खण्डक अन्तिम आह्वान मैथिलीक प्रति हीनभाव छोड़ि ओकर सामर्थ्य चिन्हबाक अछि। अही ठामसँ दोसर खण्डक आरम्भिक प्रश्न सोभाविक रूपसँ उठैत अछि, हम केकर रचनाकार छी? जखन बेकती अपन भाषा आ सामाजिक सामर्थ्य चिन्हि लैत अछि, तखन ऐगला प्रश्न ई होइत अछि जे ओइ सामर्थ्यक उपयोग केकरा लेल करत। भाषा केवल गौरवक विषय बनत कि समाजक उपेक्षित जीवनकेँ अभिव्यक्ति देबाक माध्यम? लेखन प्रतिष्ठाक साधन बनत आकि मानवीय चेतनाक विस्तार? 'सृजनक भीतर समाज' अही प्रश्नक अनेक पक्ष खोलैत अछि।

दू खण्डक बीचक वास्तविक सेतु मनुक्खक चेतना अछि। समाज चेतनाकेँ आकार दैत अछि। चेतना प्रश्न उत्पन्न करैत अछि। प्रश्न आत्मपरीक्षण दिस लऽ जाइत अछि। आत्मपरीक्षण विचार आ कर्मकेँ नव दिशा दैत अछि। आ जखन जीवनसँ अर्जित बोध रचनात्मक अभिव्यक्ति ग्रहण करैत अछि, तखन साहित्य फेर समाज धरि पहुँचैत अछि। ऐ तरहेँ समाजसँ मनुक्ख, मनुक्खसँ सृजन आ सृजनसँ पुनः समाज धरि एकटा निरन्तर सम्बन्ध बनैत अछि। 'स्वनिर्मित जीवन'क दू-खण्डीय योजना अही सम्बन्धपर आधारित अछि।

'स्वनिर्मित जीवन' शीर्षकक अर्थ 'पयस्विनी'क विचार-सूत्र आ जगदीश प्रसाद मण्डलजीक जीवन, दुनूसँ विशेष गहराइ पबैत अछि। 'पयस्विनी'मे ओ अपन निर्माण अपने करबाक आवश्यकतापर बल दइ छैथ। ऐ कथनक मूल आशय ई अछि जे बाहरसँ भेटल नैतिक उपदेश, परम्परागत प्रतिष्ठा वा दोसराक विचार मात्र मनुक्खकेँ विवेकशील नहि बना सकैत। ओकरा अपन अनुभव, निर्णय आ बेवहारक माध्यमे जीवनक दिशा निर्मित करए पड़ैत अछि।

मुदा स्वनिर्माणकेँ असगर बेकतीक आत्मसफलताक कथा बुझब भूल हएत। मण्डलजीक जीवन परिवार, गाम, खेती, सामाजिक संघर्ष, सहयोग आ सामूहिक अनुभवक बीच बनल। हुनकर जीवन-दृष्टि धरती आ लोकजीवनसँ जुड़ल रहल। किसानी हुनका लेल केवल खेत जोतब वा अन्न उपजाएब नहि रहल; ओकरा भीतर प्रकृति, श्रम, उत्पादन, परिवार, विज्ञान आ सामाजिक सम्बन्धक परस्पर निर्भरता देखबाक अवसर सेहो छल।

नव बीआ, उपज बढ़ेबाक उपाय, कृषि-प्रशिक्षण आ किसानक सहभागिता सन अनुभव हुनका परिवर्तनक बेवहारिक स्वरूपसँ परिचित करबैत रहल। खेतमे परिवर्तन केवल साधन बदललासँ नहि अबैत; सोच, सहयोग, अनुभव आ सहभागिता सेहो बदलए पड़ैत अछि। कृषि जीवनसँ भेटल ई बोध पछाइत हुनकर सामाजिक आ साहित्यिक दृष्टिमे सेहो देखाइत अछि।

गामक समाजमे बटाइदारी, सूदखोरी आ जमीनक मालिकाना सम्बन्धमे रहल विषमताक विरुद्ध संघर्ष हुनकर चेतनाकेँ दोसर आयाम देलक। एतए अन्याय कोनो पोथीमे पढ़ल अमूर्त सिद्धान्त नहि छल; ओ खेत, कर्ज, श्रम, भूख आ सामाजिक सम्बन्धमे प्रत्यक्ष उपस्थित छल। ऐ अनुभवसँ समस्या स्वीकार करब, ओकर जड़ि धरि पहुँचल आ सामूहिक जागरण तथा सहभागिताक माध्यमे परिवर्तनक बाट खोजब हुनकर जीवन-दृष्टिक हिस्सा बनल।

मण्डलजीक जीवनमे प्रतिरोध आ निर्माण एक-दोसरसँ अलग नहि रहल। अन्यायपूर्ण बेवस्थाक विरोधक संग खेतीक विकास, उत्पादन-वृद्धि आ लोककेँ नव कृषि-ज्ञानसँ जोड़बाक प्रयास सेहो चलैत रहल। केवल पुरानकेँ हटाएब परिवर्तन नहि; ओकर स्थानपर अधिक न्यायपूर्ण आ उपयोगी आधार बनाएब सेहो आवश्यक अछि। अही अनुभवसँ हुनकर विचारमे संघर्षक अर्थ नकार मात्र नहि, बल्कि निर्माणक जिम्मेदारी सेहो बनैत अछि।

जीवनक ऐ चरणमे हुनकर प्रमुख कर्मभूमि खेत आ समाज रहल। साहित्य पछाइत व्यवस्थित रूपमे सामने आएल, मुदा ओ कोनो अचानक मोड़ नहि छल। पढ़बाक रुचि आ लिखबाक प्रारम्भिक प्रवृत्तिक संग सामाजिक अनुभव लगातार जमा होइत रहल। संघर्षक बीच ई बोध गहींर भेल जे बाहरी बेवस्था बदललासँ काज पूर्ण नहि होइत; समाजक मानसिकता, मूल्य-बोध आ विचारधारामे परिवर्तनक खगता सेहो रहैत अछि। अही ठाम जीवनक प्रत्यक्ष अनुभव रचनात्मक कर्मक दिशा ग्रहण करैत अछि।

ऐ कारण जीवनसँ सृजन धरि यात्रा कोनो पलायन नहि। खेत, गाम आ सामाजिक संघर्ष छोड़ि साहित्यक अलग संसारमे प्रवेश नहि भेल; जीवनक ई सभ अनुभव कथा, उपन्यास, नाटक, कविता आ वैचारिक गद्यक सामग्री बनल। मण्डलजीक कथन जे कथा हुनका नहि, जीवन हुनका पकड़ने अछि, ई सृजन-प्रक्रियाक महत्त्वपूर्ण संकेत दैत अछि। जीवनक घटना, सम्बन्ध, ओझरी आ

संघर्ष जखन चेतनामे गहींर प्रभाव उत्पन्न करैत अछि, तखन ओ रचनाक रूप माँगए लगैत अछि।

ऐ अर्थमे मण्डलजीक जीवनकेँ स्वनिर्मित कहल जा सकैत अछि, कारण ओ परिस्थितिकेँ केवल भोगलैन नहि; ओकरा बुझलैन, चुनौती देलैन आ अपन कर्मक दिशा अपने चुनलैन। मुदा ई स्वनिर्माण 'हम असगरे सभ किछु केलौं'क दम्भपर आधारित नहि अछि। परिवार, गामक लोक, सहकर्मी, पाठक, सम्पादक, प्रकाशन-सहयोगी आ साहित्यिक संवाद हुनकर यात्राकेँ निरन्तर समृद्ध करैत रहल। स्वनिर्माणक अर्थ सामूहिक योगदानकेँ नकारब नहि, बल्कि प्राप्त परिस्थिति, अनुभव आ सहयोगकेँ दायित्वपूर्ण कर्ममे रूपान्तरित करब अछि।

ऐ स्वनिर्माणक एक महत्त्वपूर्ण आधार स्वतंत्र निर्णयक सामर्थ्य अछि। मण्डलजी नव रचनाकारकेँ लोभसँ बँचैत स्वतंत्र जीवनक गठन करबाक बात कहै छैथ। आर्थिक, राजनीतिक वा साहित्यिक लाभक आकांक्षा जखन निर्णयपर अधिकार जमा लैत अछि, तखन कलमक स्वतंत्रता कमजोर होइत अछि। पद, पुरस्कार, मंच वा प्रभाव रचनात्मक यात्राक सोभाविक उपलब्धि भऽ सकैत अछि; समस्या ओइ उपलब्धिमे नहि, ओकरा सृजनक लक्ष्य बना लेबएमे अछि। तहिना पुरस्कार नहि लेब वा ओकरासँ दूरी बना कऽ रहब मात्रसँ कियो स्वतन्त्र रचनाकार सिद्ध नहि भऽ जाइत अछि, आ पुरस्कार स्वीकार करबो स्वतन्त्रताक अभावक प्रमाण नहि। मूल प्रश्न ई अछि जे लेखकक निर्णयकेँ की संचालित करैत अछि। जँ सम्मान, लाभ वा प्रतिष्ठाक आकांक्षा ओकर दृष्टि आ अभिव्यक्तिकेँ नियंत्रित करए लगैत अछि, तँ ओ ओइ सत्यसँ दूर जा सकैत अछि, जेकरा निर्भयतासँ कहब ओकर सामाजिक दायित्व अछि।

एकर अर्थ सम्मान वा स्वीकृतिक विरोध नहि। प्रश्न प्राथमिकताक अछि। रचनाक वास्तविक मूल्य केवल पुरस्कार, प्रचार वा प्रसिद्धिसँ तय नहि होइत। ओ केतेक लोक धरि अर्थपूर्ण रूपसँ पहुँचल, पाठककेँ जीवन नव नजैरसँ देखबाक प्रेरणा देलक कि नहि, आ समाजक दबाएल अनुभवकेँ स्वर दऽ सकल कि नहि, ई प्रश्न ओकर सामाजिक मूल्यक गहींरगर कसौटी बनैत अछि।

अही ठाम 'सृजनक भीतर समाज'क भूमि तैयार होइत अछि। समाजक भीतर विकसित चेतना जखन भाषा, साहित्य आ रचनात्मक कर्ममे उतरैत अछि, तखन रचनाकारक दृष्टि, पक्षधरता, स्वतन्त्रता, पाठकीय सम्बन्ध, साहित्यिक

बेवस्था, बदलैत माध्यम आ सृजनक अनुशासनक प्रश्न सामने अबैत अछि।

ऐ प्रश्नसभक विस्तृत विवेचन आगूक प्रवेश-लेख आ विचार-बिन्दुसभमे होएत। एतए मूल सम्बन्ध एतबे अछि जे जीवनसँ अर्जित अनुभव सृजनक आधार बनैत अछि, जखन कि सृजन ओइ अनुभवकेँ सामाजिक स्मृति, प्रश्न आ संवादक रूपमे पुनः जीवन धरि पहुँचाबैत अछि।

'सृजनक भीतर समाज' लेखकक जीवन आ रचनाक बीच कृत्रिम दीवाल स्वीकार नहि करैत। कागतपर समानता लिखैत अपन बेवहारमे भेदभाव करब, प्रेमक साहित्य रचैत जीवनमे घृणा पसारब अथवा लोकतन्त्रक बात करैत साहित्यिक मंचपर मनमानी करब रचनाकारक विश्वसनीयताकेँ कमजोर करैत अछि। साहित्यकारक परीक्षा ओकर रचनामे अवश्य होइत अछि, मुदा ओकर सामाजिक बेवहार ई सेहो बतबैत अछि जे रचनामे व्यक्त विचार जीवनमे केतेक उतैर पबैत अछि।

मण्डलजीक जीवनपर दृष्टि देबाक उद्देश्य व्यक्तिपूजा नहि। 'पयस्विनी' स्वयं अन्धस्वीकारक विरोध करैत अछि। हुनकर जीवन एतए ऐ कारण प्रासंगिक अछि जे ओ विचारक बेवहारिक निर्माणकेँ देखबाक अवसर दैत अछि। खेती, सामाजिक संघर्ष, सामूहिक प्रयास, साहित्यिक श्रम, आलोचना, असहमति आ आत्मनिर्णयक बीच एकटा मनुक्ख अपन बाट केना बनबैत अछि, हुनकर जीवन ऐ प्रश्नक ठोस सन्दर्भ प्रस्तुत करैत अछि। पाठक हुनकर प्रत्येक विचारसँ सहमत हो, ई आवश्यक नहि; वैचारिक संवादक लेल असहमति सेहो महत्त्वपूर्ण अछि।

'स्वनिर्मित जीवन' मण्डलजीक जीवनी नहि। ई 'पयस्विनी'क विचार-सूत्र आ जीवन-सन्दर्भसँ विकसित स्वतंत्र वैचारिक कृति अछि। तथापि मूल लेखकक जीवन-दृष्टिकेँ पूर्णतः बाहर राखलासँ शीर्षकक एक महत्त्वपूर्ण अर्थ स्पष्ट नहि भऽ पाउत। जिनकर कथनसँ स्वनिर्माणक प्रश्न उठैत अछि, हुनकर जीवनमे निर्णय, श्रम, संघर्ष आ सृजनक सम्बन्ध केना विकसित भेल, से देखब सूत्र आ जीवनक बीचक दूरीकेँ बुझबाक अवसर दैत अछि। एतए जीवनकेँ रचनाक प्रमाणपत्र नहि मानल गेल अछि; ओ रचनाक सामाजिक पृष्ठभूमि आ विचारक बेवहारिक आधारकेँ बुझबाक एक सन्दर्भ मात्र अछि।

दुनू खण्डक क्रम मिलि एकटा पूर्ण वैचारिक संरचना बनबैत अछि। पहिल खण्ड समाजक भीतर निर्मित होइत मनुक्खक चेतनाकेँ देखैत अछि, जखन कि

दोसर खण्ड ओही चेतनाक रचनात्मक अभिव्यक्तिमे समाजक उपस्थिति खोजैत अछि। पहिल खण्डक अन्त भाषिक आत्मविश्वासपर होइत अछि आ लगले दोसर खण्डक आरम्भ रचनाकारक सामाजिक पक्षधरतासँ। ऐ क्रममे पहिल खण्ड मूलतः पुछैत अछि, हम केना बनै छी? दोसर खण्ड एकर आगूक प्रश्न उठबैत अछि, बनल चेतनाक संग हम की करै छी? अर्थात् विचार जखन जीवन आ सृजनमे उतरैत अछि, तखन ओकर वास्तविक बेवहारिक रूप की होइत अछि?

ऐ यात्राकेँ एक सूत्रमे बुझल जा सकैत अछि। मनुक्ख समाजसँ अनुभव पबैत अछि। अनुभव प्रश्न जगबैत अछि। प्रश्न विवेककेँ सक्रिय करैत अछि। विवेक जीवनक दिशा चुनबामे सहायता करैत अछि। जीवनक संघर्ष विचार बनैत अछि। विचार रचनामे उतरैत अछि। रचना पाठक धरि पहुँच संवाद उत्पन्न करैत अछि। संवाद समाजक चेतनाकेँ बदलबाक सम्भावना बनबैत अछि। बदलैत समाज फेर नव अनुभव आ नव प्रश्नक जन्म दैत अछि। अही निरन्तर गतिमे जीवन आ साहित्य एक-दोसरकेँ प्रभावित करैत रहैत अछि।

'पहिल खण्डसँ दोसर खण्ड धरि' यात्रा समाजक चर्चासँ साहित्यक चर्चामे विषय-परिवर्तन मात्र नहि। ई बोधसँ जिम्मेदारी धरि बढ़ब अछि। पहिल खण्ड पाठककेँ अपनाकेँ आ अपन समाजकेँ देखबाक दृष्टि दैत अछि। दोसर खण्ड पुछैत अछि जे जे किछु देखल, बुझल आ अनुभव कएल गेल, ओकरा विचार, भाषा, बेवहार आ सृजनमे केना उतारल जाए।

अही सेतुकेँ पार करैत पाठक 'सृजनक भीतर समाज'मे प्रवेश करैत अछि। आब प्रश्न केवल ई नहि रहैत जे समाज हमरा केना बनबैत अछि। प्रश्न ईहो अछि जे हम अपन विचार, भाषा, साहित्य आ कर्मसँ कोन समाजक निर्माणमे सहभागी भऽ रहल छी। 'स्वनिर्मित जीवन'क दोसर खण्ड अही रचनात्मक आ सामाजिक जिम्मेदारीक पड़ताल छी।

प्रवेश : सृजनक भीतर समाज

✺

सृजन पहिल नजैरमे रचनाकारक निजी कर्म बुझाइत अछि। लेखक असगर कागतक सोझाँ बैसैत अछि, अपन अनुभवकेँ शब्द दैत अछि आ रचनाकेँ आकार दैत अछि। मुदा ओ जे भाषा लिखैत अछि, से समाजसँ भेटल रहैत अछि। ओकर अनुभव सम्बन्ध, श्रम, संघर्ष, स्मृति आ अपन समयक घटनासँ बनल रहैत अछि। ओ जे विषय चुनैत अछि, जे प्रश्न उठबैत अछि आ जे जीवन अनदेखल छोड़ि दैत अछि, सभक सामाजिक अर्थ होइत अछि। अही कारण सृजनक भीतर रचनाकार असगरे नहि, ओकर समाजो उपस्थित रहैत अछि।

'स्वनिर्मित जीवन'क दोसर खण्ड 'सृजनक भीतर समाज' ऐ उपस्थितिक अनेक रूपक पड़ताल करैत अछि। साहित्य समाजकेँ केवल विषयक रूपमे ग्रहण नहि करैत; समाज ओकर भाषा, दृष्टि, पात्र, मूल्य, पाठक आ अभिव्यक्तिक पद्धतिमे सेहो उपस्थित रहैत अछि। कोनो रचना गामक कथा हो वा शहरक, प्रेमक कविता हो वा सामाजिक संघर्षक उपन्यास, ओकरा भीतर मनुक्खक बीचक सम्बन्ध आ रचनाकारक जीवन-दृष्टि प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूपसँ व्यक्त होइत अछि।

दोसर खण्डक आरम्भ 'हम केकर रचनाकार छी?' प्रश्नसँ होइत अछि। ई केवल लेखकक निजी परिचयक प्रश्न नहि; एकर उत्तर सृजनक सामाजिक दिशा स्पष्ट करैत अछि। रचनाकार समाजक प्रभावशाली वर्गक सुविधा, भाषा आ दृष्टिकेँ केन्द्र मानैत अछि कि साधारण लोकक श्रम, दुःख, आशा आ संघर्षकेँ सेहो साहित्यिक महत्त्व दैत अछि? ओ सत्ता आ प्रतिष्ठाक निकट रहि अपन स्थान सुरक्षित करए चाहैत अछि कि दबल-कुचलल लोकक जीवन, अनुभव आ अनकहल सत्यकेँ साहित्यमे उचित स्थान दैत अछि? ओकर लेखन केकर जीवनकेँ दृश्य बनबैत अछि आ केकरा अदृश्य छोड़ि दैत अछि? मण्डलजीक जीवन आ सृजन-दृष्टिमे साधारण जन, श्रमशील समाज आ उपेक्षित जीवनक

प्रति ई पक्षधरता केवल विषयक चयन नहि, बल्कि दीर्घ सामाजिक अनुभवसँ विकसित दृष्टि अछि। ऐ कारण ई प्रश्न सृजनक सामाजिक चरित्रकेँ मात्र सामने नहि अनैत, बल्कि ई सेहो स्पष्ट करैत अछि जे रचनाकार अपन साहित्यिक चेतनाकेँ समाजक कोन हिस्साक जीवनसँ जोड़ैत अछि।

'केकर रचनाकार' हेबाक प्रश्नक अर्थ कोनो एक सामाजिक वर्गक पक्षमे घोषणा करब मात्र नहि। साहित्यक पक्षधरता ओकर समूचा रचना-विधानमे देखाइत अछि। पात्रकेँ केहेन मानवीय गहराइ देल गेल, ओकर अनुभवकेँ केतेक सम्मान भेटल, समस्या आ घटनाक जड़ि धरि पहुँचेबाक प्रयास भेल कि नहि आ रचना पाठकपर पूर्वनिर्धारित निष्कर्ष थोपबाक बदला सोचबाक अवसर दैत अछि कि नहि, ई सभ ओकर पक्षधरता स्पष्ट करैत अछि। कलात्मक परिपक्वता आ सामाजिक दायित्व एक-दोसराक विरोधी नहि। मानवीय दृष्टि रचनाकेँ सार्थकता दैत अछि आ सुदृढ़ रचना-विधान ओइ दृष्टिकेँ प्रभावी तथा दीर्घजीवी बनबैत अछि।

दोसर खण्डक पहिल दस विचार-बिन्दु रचनाकारक सामाजिक दृष्टि, लोकजीवन आ साहित्यक आपसी सम्बन्धकेँ स्पष्ट करैत अछि। संस्कारक प्राण लोक-कण्ठमे अछि, कारण संस्कृति केवल शास्त्रक लिखित विधानसँ नहि बँचैत; लोकक स्मृति, गीत, बोली आ बेवहार ओकरा जीवन दैत अछि। धरतीसँ जन्मल साहित्य अपन क्षेत्रक माटि-पानिक सुगन्ध रखितो अनुवाद आ पाठकीय संवादक माध्यमे दुनियाँक सम्पैत बनि सकैत अछि। स्थानीयता साहित्यक सीमा नहि; अपन जीवनक गहींर पहचान व्यापक मनुष्यता धरि पहुँचेबाक बाट बनि सकैत अछि।

ऐ क्रममे साहित्यिक मूल्यांकनमे रक्त-सम्बन्धक बदला पाठ-सम्बन्धक महत्त्व सामने अबैत अछि। साहित्यकारक मूल्यांकन कुल, जाति, क्षेत्र, परिचय वा निजी निकटताक आधारपर नहि, रचनाक आधारपर हेबाक चाही। रचना जँ समाजक दर्पण बनए, तँ दर्पण साफ रहब आवश्यक अछि। पक्षपात, प्रिय-अप्रियक भेद आ पूर्वाग्रह रचनाकारक नजैरकेँ विकृत कऽ दैत अछि। समदृष्टिक अर्थ भावनाहीनता नहि; प्रत्येक मनुक्खक जीवनकेँ समान मानवीय गरिमासँ देखबाक साहित्यिक अनुशासन अछि।

मण्डलजीक ई कथन जे कथा हुनका नहि, जीवन हुनका पकड़ने छैन,

हुनकर सृजन-प्रक्रियाक महत्त्वपूर्ण संकेत दैत अछि। रचनाकार कथा खोजबाक लेल जीवनसँ दूर नहि जाइत; जीवन अपने ओकरा कथा दिस लऽ जाइत अछि। घटना, सम्बन्ध, अन्याय, संघर्ष आ करुणाक अनुभव जखन मनपर गहींर प्रभाव छोड़ैत अछि, तखन ओ अभिव्यक्ति माँगए लगैत अछि। मनक भीतरक अनुभव जखन पूरा-पूर व्यक्त नहि भऽ पबैत अछि, तखन झुझुआहट पैदा होइत अछि। ई झुझुआहट लेखकक रचनात्मक बेचैनी अछि, जे ओकरा उचित शब्द, रूप आ दृष्टिक खोजमे निरन्तर सक्रिय रखैत अछि।

शब्द ऐठाम केवल भाषाक बाहरी रूप नहि रहैत। प्रत्येक शब्द अपना संग इतिहास, सामाजिक अनुभव आ अर्थक अनेक तह लऽ कऽ अबैत अछि। रचनाकार जखन किसान, मजदूर, महिला, भूख, संघर्ष, प्रेम, मातृभूमि वा स्वतंत्रता लिखैत अछि, तखन ओ केवल शब्द नहि लिखैत; ओइ शब्दसँ जुड़ल जीवनक नक्शा सेहो बनबैत अछि। शब्दक चयन अही कारण साहित्यिक शिल्पक संग सामाजिक जिम्मेदारीक प्रश्न सेहो छी।

एगारहमसँ बीसम विचार-बिन्दु सत्ताक केन्द्र आ हाशियाक आवाजक बीच साहित्यकारक स्थान खोजैत अछि। साहित्यिक संसारमे सेहो केन्द्र आ हाशिया बनैत अछि। किछु बेकतीकेँ मंच, संस्था, प्रकाशन आ समीक्षाक अवसर सहज भेटैत अछि, जखन कि अनेक समर्थ आवाज पहुँचक अभावमे कात रहि जाइत अछि। 'सृजनक भीतर समाज' ई पड़ताल करैत अछि जे सामाजिक वर्चस्व साहित्यिक संरचनामे केना प्रवेश करैत अछि आ रचनाकार अपन स्वतंत्रता तथा वैचारिक इमानदारीकेँ केना बँचबैत अछि।

मण्डलजी अपन रचनाक आधार समाजक दबल-कुचलल लोककेँ मानै छैथ। ई दृष्टि हुनकर साहित्यकेँ दयाभावक दिशामे नहि लऽ जाइत। हाशियाक मनुक्ख हुनकर रचनामे अपन श्रम, बुधि, अनुभव आ संघर्षक संग उपस्थित होइत अछि। ओ समाजक परिवर्तनक निष्क्रिय प्रतीक्षाकर्ता नहि, सक्रिय वाहक अछि। साहित्य ओकर जीवनकेँ केवल दर्ज नहि करैत; ओकर मानवीय सामर्थ्य आ सामाजिक भूमिकाकेँ सेहो चिन्हैत अछि।

मुख्यधारासँ कतियाएल हेबाक प्रश्नक उत्तरमे मण्डलजी अपनाकेँ कतियाएल नहि, नव धाराकेँ गति देनिहार बुझै छैथ। ई दृष्टि साहित्यिक स्वीकृतिक प्रचलित धारणाकेँ चुनौती दैत अछि। केन्द्रक मान्यता नहि भेटब

सदिखन रचनात्मक कमजोरीक प्रमाण नहि। बहुत बेर नव विचार आरम्भमे छोट धाराक रूपमे देखाइत अछि। जँ ओकरा भीतर जीवन-सत्य, रचनात्मक शक्ति आ सामाजिक सार्थकता अछि, तँ ओ रसे-रसे व्यापक साहित्यिक धारा बनि सकैत अछि।

स्वतंत्र कलमक आधार स्वतंत्र जीवन अछि। लोभ, पद, पुरस्कार, सत्ता-समीपता आ निजी लाभक दबाव लेखकक निर्णयकेँ प्रभावित कऽ सकैत अछि। जखन बाहरी स्वीकृति रचनाक मुख्य लक्ष्य बनि जाइत अछि, तखन लेखक कठिन प्रश्नसँ बचए लगैत अछि। लोभसँ मुक्त जीवन लेखककेँ ऐ अर्थमे स्वतंत्र बनबैत अछि जे ओ अपन अनुभव, विवेक आ मानवीय दायित्वक आधारपर लिखि सकए।

सम्मानपत्र, प्रचार आ पुरस्कार साहित्यिक यात्राक हिस्सा भऽ सकैत अछि, मुदा ओकर अन्तिम उद्देश्य नहि। सम्मान रचनाकारकेँ प्रसन्नता आ सामाजिक स्वीकृति दैत अछि, तथापि ओकर दायित्व समाप्त नहि करैत। प्रचार रचनाकेँ दृश्य बना सकैत अछि, मुदा जीवन-दिशा देबाक क्षमता ओकर विषय, दृष्टि आ कलात्मक शक्तिसँ बनैत अछि। वर्तमानक कर्म भविष्यक साहित्य बनबैत अछि, आ रचनाक दीर्घकालीन मूल्य समय, पाठक तथा बदलैत समाजक अनुभवक बीच निर्धारित होइत अछि।

संघर्ष जखन साहित्यक रूप ग्रहण करैत अछि, तखन ओ केवल टकरावक अभिलेख नहि रहैत। रचना संघर्षक कारण, मानवीय पीड़ा, सम्बन्धक जटिलता आ परिवर्तनक सम्भावना खोलैत अछि। सामाजिक लड़ाइ जँ घृणा धरि सीमित रहए, तँ नव विभाजन जन्म दऽ सकैत अछि। साहित्य संघर्षकेँ न्याय, प्रेम आ मानवीय सम्मानक व्यापक सन्दर्भ दऽ सकैत अछि। अही अर्थमे सृजन प्रतिरोधक संग पुनर्निर्माणक सम्भावना सेहो जगबैत अछि।

एकैसमसँ तीसम विचार-बिन्दु लेखकसँ पाठक, रचनासँ ओकर पहुँच आ सृजनसँ साहित्यिक बेवस्था धरि विचार-यात्राकेँ आगू बढ़बैत अछि। ‘लोक पढ़ैत अछि, मुदा बजैत किए नहि?’ प्रश्न पाठकीय निष्क्रियताकेँ सामने अनैत अछि। पढ़ब केवल शब्द ग्रहण करब नहि; रचनासँ संवाद करब सेहो अछि। पाठक जखन प्रश्न करैत, अपन मत व्यक्त करैत, असहमति रखैत आ रचनाक अर्थपर विचार-विनिमय करैत अछि, तखन साहित्यिक जीवन अधिक सक्रिय

बनैत अछि। अपन प्रतिक्रिया व्यक्त नहि करनिहार पाठक सेहो साहित्यक महत्त्वपूर्ण हिस्सा अछि, मुदा संवादशील पाठक रचनाक अर्थ-विस्तार आ साहित्यिक दिशाकेँ प्रभावित करबाक सक्रिय सामर्थ्य रखैत अछि।

लोक धरि नहि पहुँचल साहित्य अपन सामाजिक प्रभावमे सीमित रहि जाइत अछि। मुदा पहुँचक अर्थ केवल बिक्री, प्रचार वा सामाजिक माध्यमपर दृश्यता नहि। वास्तविक पहुँच तखन बनैत अछि, जखन रचना पाठकक अनुभवसँ सम्बन्ध स्थापित करैत अछि। प्रकाशन, वितरण, पुस्तकालय, गोष्ठी, अनुवाद, समीक्षा आ डिजिटल माध्यम ऐ सम्बन्धक बाट बना सकैत अछि। जँ ई साधन किछु गुट वा प्रभावशाली लोक धरि सीमित रहए, तँ समर्थ रचनाकार आ व्यापक पाठक-वर्गक बीच दूरी बनल रहैत अछि।

मैथिली साहित्यक लोकतन्त्रीकरणक प्रश्न अही ठाम उठैत अछि। लोकतन्त्रीकरणक अर्थ केवल अधिक लोकक लिखब नहि; विभिन्न वर्ग, क्षेत्र, लिंग आ सामाजिक अनुभवक आवाजकेँ साहित्यिक अवसर, मंच, मूल्यांकन आ पाठकीय पहुँच भेटब सेहो अछि। साहित्यिक संस्था जँ निजी प्रभाव, गुट वा सत्ता-समीपतासँ चलत, तँ नव प्रतिभा कात भऽ जाएत। मंच जखन अपन उत्तरदायित्व बिसैर निजी मनमानीक साधन बनैत अछि, तखन साहित्यिक मूल्यांकन आ संवाद दुनू कमजोर पड़ैत अछि।

मोबाइल आ डिजिटल माध्यम साहित्यक सामने नव सम्भावना आ नव संकट दुनू अनैत अछि। पोथी, पत्रिका आ गोष्ठीक संग आब विचार तुरन्त व्यापक लोक धरि पहुँच सकैत अछि। नव लेखक अपन रचना सीधे पाठकक सोझाँ राखि सकैत अछि। मुदा ई तेजी अधूरा पाठ, तात्कालिक प्रतिक्रिया, सतही प्रसिद्धि आ बिना जाँचल-परखल विचार व्यापक रूपसँ पसरबाक संकट सेहो उत्पन्न करैत अछि। साधन आधुनिक भेलासँ साहित्यिक विवेक अपने-आप आधुनिक नहि बनैत। माध्यमक सार्थकता ओकर जिम्मेदार उपयोगसँ तय होइत अछि।

प्रतिष्ठा बाहरी घोषणासँ स्थायी नहि बनैत। पुरस्कार, लोकार्पण, प्रशंसा आ प्रचार बेकतीकेँ क्षणिक दृश्यता दऽ सकैत अछि; रचनात्मक प्रतिष्ठा निरन्तर कर्म, पाठकीय विश्वास आ समयक परीक्षणसँ बनैत अछि। अवसर सदिखन बाहरसँ आबि दुआर नहि खटखटबैत। सजग दृष्टि सामान्य जीवनक भीतर विषय,

प्रश्न आ रचनात्मक सम्भावना चिन्हैत अछि। सृजनशील बेकती प्रतीक्षामे निष्क्रिय नहि रहैत; अध्ययन, अवलोकन आ नियमित अभ्याससँ अपन तैयारी करैत रहैत अछि।

एकतीसमसँ चालीसम विचार-बिन्दु भाषा आ सत्यसँ लऽ कऽ लोक, मिथिला, डिजिटल माध्यम, साहित्यकारक बेवहार, गुटबाजी आ संवाद धरि अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्नकेँ एकसंग सामने अनैत अछि। ऐ क्रममे विचार केवल रचनाधरि सीमित नहि रहैत; साहित्यिक जीवनक संस्कार आ आचरणक प्रश्न सेहो महत्त्वपूर्ण बनि जाइत अछि। लेखक अपन भाषापर केतेक भरोस करै छैथ, सत्यक प्रति केहेन जिम्मेदारी निमाहै छैथ, लोकजीवनकेँ कोन नजैरसँ देखै छैथ आ असहमतिसँ केना संवाद करै छैथ, ई सभ हुनकर रचनात्मक व्यक्तित्वक अभिन्न हिस्सा बनैत अछि।

भाषा अपने कमजोर नहि होइत; ओकरा प्रति भरोस कमजोर भऽ सकैत अछि। जखन लेखक अपन भाषामे आधुनिक जीवन, विज्ञान, समाज, विचार आ मानवीय जटिलताकेँ व्यक्त करबासँ हिचकैत अछि, तखन भाषाक नहि, आत्मविश्वासक सीमा सामने अबैत अछि। निरन्तर सृजन, अध्ययन, अनुवाद आ प्रयोगसँ भाषा अपन अभिव्यक्ति-सामर्थ्य विकसित करैत अछि। भाषाक सामर्थ्य ओकर उपयोगसँ बढ़ैत अछि, उपेक्षासँ नहि।

सत्यकेँ हाशियाक कहि कऽ ओकर मूल्य कम नहि कएल जा सकैत। बहुत बेर सत्यक स्वीकृति अही कारण विलम्बित रहैत अछि जे ओ स्थापित हित, प्रतिष्ठा वा सुविधा लेल असुविधाजनक होइत अछि। साहित्यक दायित्व ओइ दबाएल सत्यकेँ दृश्य बनब अछि। मुदा सत्यक प्रस्तुति तथ्य, संवेदना आ कलात्मक अनुशासनसँ होएब आवश्यक अछि। आरोप, उत्तेजक घोषणा वा अतिरंजनासँ रचनाक विश्वसनीयता कमजोर भऽ सकैत अछि।

अतीतक गौरव साहित्यकेँ स्मृति आ आधार दैत अछि, मुदा अपन समयक धड़कन सुनब सेहो ओतबे आवश्यक अछि। साहित्य जँ अतीतेमे अँटैक जाए, तँ वर्तमानक प्रश्न आ जीवनक बदलैत यथार्थसँ दूर भऽ सकैत अछि। लोकक भाषामे रचल साहित्य लोककेँ अपन अनुभव, संवेदना आ जीवनक पहचान दैत अछि तथा समाजक भीतर आपसी जुड़ावकेँ गहींर करैत अछि। मिथिला आ मैथिली कोनो एक वर्गक सम्पैत नहि; ओकर सृजन, विकास आ भविष्य

समाजक प्रत्येक हिस्साक सहभागिता आ जिम्मेदारीसँ जुड़ल अछि।

साहित्यकारक बेवहार ओकर घोषित मूल्यक बेवहारिक कसौटी बनैत अछि। जे लेखक समानताक बात लिखैत अछि, मुदा साहित्यिक गतिविधिमे पक्षपात करैत अछि; संवादक समर्थन करैत अछि, मुदा असहमत आवाज दबबैत अछि; अथवा प्रेमक रचना करैत अछि, मुदा निजी सम्बन्धमे घृणा पसारैत अछि, ऐसँ ओकर विचारक विश्वसनीयता कमजोर पड़ैत अछि। रचना आ जीवन पूर्णतः एक्के नहि भऽ सकैत, मुदा दुनूक बीच निरन्तर विरोध रहबो रचनाकारक नैतिक विश्वसनीयताकेँ प्रश्नक घेरामे अनैत अछि।

गुट साहित्यकेँ सीमित करैत अछि। आत्मीयता, विचार-साम्य आ सहयोग सोभाविक अछि; मुदा जखन समूह अपन लोकक कमजोर रचनाकेँ आगू बढ़बैत आ बाहरी समर्थ रचनाकेँ कात करैत अछि, तखन साहित्यिक मूल्यांकन विकृत होइत अछि। जँ उद्देश्य साहित्यक विस्तार हो, तँ मतभेद संवादमे परिणत भऽ सकैत अछि। विचारक खुल्लम-खुल्ला विनिमय लेखक आ पाठक दुनूकेँ अपन सीमा देखबैत अछि आ साहित्यकेँ गतिशील रखैत अछि।

एकतालीसमसँ पचासम विचार-बिन्दु सृजनक नियमितता, रचनात्मक अनुशासन आ साहित्यक दीर्घ सामाजिक भूमिकाक निष्कर्ष धरि पहुँचैत अछि। रचना खाली समयक खेल नहि, बल्कि जीवनक नियमित वृत्ति अछि। प्रेरणाक क्षण महत्त्वपूर्ण अवश्य अछि, मुदा केवल प्रेरणासँ दीर्घ साहित्यिक यात्रा सम्भव नहि। अध्ययन, अवलोकन, समय-संयम, नियमित लेखन, पुनर्विचार आ निरन्तर अभ्यास मिलि रचनाकारक तैयारी आ सृजनात्मक अनुशासन बनबैत अछि। मण्डलजीक विस्तृत आ निरन्तर सृजनक मूलमे ऐ नियमित श्रम, अध्ययन आ जीवनसँ जुड़ल सक्रियताकेँ स्पष्ट रूपसँ देखल जा सकैत अछि।

समाजसँ कटि साहित्य अपन वास्तविक भाँज नहि पकैड़ सकैत। रचनाकारकेँ समाजक गति दिस नजैर राखब आवश्यक अछि, कारण समय निरन्तर बदलैत अछि। नव समस्या, सम्बन्ध, तकनीक, संघर्ष आ मानवीय आकांक्षा जन्म लैत रहैत अछि। जे साहित्य ऐ बदलावकेँ सुनैत अछि, सएह अपन समयक जीवन्त अभिव्यक्ति बनि सकैत अछि। समाजसँ सटल साहित्य लोकक चेतनामे प्रवेश कऽ प्रश्न, संवाद आ परिवर्तनक आकांक्षा उत्पन्न करैत अछि।

साहित्यक मूल मानवीय स्वर प्रेम आ भायचारामे अछि, मुदा ओकर

साधना अपने लगसँ आरम्भ होइत अछि। प्रेमक अर्थ अन्याय देखितो मौन रहब नहि। जीवनक प्रति प्रेम मनुक्खक गरिमा, अधिकार आ सम्भावनाक पक्ष लैत अछि। अही प्रेमसँ जीवनक संघर्ष सृजनक रूप ग्रहण करैत अछि। विचारक संघर्षमे साहित्य प्रभावशाली माध्यम बनैत अछि, कारण ओ केवल बाहरी बेवस्थापर प्रश्न नहि उठबैत; मनुक्खक भीतर संवेदना, विवेक आ आत्मपरीक्षण सेहो जगबैत अछि।

रचनाक दशा-दिशा नीक रहत, तँ साहित्यक धारा बनल रहत। 'दशा' रचनाक भाषिक, कलात्मक आ संरचनात्मक गुणवत्ता अछि, जखन कि 'दिशा' ओकर मानवीय तथा सामाजिक अभिप्राय। कमजोर रचना-विधान उचित विचारकेँ प्रभावहीन बना सकैत अछि, आ अनुचित दिशा कलात्मक चमकक बीचमे रचनाक मानवीय सार्थकताकेँ कमजोर कऽ सकैत अछि। साहित्य तखने प्रभावी बनैत अछि, जखन रचनात्मक कौशल आ जीवनक प्रति उत्तरदायित्व एक-दोसरसँ जुड़ैत अछि।

मूल्यांकन समय करत, साहित्यकारक काज सृजन करैत रहब अछि। एकर अर्थ आलोचना वा वर्तमान मूल्यांकनक उपेक्षा नहि। समकालीन समीक्षा लेखककेँ अपन सीमा बुझबाक अवसर दैत अछि, मुदा रचनाक दीर्घकालीन साहित्यिक मूल्य पाठकीय अनुभव आ समयक बदलैत कसौटीसँ बनैत अछि। पुरस्कार नहि भेटलासँ सार्थक रचना निरर्थक नहि होइत, आ पुरस्कार भेटलासँ प्रत्येक रचना कालजयी सेहो नहि बनि जाइत। रचनाकारक वास्तविक दायित्व निरन्तर कर्म आ जीवनक प्रति अपन जिम्मेदारी निमाहब अछि।

दोसर खण्डक अन्तिम विचार साहित्यक निरन्तरतापर गहींर विश्वास व्यक्त करैत अछि। समाजक साँस जाधैर चलत, साहित्यक धारा ताधैर बहैत रहत। कारण समाजमे जाधैर सुख-दुःख, प्रेम-संघर्ष, न्याय-अन्याय, निर्माण-विनाश, आशा-निराशा आ मनुष्यक बदलैत अनुभव रहत, ताधैर ओकरा कहबाक, सुनबाक, लिखबाक आ बुझबाक खगता सेहो बनल रहत। प्रत्येक समय अपन प्रश्न लऽ कऽ अबैत अछि, आ प्रत्येक पीढ़ी ओइ प्रश्नकेँ अपन अनुभव, भाषा आ संवेदनाक आधारपर नव रूपमे व्यक्त करैत अछि। माध्यम बदलब, भाषा बदलब, रचनारूप बदलब, पाठकक आदत आ साहित्यक प्रसारक साधन सेहो बदलैत रहत; मुदा जीवनकेँ अभिव्यक्त करबाक मानवीय खगता समाप्त

नहि हएत। साहित्यक स्थायित्व ओकर कोनो एक रूपमे नहि, बल्कि जीवनक बदलैत यथार्थकेँ निरन्तर ग्रहण करैत नव अभिव्यक्ति खोजबाक अही सामर्थ्यमे अछि। ऐ अर्थमे साहित्य केवल समयक साक्षी नहि, बल्कि मनुक्खक अनुभव, स्मृति, प्रश्न आ भविष्यक सम्भावनाकेँ एक पीढ़ीसँ दोसर पीढ़ी धरि पहुँचबैत जीवित मानवीय संवाद अछि।

'सृजनक भीतर समाज'क पचास विचार-बिन्दु अही व्यापक यात्राक अलग-अलग पड़ाव अछि। पहिल पड़ाव रचनाकारक परिचय आ दृष्टि खोजैत अछि। दोसर सत्ता, हाशिया, स्वतंत्रता आ साहित्यिक मूल्यक सम्बन्ध खोलैत अछि। तेसर पाठक, मंच, संस्था, माध्यम आ स्वीकृतिक परीक्षण करैत अछि। चारिम भाषा, लोक, मिथिला, बेवहार आ संवादक जिम्मेदारी सामने अनैत अछि। पाँचम नियमित सृजन, प्रेम, संघर्ष, समय आ साहित्यक निरन्तर धाराक निष्कर्ष धरि पहुँचैत अछि।

प्रत्येक विचार-बिन्दु स्वतंत्र रूपसँ पढ़ल जा सकैत अछि। मुदा क्रमसँ पढ़लापर रचनाकारसँ रचना, रचनासँ पाठक, पाठकसँ साहित्यिक संस्था आ ओतएसँ व्यापक समाज धरि बनैत सम्बन्ध स्पष्ट होइत अछि। ई क्रम साहित्यक बाहरी बेवस्थाक आलोचना मात्र नहि; लेखक, पाठक आ साहित्यिक गतिविधिसँ जुड़ल प्रत्येक बेकतीकेँ अपन भूमिकाक आत्मपरीक्षण करबाक अवसर दैत अछि।

प्रश्न अन्ततः हमरा सभ दिस घुमैत अछि। हम की लिखै छी, की पढ़ै छी, केकरा आगू बढ़बै छी, केकर आवाज सुनै छी आ अपन भाषाक भविष्य लेल कोन कर्म करै छी? साहित्यक समाज केवल लेखकसभसँ नहि बनैत। पाठक, सम्पादक, प्रकाशक, समीक्षक, अनुवादक, आयोजक आ सामान्य भाषा-सेवीसभ ओकर निर्माणमे सहभागी होइत अछि। 'सृजनक भीतर समाज' अही सामूहिक दायित्वकेँ चिन्हबाक वैचारिक यात्रा छी।

पहिल खण्ड मनुक्खकेँ समाजक भीतर अपन निर्माणक सामर्थ्य चिन्हबैत अछि। दोसर खण्ड ओइ सामर्थ्यकेँ सृजन, संवाद आ सामाजिक जिम्मेदारीमे उतारबाक प्रश्न उठबैत अछि। सृजन तखने स्वनिर्मित जीवनक सार्थक विस्तार बनैत अछि, जखन ओ लेखकक निजी उपलब्धि धरि सीमित नहि रहि समाजक चेतना, प्रेम, न्याय आ परिवर्तनक यात्रामे सहभागी बनैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 1

हम केकर रचनाकार छी?

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "तैठाम अपन साहित्यक समीक्षा सेहो करबै ने जे हम केकर रचनाकार छिऐ।" (पृ. 27)

ई पंक्ति साहित्यिक आत्मपरीक्षणक जरूरी प्रश्न उठबैत अछि। रचनाकार भाषा आ शब्द मात्र नहि चुनैत; ओ जीवनक ओइ हिस्साकेँ सेहो चुनैत अछि, जेकरा साहित्यक भीतर स्थान देबाक अछि। अही चयनसँ ओकर सामाजिक पक्ष स्पष्ट होइत अछि आ प्रश्न उठैत अछि: हम केकर रचनाकार छी?

मैथिली साहित्यमे बहुत दिन धरि एकभगाह प्रवृत्ति काज करैत रहल। किछु खास वर्ग, संस्कार, भाषा-रूप आ संवेदना केन्द्रमे रहल; मुदा खेतमे श्रम करैत, तिरोट झेलैत, जातीय दूरी सहैत आ दहेज, शिक्षा-खर्च, भूख, असुरक्षा तथा अपमानक दबावमे जीबैत लोकक जीवन प्रायः कात कएल गेल।

मण्डलजीक साहित्य ऐ कतियाएल जीवनक पक्षमे ठाढ़ अछि। हुनका लग सजल-धजल समाज मात्र साहित्यक विषय नहि; दबौल, उपेक्षित आ संघर्षशील समाज सेहो ओतबे महत्त्वपूर्ण अछि। सभ्यता आ संस्कृतिक नामपर झाँपल जीवन-सत्यकेँ ओ रचनाक केन्द्रमे अनै छैथ।

"हम केकर रचनाकार छी?" ई प्रश्न लेखक धरि सीमित नहि। आलोचक केकर साहित्य पढ़ैत अछि, संस्था केकरा प्रोत्साहन दैत अछि आ पाठक केकर जीवनकेँ अपना अनुभवसँ जोड़ैत अछि? बहुसंख्य लोकक जीवन अनुपस्थित रहत तँ साहित्यक समीक्षा अधूरी रहि जाएत।

साहित्य प्रतिष्ठित जीवनक ऐना मात्र बनत तँ समाजक पूरा चेहरा नहि देखौत। ओकरा श्रम, भूख, महिलाक चुप्पी, किसानक चिन्ता, पछुआएल समाजक पीड़ा, अपमानित लोकक स्वाभिमान आ संघर्षक भीतरक इजोत सेहो देखाबए पड़त। साहित्यक नैतिकता चुप कराएल जीवनकेँ अभिव्यक्ति देबमे अछि।

साहित्यक असली परीक्षा ओकर सौन्दर्य मात्र नहि, ईहो अछि जे ओ केकर जीवनकेँ महत्त्वपूर्ण आ कहबाक योग्य मानैत अछि। छुटल लोकक जीवनकेँ केन्द्रमे अननिहार साहित्ये समाजक गहींर सच्चाइ धरि पहुँचैत अछि।

हम केकर रचनाकार छी? मण्डलजीक ई प्रश्न आइ हमरा सभक सामने अछि। साहित्यक भविष्य तखने खुलत, जखन ओकर केन्द्रमे समाजक पूरा जीवन आएत, ओकर एकभगाह रूप मात्र नहि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 2

संस्कारक प्राण लोक-कण्ठमे अछि

पयस्विनीक ‘संस्कार आ संस्कार गीत’ लेखमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “लोक गीतक मनोहर फुलबाड़ीमे जँ संस्कार गीतकेँ हटा देल जाए तँ ओ निष्प्राण भऽ जाएत।” (पृ. 20)

ई पंक्ति मण्डलजीक संस्कृति-दृष्टिक महत्त्वपूर्ण संकेत अछि। ओ संस्कारकेँ विधि-विधान, कर्मकाण्ड अथवा पुरोहिती बेवस्था धरि सीमित नहि रखै छैथ। हुनका लग संस्कारक प्राण ओतए अछि, जेतए लोक अपन दुःख-सुख, आनन्द, डर, भरोस, सम्बन्ध आ स्मृतिकेँ गीतमे व्यक्त करैत अछि।

संस्कार केवल नियम बनि जाए तँ बोझ भऽ जाइत अछि। लोक-कण्ठमे गीत बनि उतरैत संस्कार सामूहिक स्मृति बनैत अछि। मुड़न, उपनयन, बिआह, पाबैन, पारिवारिक मिलन आ नारी-कण्ठसँ उठैत स्वर मिलिकऽ ओकरा जीवित बनबैत अछि।

संस्कृति पोथीमे मात्र नहि बँचैत; ओ लोकक कण्ठ, गामक आँगन, सामूहिक गायन आ अवसरक भावमे जीवित रहैत अछि। गीतक बिना संस्कार सुखल विधान बनि सकैत अछि, मुदा गीत ओकरा स्वर, लय आ आत्मा दैत अछि।

संस्कार गीत केवल गान नहि, मिथिलाक महिला-जीवनक आवाज, परिवारक भाव-संरचना आ पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलैत स्मृतिक पुल अछि। ई पुल टुटत तँ संस्कारक बाहरी ढाँचा बँचल रहत, मुदा ओकरा भीतरक जीवन सूखि जाएत।

मण्डलजी परम्पराकेँ आँखि मुइन स्वीकारो नहि करै छैथ आ जल्दबाजीमे खारिजो नहि। जेतए परम्परा मनुक्खकेँ बान्हैत अछि, ओतए प्रश्न करै छैथ; जेतए ओ लोक-स्मृति, सामूहिकता आ सौन्दर्य बँचबैत अछि, ओतए ओकर जीवन-

तत्त्वकेँ चिन्है छैथ।

पयस्विनी सिखबैत अछि जे संस्कारक मूल्य बाहरी आडम्बरमे नहि, लोकजीवनसँ ओकर जीवित सम्बन्धमे अछि। जे संस्कार मनुक्खकेँ जोड़ैत, स्मृति आ गीतकेँ बँचबैत तथा समाजक भीतर भावक सेतु बनबैत अछि, सएह संस्कृति बनैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 3

धरतीसँ जन्मल साहित्य दुनियाँक सम्पैत बनैत अछि

पयस्विनीक प्रश्नोत्तर अंशमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "कोनो भाषाक साहित्य सिरिफ ओइ क्षेत्रक नहि दुनियाँक सम्पैत बनैत अछि।" (पृ. 71)

ई पंक्ति मण्डलजीक साहित्य-दृष्टिक पैघ उद्घोष अछि। मैथिली साहित्यक स्थानीय धरातल आ व्यापक मानवीय अर्थ, दुनू ऐमे एकसंग उपस्थित अछि। अपन भाषा, गाम आ लोकजीवनपर लिखल साहित्य छोट नहि होइत; धरतीसँ जीवित सम्बन्ध रखनिहार साहित्य दुनियाँक सम्पैत बनबाक सामर्थ्य रखैत अछि।

मण्डलजीक रचना-संसार एकर प्रमाण अछि। हुनकर साहित्य मिथिलाक लोकजीवनसँ जन्म लैत अछि, मुदा ओकर अर्थ मिथिला धरि सीमित नहि। ओइमे मनुक्खक दुःख, श्रम, अन्यायक विरुद्ध ठाढ़ हेबाक तागत, आत्मसम्मान आ बँचबाक जिद अछि। अही कारण स्थानीय होइतो ई व्यापक बनैत अछि।

साहित्यक महत्त्व दूर-दराजक चमकदार विषय उठेबामे नहि, अपन समाजक भीतर नुकाएल जीवन-सत्यकेँ गहींरता आ इमानदारीसँ चिन्हबामे अछि। जे लेखक अपन लोकक पीड़ा, भाषा, श्रम आ स्वप्नकेँ साहित्यिक गरिमा दैत अछि, सएह अपन क्षेत्रकेँ दुनियाँक सामने अर्थपूर्ण बनबैत अछि।

पयस्विनी मण्डलजीक समग्र साहित्य बुझबाक महत्त्वपूर्ण आधार अछि। कथा आ उपन्यासमे जे जीवन पात्र, घटना आ परिवेशक माध्यमसँ सामने अबैत अछि, एतए सएह जीवन विचार, तर्क आ सामाजिक विवेकक रूपमे खुलैत अछि।

मैथिली साहित्यक गरिमा लोकधरतीसँ कटबामे नहि, ओतए गहींर

धँसबामे अछि। माटिक गन्ह, श्रमक ताप, किसानक चिन्ता, महिलाक चुप्पी आ साधारण मनुक्खक स्वाभिमानकेँ स्थान देनिहार साहित्य अपन सीमासँ बाहर निकैल व्यापक मानवीय अर्थ ग्रहण करैत अछि।

साहित्यक यात्रा गामसँ शुरू भऽ सकैत अछि, मुदा प्रामाणिक साहित्य गाममे बन्द नहि रहैत। ओ मनुक्खक सझिया अनुभव बनि दुनियाँक सम्पैत बनैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 4

रक्त सम्बन्ध नहि पाठ सम्बन्ध देखू

पयस्विनीक 'अवतारवाद' लेखमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "हम सभ एक्कैसम शताब्दीक समर्थचेतना छी नहि कि सोलहम शताब्दीक बाल चेतना।" (पृ. 8)

ई पंक्ति अवतारवादक प्रश्न धरि सीमित नहि, मण्डलजीक समूचा विचार-संसारक आधार-बिन्दु अछि। समर्थ चेतना कोनो बातकेँ आँखि मुइन नहि मानैत; ओकरा तर्क, अनुभव, समय आ मनुक्खक विवेकक कसौटीपर परखैत अछि।

अही सन्दर्भमे किछु लोकक स्थायी आपत्ति विचारणीय अछि: बेटा बापक साहित्यपर किएक लिखत?

ई आपत्ति साहित्यक आलोचनासँ बेसी सम्बन्धकेँ निर्णायक बनबैत अछि। पोथीमे की लिखल अछि, विचारक धरातल, सामाजिक अर्थ, भाषा आ रचना-चेतना केहेन अछि, ई प्रश्न पाछाँ चलि जाइत अछि; आगाँ केवल लिखनिहारक पारिवारिक सम्बन्ध ठाढ़ कएल जाइत अछि।

साहित्य पैतृक खेत नहि, जेकरा जोतबाक अधिकार वंशपरम्परासँ तय होइ। ओ विचारक सार्वजनिक भूमि अछि। ओतए प्रवेशक आधार सम्बन्ध नहि, अध्ययन, इमानदारी, तर्क, परिश्रम आ आलोचनात्मक दृष्टि होइत अछि।

जँ रक्त-सम्बन्ध अपने-आप आलोचनाकेँ सन्दिग्ध बना दैत अछि, तँ हीनभावना, ईर्ष्या, गुटबन्दी आ पूर्वाग्रहसँ लिखल आलोचना निष्पक्ष केना मानल जाए? अपरिचित होएब निष्पक्षताक प्रमाण नहि, जहिना पारिवारिक सम्बन्ध पक्षपातक अनिवार्य प्रमाण नहि।

मूल प्रश्न लिखनिहारक परिचय नहि, लिखल सामग्रीक प्रामाणिकता अछि। कथनक आधार मूल पाठमे अछि आकि नहि? तर्क, प्रमाण आ कृतिसँ संवाद अछि आकि नहि? असहमति हो तँ प्रतिआलोचना लिखू, प्रमाण आ दृष्टि राखू। सम्बन्धक आधारपर काज खारिज करब आलोचना नहि, वैचारिक पड़ाइन अछि।

श्री जगदीश प्रसाद मण्डलक साहित्य लोकजीवन, श्रम, वंचित समाज आ मनुक्खक गरिमाक साहित्य अछि। ऐपर बेटा गम्भीरतासँ लिखैत अछि तँ ओकरा पहिने बेटाक रूपमे नहि, पाठक, सम्पादक, शोधकर्ता आ आलोचकक रूपमे पढ़ल जाए।

पयस्विनी सिखबैत अछि जे समर्थ चेतना सम्बन्ध नहि, विचार देखैत अछि।

आलोचनाक न्यायालयमे वंशावली नहि, मूल पाठ, प्रमाण आ दृष्टि देखल जाए।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 5

एक आँखि समाजपर, दोसर कागत-कलमपर

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "आइक सामाजिक परिवेशमे केहेन भाषा, केहेन साहित्य आ केहेन संस्कृतिक आवश्यकता अछि, ऐपर विचार करब जरूरी अछि।" (पृ. 31)

ई पंक्ति मण्डलजीक साहित्य-दृष्टिक गहींर सूत्र अछि। साहित्य हुनका लेल शब्दक खेल, भावक सजावट अथवा मंचीय वाहवाहीक वस्तु नहि। ओकर परीक्षा समाजक बीच होइत अछि। समाजक खगता, दुःख-संघर्ष, भाषा आ बदलैत जीवन-स्थितिकेँ देखने बिना साहित्य अपन जिम्मेदारी पूरा नहि कऽ सकैत।

लेखकक काज कागतपर वाक्य सजाएब मात्र नहि, जीवनक आवाज सुनब सेहो अछि। गामक बदलैत रूप, किसानक चिन्ता, महिलाक चुप्पी, श्रमक अवमूल्यन, भाषाक दूरी, संस्कृतिक टुटान आ मनुक्खक गरिमाक प्रश्न ओकर लेखनमे प्रवेश करबाक चाही।

साहित्य समाजसँ कटि शब्दक महल ठाढ़ कऽ सकैत अछि, मुदा ओइ महलमे जीवनक साँस नहि रहत। साहित्यक ताप तखने बनैत अछि, जखन

कागत-कलम समाजक धड़कन सुनैत आ शब्द मनुक्खक अनुभवसँ जुड़ि अबैत अछि।

अही अर्थमे लेखकक एक आँखि समाजपर आ दोसर कागत-कलमपर रहबाक चाही। समाजपर नजैर नहि रहत तँ लेखन सुखल खखरी होएत; कागत-कलमपर नजैर नहि रहत तँ संवेदना रचनात्मक आकार नहि पाउत। दुनू जुड़त तखनहि विचार, अनुभव आ अभिव्यक्तिक जीवित रूप बनत।

मण्डलजी समाजकेँ दूरसँ नहि, ओकरा भीतर रहि देखै छैथ। हुनकर साहित्य गामक देह, माटिक गन्ह, श्रमक ताप आ मनुक्खक स्वाभिमानसँ बनल अछि। तँए ओ कथा कहबाक संग पाठककेँ समाज देखबाक नजैर सेहो दइ छैथ।

अपन समयक प्रश्नसँ आँखि मिलौनिहार साहित्ये आगूक समय लेल अर्थपूर्ण बनैत अछि। कालजयी साहित्य अपन माटिसँ जन्म लैत अछि, मुदा समय बीतलाक बादो मनुक्खक अनुभव, संघर्ष आ गरिमाक पक्षमे जीवित रहैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 6

दर्पण साफ रहत तखनहि समाज देखाइत रहत

पयस्विनीक प्रश्नोत्तर अंशमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "साहित्य समाजक ओहन दर्पण छी जइमे भूत, वर्तमान आ भविष्यक दर्शन होइत अछि।" (पृ. 67)

ई पंक्ति मण्डलजीक साहित्य-दृष्टिक महत्त्वपूर्ण आधार अछि। साहित्य हुनका लग समाजक ओ दर्पण अछि, जइमे समयक चेहरा देखाइत अछि। ओइ दर्पणमे अतीतक स्मृति, वर्तमानक सत्य आ भविष्यक सम्भावना, तीनू उपस्थित रहैत अछि।

दर्पण होएब मात्र पर्याप्त नहि; ओकरा साफ सेहो रहए पड़त। साहित्य समाजक सजल चेहरा देखबए आ फाटल चेहरा नुका लए तँ ओ अधूरा रहत। सुख आ उत्सवक संग भूख, अपमान, श्रमक लूट, महिलाक पीड़ा, किसानक विवशता आ कतियाएल समाजक संघर्षो देखाएब आवश्यक अछि।

इतिहासक पन्नापर सत्ता, प्रतिष्ठा आ पैघ नाम सहज स्थान पबैत अछि; खेतमे श्रम करैबला, भूखसँ लड़ैबला, महिला, किसान, मजदूर आ पछुआएल

समाजक आवाज बहुत बेर बाहर रहि जाइत अछि। साहित्यक जिम्मेदारी ऐ अनदेखल जीवनकेँ समयक साक्ष्य बनबैत रचनामे स्थान देब अछि।

जे बजि नहि पबैत, ओकरा भाषा देब; जे दुःख सहैत अछि, ओकर दुःखकेँ सामाजिक अर्थ देब; जे श्रम करैत अछि, ओकर श्रमक गरिमा चिन्हाएब, साहित्यिक दर्पणकेँ साफ रखबाक अर्थ अहीमे अछि।

साफ दर्पण वर्तमानक चेहरा मात्र नहि देखबैत। ओ बतबैत अछि जे वर्तमान कोन अतीतसँ बनल आ ओकरा भीतर भविष्यक कोन सम्भावना अथवा संकट नुकाएल अछि। अही समय-बोधसँ साहित्य दस्तावेजो बनैत अछि आ परिवर्तनक चेतनो जगबैत अछि।

पयस्विनी साहित्य पढ़बाक संग ओकर माध्यमसँ समाज देखब सेहो सिखबैत अछि। जे पाठक रचनामे समाजक अनदेखल चेहरा नहि देखि पबैत, ओकर पढ़ब अधूरा रहि जाइत अछि।

साहित्यक दर्पण तखने सार्थक अछि, जखन ओ मनुक्खक पीड़ा, संघर्ष,

स्वाभिमान आ भविष्यक बाटकेँ एकसंग देखबैत अछि। दर्पण साफ रहत

तखनहि समाज अपना पूरा रूपमे देखाइत रहत।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 7

रचनाकारक समदृष्टि: प्रिय-अप्रियसँ ऊपर

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “ओहन गार्जियन जकाँ रचनाकार छी जेकर एकटा बेटा आइ.ए.एस. होय आ दोसर नाङर-लुल्ह, ओ जहिना दुनूकेँ समान नजैरसँ देखै छैथ तहिना हमहूँ अपना रचनाकेँ देखै छी।” (पृ. 73)

ई पंक्ति मण्डलजीक रचनाकार-मनक खुलासा करैत अछि। ओ अपन रचनाकेँ बाजार, चर्चा, लोकप्रियता वा तत्कालीन सफलता-असफलताक आधारपर अलग दर्जा नहि दइ छैथ। प्रत्येक रचना हुनकर सर्जनात्मक जीवनक अंग अछि।

जे रचना बेसी पढ़ल गेल, ओहो अपन; जे कम चर्चित रहल, ओहो अपन। जे सहज बुझाइत अछि, ओहो अपन; जे कठिन धरातलपर ठाढ़ अछि, ओहो

अपन। मण्डलजी अपन रचना-संसारक भीतर लोकप्रियता आधारित भेद नहि करै छैथ।

ई आत्मीयता मात्र नहि, समदृष्टि सेहो अछि। जे रचनाकार समाजक हाशियाक लोककेँ कात नहि करै छैथ, ओ अपन साहित्यक कम चर्चित रचनाकेँ सेहो कात केना करत? हुनकर मानवीय आ रचनात्मक दृष्टि एक-दोसरासँ जुड़ल अछि।

जीवनक सम्पूर्णतामे सुन्दर-असुन्दर, बलवान-असहाय, सफल-असफल, प्रसन्न-पीड़ित आ चर्चित-उपेक्षित सभक स्थान अछि। मण्डलजी समाजमे छुटल मनुक्ख आ साहित्यमे कम देखल गेल रचना, दुनूक महत्त्व बुझै छैथ।

रचनाकारक समदृष्टि सर्जनात्मक इमानदारीसँ जन्म लैत अछि। प्रशंसा मात्र चाहनिहार लेखक अपन रचनाक चुनल चेहरा देखबैत अछि। जीवनक सच्चाइसँ जुड़ल लेखक कमजोर, कठिन आ कम चर्चित पक्षसँ सेहो मुँह नहि मोड़ैत।

साहित्यिक सिनेह अन्ध-प्रशंसा नहि, अपन सम्पूर्ण रचना-संसारक जिम्मेदारी अछि। रचनाकार गार्जियन जकाँ प्रिय-अप्रिय, सफल-असफल आ चर्चित-अचर्चितसँ ऊपर उठि प्रत्येक सृजनक जीवन-ऊर्जा देखैत अछि। मण्डलजी रचनाकेँ उपलब्धिक सीढ़ी नहि, जीवनक विस्तार मानै छैथ। प्रत्येक रचना अपन समय, अनुभव, चिन्ता आ संघर्षक सन्तान अछि। अही समदृष्टिमे रचनाकारक मानवीय गरिमा प्रकट होइत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 8

कथा नहि, जीवन हुनका पकड़ने छैन

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "उपन्यास, कथा लिखब जे जीवनक शुरूमे पकड़लक से अखनो ओहिना पकड़ने अछि, तँए कोन नीक कोन बेजाए, केना कहल जाए।" (पृ. 89)

ई पंक्ति मण्डलजीक कथाकार-सोभावक परिचय दैत अछि। ओ कथा आ उपन्यासकेँ साहित्यिक विधा मात्र नहि मानै छैथ। कथा जीवनक भीतरसँ उठैत,

ओकर संग चलैत आ ओकर दबावमे अपन रूप ग्रहण करैत अछि।

बहुत रचनाकार अभिव्यक्तिक लेल कोनो विधा चुनै छैथ, मुदा मण्डलजीक कथनसँ स्पष्ट अछि जे कथा हुनकर चुनल विधा मात्र नहि। सर्जनात्मक जीवनक आरम्भमे कथा हुनका पकैड़ नेने छल आ ओ पकड़ अखनो बनल छैन। कारण जीवन हुनका निरन्तर कथा दऽ रहल अछि।

असलमे ई लोकजीवनक पकड़ अछि। गाम, खेत, श्रम, बाढ़ि-सुखाड़, किसानक चिन्ता, मजदूरक थकान, महिलाक मौन पीड़ा, जातीय दूरी, अभाव, अपमान आ स्वाभिमान हुनकर कथा-संसारक बाहरी सजावट नहि, सक्रिय धरातल अछि। अही जीवन-स्थितिसँ कथाक आकार बनैत अछि।

मण्डलजीक कथा-संसार कल्पनाक बनावटी चमकसँ नहि, जीवनक तापसँ बनल अछि। हुनकर पात्र गढ़ल पुतला नहि, समाजक बीच चलैत-बजैत मनुक्ख छैथ। हुनकर दुःख भावुकता मात्र नहि, सामाजिक यथार्थ; संघर्ष कथानकक घटना मात्र नहि, जीवनक निरन्तर परीक्षा अछि।

“कोन नीक कोन बेजाए” कथनमे दम्भ नहि, विनम्रता आ रचनात्मक इमानदारी अछि। ओ साहित्यिक कर्मकेँ प्रचार, प्रसिद्धि वा उपलब्धिक गिनतीसँ नहि, जीवनक संग ओकर निरन्तर सम्बन्धसँ देखै छैथ।

कथा हुनका लेल ओ स्थान अछि, जेतए समाजक अनकहल जीवन भाषा पबैत अछि। इतिहास आ मंचसँ बाहर रहल लोक, दबि गेल दुःख आ उपेक्षित श्रम हुनकर कथामे चेहरा, आवाज आ मानवीय गरिमा पबैत अछि।

प्रामाणिक कथाकारकेँ कथा लेल दूर नहि जाए पड़ैत। लोकक हँसी, दुःख, संघर्ष, अपमान, सम्बन्ध आ आशा दिन-प्रतिदिन ओकर सोझाँ कथाक रूपमे ठाढ़ रहैत अछि।

कथा नहि, जीवन मण्डलजीकेँ पकड़ने छैन। तँए हुनकर कथा गढ़ल प्रसंग जकाँ नहि, भोगल आ निरन्तर देखल जीवनानुभव जकाँ पाठकक भीतर उतैर जाइत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 9

मन झुझुआइए, तखन रचना निष्पक्ष अभिव्यक्तिक खोजमे रहैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “कविता लिखला पछाइत अपने मन झुझुआए लगैए। झुझुआए ई लगैए जे जे विचार रखए चाहै छी ओ राखि नहि पबै छी।” (पृ. 89)

ई पंक्ति मण्डलजीक भीतरक सजग रचनाकारकेँ सामने अनैत अछि। लिखलाक बादो ओ निश्चिन्त नहि होइ छैथ। हुनकर मन ऐ प्रश्नसँ झुझुआइत रहैत अछि जे अनुभव कएल विचार शब्दमे ओहिना उतैर सकल आकि नहि।

ई झुझुआएब कमजोरी नहि, रचनात्मक इमानदारी अछि। अपन लिखल शब्दसँ तुरन्त सन्तुष्ट नहि होनिहार रचनाकार रचनाकेँ बेर-बेर देखैत, परखैत आ टटोलैत अछि। ओकरा लेल लेखन अन्तिम घोषणा नहि, सटीक आ निष्पक्ष अभिव्यक्तिक निरन्तर खोज अछि।

मण्डलजी भाव लिखिकऽ रुकै नहि छैथ। ओ ओइ दबल जीवनानुभव दिस जाइ छैथ, जे सहज रूपमे सामने नहि आबि पबैत। ओकरा शब्द देब आ भीतर नुकाएल पीड़ा, सामाजिक प्रश्न तथा विचारकेँ पाठकक सोझाँ आनब शिल्पक संग नैतिक जिम्मेदारी सेहो अछि।

जीवनक विस्तार बहुत पैघ आ शब्दक सीमा अछि। श्रमिकक पसेना, किसानक चिन्ता, महिलाक दबौल पीड़ा, जातीय अपमान, अभावक अन्हार आ स्वाभिमान बँचेबाक संघर्षक अपन-अलग ताप अछि। लेखककेँ घटना मात्र नहि, ओकरा भीतरक मानवीय पीड़ा आ सामाजिक अन्यायो पकड़ए पड़ैत अछि।

तँए मण्डलजी अपन रचनासँ पुछै छैथ: की विचार पूरा रूपमे आबि सकल? कथन निष्पक्ष रहल? जीवनक ताप शब्दमे उतैर सकल? रचना ओइ अनुभवक संग न्याय कऽ सकल, जेकरा अभिव्यक्त करबाक प्रयास भेल?

रचनाकारक ई असन्तोष ओकरा आगू बढ़बैत अछि। पूर्ण सन्तोष रचनाकेँ ठमका सकैत अछि, मुदा झुझुआइत मन भाषा लेल नव बाट खोजैत, विचारकेँ नव आकार दैत आ रचनाकेँ आरो गहींर धरातल दिस लऽ जाइत अछि।

निष्पक्ष अभिव्यक्ति लेल आत्मपरीक्षण, वैचारिक सजगता, आन्तरिक बेचैनी आ जीवनक प्रति इमानदार जिम्मेदारी चाही। मण्डलजीक मनक

झुझुआएब अही रचनात्मक जिम्मेदारीक चिन्ह अछि।

मन झुझुआइए तखन रचना समाप्त नहि होइत; ओ निष्पक्ष अभिव्यक्तिक खोजमे आगू बढ़ैत रहैत अछि। मण्डलजीक यएह बेचैनी हुनकर साहित्यकेँ जीवित, सजग आ मानवीय बनबैत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 10

शब्द जीवनक नक्शा अछि, खाली भाषाक रूप नहि

मण्डलजी लिखै छैथ- “एक-एक शब्द एक-एक जीवनक काजक नक्शा तैयार करैक शक्ति रखैए।” (पृ. 130)

ई पंक्ति मण्डलजीक भाषा-दृष्टिक गहराइ प्रकट करैत अछि। शब्द हुनका लग ध्वनि, वर्तनी वा व्याकरणक इकाइ मात्र नहि, जीवनक काज, अनुभव आ सम्बन्धक नक्शा अछि। ओइमे श्रमक गन्ह, घर-आँगनक बेवहार, सामाजिक मर्यादा, लोकाचार, स्मृति आ बदलैत समयक चालि समाएल रहैत अछि।

‘काजक नक्शा’ अर्थगर्भित प्रयोग अछि। नक्शा रूपक संग दिशा, स्थान आ परस्पर सम्बन्ध बतबैत अछि। तहिना शब्द वस्तु वा क्रियाक नाम मात्र नहि कहैत; ओ समाजक ओइसँ सम्बन्ध, काजक क्रम, सहभागी लोक आ पाछाँ सक्रिय अनुभव तथा मूल्यक संकेत दैत अछि।

मैथिलीक शब्द-संसारकेँ संस्कृतसँ आएल शब्दक भण्डार मात्र बुझब ओकर ऐतिहासिक यात्रा आ लोकजीवनक रचनात्मक शक्तिकेँ छोट करब होएत। भाषा समाजक जीअल अनुभव, सामूहिक स्मृति, श्रम, सम्बन्ध आ बदलैत जीवनक भीतर बनैत अछि।

मैथिलीक शब्दमे माटिक गन्ह, नदी-पोखरिक सोभाव, बरखा-घाम, खेती-बाड़ी, माल-जाल, ऋतु-अनुसार श्रम, नाता-गोता, संस्कार, महिलाक गीत, बच्चाक खेल, श्रमिकक पुकार आ किसानक आशा समाएल अछि। प्रत्येक अनुभव अपन विशिष्ट शब्द, स्वर आ अभिव्यक्तिक संग भाषामे उपस्थित अछि।

ऐ शब्दसभक अर्थ शब्दकोश मात्रसँ नहि बुझल जा सकैत। खेत, घर, गीत अथवा संघर्षक क्षणमे बाजल शब्द अपना संग सामाजिक प्रसंग, भावनात्मक ताप, बेवहारिक उपयोग आ ऐतिहासिक स्मृति लऽ कऽ चलैत अछि। शब्द बुझब

माने ओकरा जन्म देनिहार जीवन-परिस्थितिकेँ बुझब।

शब्द अतीतक निर्जीव अवशेष नहि। लोक ओकरा वर्तमानक अनुभव दैत अछि; बदलैत जीवन नव शब्द रचैत आ पुरान शब्दकेँ नव अर्थ प्रदान करैत अछि। जीवन शब्दकेँ बनबैत अछि आ शब्द जीवनकेँ बुझबाक ढाँचा दैत अछि। अही जीवित सम्बन्धमे भाषाक विकास होइत अछि।

मैथिलीक समूचा शब्द-संसार कोनो एक स्रोतक देन नहि। ऐमे देशज लोकजीवन, प्राचीन परम्परा, विभिन्न भाषिक सम्पर्क, पेशागत अनुभव आ बदलैत समयक अनेक तह मिलल अछि। अही बहुस्तरीयतामे ओकर वास्तविक समृद्धि अछि।

भाषा-संकट तखन बढ़ैत अछि, जखन हम शब्दक शुद्धतापर बहस बेसी आ ओकर जीवनपर विचार कम करै छी। मानक भाषा आवश्यक अछि, मुदा मानकीकरणक नामपर क्षेत्रीय प्रयोग, लोक-शब्द आ पेशागत शब्दावली मिटाएब भाषाकेँ निर्धन बनबैत अछि। शब्दकेँ बँचाएब माने ओकर जीवन-सन्दर्भ, लोक-प्रयोग आ बजैबला समाजकेँ बँचाएब।

मण्डलजी शब्दक चमत्कार देखेबाक लेल नहि, जीवनक भीतर नुकाएल सत्य उजागर करबाक लेल भाषाक प्रयोग करै छैथ। हुनकर शब्दमे गामक साँस, श्रमक ताप, अभावक पीड़ा, सम्बन्धक ऊष्मा, स्वाभिमान आ संघर्षक आशा धड़कैत अछि। शब्द हुनका लग सजावट नहि, जीवनक ओझरी खोलैक सशक्त साधन अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 11

केन्द्रक कुर्सी आ हाशियाक आवाज

पयस्विनीक 'वर्चस्ववादी संस्कृति बनाम हाशियाक समाजक संघर्ष' लेखमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ-

"भाषा हुअ कि साहित्य हुअ आकि संस्कृति हुअ, वर्चस्ववादी आ हाशियापर ठाढ़ भेल समाजक बीच हजारो कोसक दूरी बनल अछि।" (पृ. 27)

ई पंक्ति खाली भाषा-साहित्यक सामान्य टिप्पणी नहि अछि। ई समाजक भीतर बनल ओइ गहींर दूरीकेँ देखबैत अछि, जेतए किछु लोक अपनाकेँ केन्द्र

मानि लैत अछि आ बहुसंख्य लोकजीवनकेँ हाशियापर ठाढ़ कऽ दैत अछि।

मण्डलजी ऐठाम सीधा प्रश्न उठबै छैथ जे साहित्य आखिर केकरा लेल अछि? भाषा केकर अछि? संस्कृति केकर जीवनसँ बनैत अछि? जँ साहित्य केवल ओकरे अनुभवकेँ स्थान देत जे पहिनेसँ केन्द्रमे बैसल अछि, तँ हाशियाक समाजक दुख, श्रम, अपमान, संघर्ष आ सपना केतए जाएत?

वर्चस्वक सभसँ पैघ प्रवृत्ति ई होइत अछि जे ओ अपनाकेँ सोभाविक मानि लैत अछि। ओकरा लग ओकरे भाषा भाषा, ओकरे संस्कृति संस्कृति, ओकरे अनुभव साहित्य आ ओकरे दृष्टि मानक बनि जाइत अछि। जे लोक ओकर बाहर अछि, ओकरा पछुआएल, असभ्य, मानक नहि अथवा अप्रासंगिक कहि किनार कऽ देल जाइत अछि।

मुदा मण्डलजीक दृष्टि ऐ किनाराक विरुद्ध ठाढ़ अछि। ओ हाशियाकेँ दयाक विषय नहि बनबै छैथ। ओ ओकरा समाजक असली धरातल मानै छैथ। ओ जानै छैथ जे खेतमे श्रम करैबला, गाममे जीबैबला, अभावसँ लड़ैबला, अपमानक बावजूद अपन गरिमा बँचबैबला लोकक बिना कोनो साहित्य पूर्ण नहि भऽ सकैत अछि।

हुनकर साहित्यक मूल आग्रह यएह अछि जे जे जीवन सदिखन पाछाँ धकेलल गेल, ओकरा साहित्यक केन्द्रमे आनल जाए। जे आवाज दबौल गेल, ओकरा सुनल जाए। जे समाजक इतिहासमे नामहीन रहल, ओकरा रचनाक भीतर चेहरा, भाषा आ आत्मा देल जाए।

ऐठाम पयस्विनी हमरा केवल विचार नहि दैत अछि, तैसंग साहित्यक जिम्मेदारी सेहो बुझबैत अछि। साहित्य जँ सचमुच समाजक दर्पण छी, तँ ओ दर्पण केवल साफ कोठरी आ सजल चेहरा नहि देखाएत। ओकरा माटि, पसेना, फाटल हाथ, भूख, उपेक्षा, महिलाक चुप्पी, किसानक चिन्ता आ हाशियाक संघर्ष सेहो देखाबए पड़त।

केन्द्रक कुर्सीपर बैस कऽ हाशियाक जीवनपर निर्णय देब आसान अछि। कठिन अछि, हाशियाक आवाजकेँ ओकर अप्पन गरिमा सहित सुनब। मण्डलजीक साहित्य ऐ कठिन काज करैत अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे भाषा, साहित्य आ संस्कृतिपर केकरो निजी कब्जा नहि चलत। ई सभ ओइ समाजक छी, जे जीबैत अछि, श्रम

करैत अछि, दुख सहैत अछि, प्रश्न करैत अछि आ अप्पन हिस्साक सम्मान माँगैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 12

सत्ता नहि, दबल-कुचलल समाज हमर आधार

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "समाजक ओ दबल-कुचलल वंचित हमर मुख्य आधार अछि, जेकरा लेल लिखबो केलौं आ आगूओ जे किछु लिखब ओकरे लेल लिखब।" (पृ. 69)

ई पंक्ति मण्डलजीक रचनाकार-संकल्पक स्पष्ट घोषणा अछि। साक्षात्कारमे जखन हुनकर साहित्यक मूल आधारक प्रश्न उठैत अछि, तँ ओ गोल-मोल उत्तर नहि दइ छैथ। ओ साफ कहै छैथ जे हुनकर साहित्यक आधार सत्ता, मंच, प्रतिष्ठा, संस्था, सुविधा-सम्पन्न समाज वा प्रशंसक-वर्ग नहि, बल्कि दबल-कुचलल वंचित समाज अछि।

एहेन उत्तर देब आसान नहि। बहुत रचनाकार अपन साहित्यकेँ व्यापक, निरपेक्ष वा सर्वमान्य कहि अपन पक्षधरताकेँ अस्पष्ट रखबाक चेष्टा करै छैथ। मुदा मण्डलजी सुरक्षित उत्तर नहि चुनै छैथ। ओ स्पष्ट करै छैथ जे जिनकर जीवन समाजक कात धकैल देल गेल, जिनकर आवाज दबौल गेल, जिनकर श्रमपर समाज टिकैत रहल, मुदा जिनका सम्मानसँ वंचित राखल गेल, हुनकहि लेल हुनकर लेखन अछि।

ई दया नहि, पक्षधरता छी। ई करुणाक प्रदर्शन नहि, साहित्यिक संकल्प छी। दबल-कुचलल समाज हुनका लेल विषय मात्र नहि, आधार अछि। विषयकेँ दूरसँ देखल जा सकैत अछि, मुदा आधारपर ठाढ़ हुअ पड़ैत अछि। मण्डलजी ओइ सामाजिक धरातलपर ठाढ़ रचनाकार छैथ।

मैथिली साहित्यक एकटा पैघ प्रश्न एत्तैसँ उठैत अछि: साहित्य आखिर केकरा लेल लिखल जा रहल अछि? मंचपर बैसल लोक लेल? संस्था चलबैबला लोक लेल? सम्मान बाँटैबला लोक लेल? आकि ओइ लोक लेल, जे श्रम, अभाव, अपमान, जाति-जातिक दूरी, बेरोजगारी आ सामाजिक दबावक बीच अपन जीवन आगू बढ़बैत अछि?

मण्डलजीक रचना-संसार ऐ प्रश्नक स्पष्ट उत्तर अछि। हुनकर साहित्यमे

घर-परिवारक सम्बन्ध अछि, खेत-माटिसँ जुड़ल श्रम आ पसेनाक गन्ध अछि तथा भूखक कठोर यथार्थ आ जीवन-संघर्षक अनेक रूप अछि। ओ महिलाक पीड़ा आ स्वाभिमान, किसान-मजदूरक संघर्ष तथा पिछड़ल-पछुआएल समाजक उपेक्षित अनुभवकेँ साहित्यक भीतर स्थान दइ छैथ। ऐ तरहेँ, जे लोक आ जे जीवन बहुत दिन धरि साहित्यक केन्द्रसँ बाहर राखल गेल, ओकरा ओ अपन रचनाक केन्द्रमे आनै छैथ।

तँए मण्डलजीक साहित्यकेँ 'ग्रामीण साहित्य' कहि सीमित करब भूल होएत। ई समाजक वास्तविक आधारक साहित्य अछि। ई ओइ लोकक साहित्य अछि, जे सभ्यताक भार उठबैत अछि, मुदा सभ्यताक सम्मानमे ओकर हिस्सा प्राय: छीनल जाइत रहल अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे निष्पक्ष रचनाकार अपन सामाजिक आधार नहि नुकबैत। ओ ई नहि सोचैत अछि जे अपन लेखनसँ केकरा प्रसन्न करब, मुदा ई अवश्य देखैत अछि जे केकर जीवन-अनुभवकेँ आवाज देब। मण्डलजी दबल-कुचलल समाजकेँ साहित्यक कातमे ठाढ़ नहि करै छैथ, बल्कि ओकरा अपन साहित्यक आधार बनबै छैथ।

सत्ता बदलैत रहैत अछि, मंचक चमक क्षणिक होइत अछि आ सम्मानपत्र पुरान पड़ि जाइत अछि। मुदा जे साहित्य वंचित समाजक जीवन आ गरिमाक पक्षमे ठाढ़ होइत अछि, ओकर नैतिक प्रभाव बहुत दिन धरि जीवित रहैत अछि। मण्डलजी एहेन दीर्घजीवी साहित्यिक संकल्पक रचनाकार छैथ।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 13

कतियाएल नहि, निष्पक्षधाराकेँ गति देनिहार

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "तँए अपनाकेँ कतियाएल नहि, नव धाराक गति देनिहार बुझै छी। ई विचारधाराक प्रश्न अछि कतिएबाक नहि।" (पृ. 69)

ई पंक्ति मण्डलजीक वैचारिक आत्मविश्वासक अद्भुत उदाहरण अछि। साक्षात्कारमे जखन प्रश्न उठैत अछि जे हुनका साहित्यक मुख्यधारासँ कतिया देल गेल, तँ ओ एकरा अपन बेकतीगत उपेक्षा रूपमे नहि देखै छैथ। शिकायत, हीनभावना वा आत्म-दयामे पड़बाक बदला ओ स्पष्ट कहै छैथ जे ई केवल हुनका

कतिएबाक प्रश्न नहि, बल्कि दू भिन्न विचारधाराक प्रश्न अछि।

ई उत्तर तथाकथित मुख्यधाराक दम्भकेँ सीधा चुनौती दैत अछि। कोनो धारा केवल अपनाकेँ मुख्यधारा कहि देलासँ साहित्यक सोभाविक वा निष्पक्षधारा नहि भऽ जाइत अछि। बहुत बेर ओ सत्ता, जातीय वर्चस्व, संस्थागत पहुँच, गुट, निजी परिचय आ प्रचारक बलपर बनल धारा सेहो भऽ सकैत अछि। निष्पक्षधारा ओत्तै बनैत अछि, जेतए जीवनक सचकेँ निर्भयतासँ स्वीकार कएल जाइत अछि, श्रमक गरिमाकेँ सम्मान भेटैत अछि, दबाएल आवाजकेँ स्थान देल जाइत अछि आ रचनात्मक इमानदारीकेँ सर्वोपरि मानल जाइत अछि।

मण्डलजी अपनाकेँ कतियाएल नहि मानै छैथ, कारण हुनकर लेखनक आधार कोनो साहितियिक गुट, संस्था वा प्रचार-तन्त्र नहि, बल्कि व्यापक लोकजीवन अछि। हुनकर साहित्य लोकजीवनक गहींर धरातलपर ठाढ़ अछि। खेत-गामक जीवन, किसान-मजदूरक श्रम, महिलाक संघर्ष तथा अभाव आ अपमानसँ जुझैत लोक ई सभ समाजक किनारपर पड़ल विषय नहि, बल्कि ओकर वास्तविक जीवन अछि। जे साहित्य ऐ जीवनकेँ केन्द्रमे अनैत अछि, ओकरा कतियाएल कहब तथाकथित मुख्यधाराक दृष्टिदोष अछि।

कात ओ नहि अछि जे लोकजीवन लिखैत अछि; कात ओ अछि जे लोकजीवनसँ कटि गेल अछि। कात ओ नहि अछि जे वंचित समाजक पक्षमे ठाढ़ अछि; कात ओ अछि जे बहुसंख्य लोकक जीवन देखबासँ बँचैत अछि। कात ओ नहि अछि जे कठिन प्रश्न उठबैत अछि; कात ओ अछि जे सुविधा लेल चुप्पी साधि लइ छैथ।

मण्डलजीक 'नव धारा'क अर्थ अही विचारसँ स्पष्ट होइत अछि। नव धारा माने नव दृष्टि, नव विषय आ साहित्यक केन्द्रक विस्तार। जे जीवन पहिने बाहर राखल गेल, ओ साहित्यक भीतर आबए। साहित्य प्रतिष्ठित लोकक आँगनसँ आगू बढ़ि श्रम करैबला लोकक मुँहथैरपर पहुँचए।

निष्पक्षधारा तखन बनैत अछि, जखन साहित्य जातीय सुविधा, संस्थागत चुप्पी आ समूहगत प्रशंसासँ ऊपर उठि जीवनक पक्षमे ठाढ़ होइत अछि। मण्डलजीक रचनाकार-सोभाव ऐ धाराकेँ गति दइ छैथ, कारण ओ साहित्यक मूल्यांकन सत्ता वा स्वीकृतिसँ नहि, जीवनक सचसँ करै छैथ।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे 'मुख्यधारा' शब्दसँ भ्रमित नहि

हेबाक चाही। कोनो धारा मुख्य कहलासँ निष्पक्ष नहि भऽ जाइत। धारा तखन अर्थपूर्ण होइत अछि, जखन ओ समाजक दबौल जीवनकेँ संग लऽ कऽ चलैत अछि आ उपेक्षित अनुभवकेँ साहित्यिक गरिमा दैत अछि।

मण्डलजी कतियाएल नहि छैथ। ओ ओइ निष्पक्षधाराकेँ गति देनिहार छैथ, जेतए साहित्यक आधार सत्ता नहि, समाज अछि; प्रतिष्ठा नहि, जीवन अछि; गुट नहि, मनुक्खक गरिमा अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 14

साहित्यकेँ भक्त नहि, निर्भीक पाठक चाही

मण्डलजी लिखै छैथ- "भक्त आ भगवान साम्प्रदायिक भाषा छी। कियो अपन कर्मसँ बढ़ैत-घटैत अछि मुदा आगूसँ अधला सोचब आ करबकेँ अधला बुझै छी।" (पृ. 80)

ई पंक्ति साहित्यक भीतर बनौल जाइबला भक्त-भगवानक सम्बन्धकेँ अस्वीकार करैत अछि। रचनाकारक सम्मान हो, ओकर श्रमक स्वीकृति हो आ श्रेष्ठ रचनाकेँ प्रतिष्ठा सेहो भेटए, मुदा सम्मानक अर्थ अपन विवेक समर्पित करब नहि। साहित्यकारकेँ एहेन ऊँच आसनपर बैसा देब, जेतए हुनकर प्रत्येक बात स्वतः सत्य मानल जाए, साहित्यिक संस्कृतिक स्वस्थ विकासमे बाधा बनैत अछि।

भक्त पहिने मानि लैत अछि, पछाति पढ़ैत अछि। निर्भीक पाठक पहिने पढ़ैत, बुझैत, प्रश्न करैत आ तेकर बाद अपन मत बनबैत अछि। भक्त लेल रचनाकारक नाम प्रमाण बनि जाइत अछि, मुदा सजग पाठक लेल रचनेक भीतरक जीवन-सत्य, भाषा, संवेदना, विचार आ रचनात्मक सामर्थ्य प्रमाण होइत अछि। साहित्यकेँ जयकार करैबला भीड़सँ बेसी एहेन पाठक चाही, जे ओकरा धियानसँ पढ़ए आ निष्पक्षतासँ परखए।

रचनाकार अपन कर्मसँ बढ़ैत-घटैत अछि। ओकर पैघ नाम, पुरस्कार, पद, जाति, संस्था वा साहित्यिक सम्बन्ध कोनो कमजोर रचनाकेँ श्रेष्ठ नहि बना सकैत अछि। तहिना नव वा अपरिचित लेखकक नीक रचना ऐ कारणेँ छोट नहि भऽ सकैत अछि जे ओकर नाम अखन चर्चित नहि। प्रत्येक रचनाक मूल्यांकन ओकर अपन रचनात्मक सामर्थ्यक आधारपर होएब साहित्यिक न्यायक पहिल

शर्त अछि।

भक्तिभाव जखन सीमा पार करैत अछि, तखन असहमतिक लेल जगह क्रमशः संकुचित होइत जाइत अछि। कमजोर रचनाक कमीपर चर्चा नहि होइत, भाषाक अशुद्धि दोहरौल जाइत अछि आ विचारक सीमाकेँ प्रतिष्ठाक आड़िमे नुकौल जाइत अछि। धीरे-धीरे समीक्षा निष्पक्ष मूल्यांकनक बदला प्रशंसामे बदैल जाइत अछि आ प्रतिभाक स्थान परिचय, गुट वा प्रतिष्ठा लऽ लैत अछि। एहेन वातावरणमे साहित्य बाहरसँ चमकैत देखि पड़ि सकैत अछि, मुदा भीतरसँ ओकर आलोचनात्मक चेतना कमजोर पड़ैत जाइत अछि।

निर्भीक पाठक रचनासँ सोझ प्रश्न करैत अछि- ऐमे जीवनक कोन सत्य अभिव्यक्त भेल? केकर स्वर सुनाइत अछि आ केकर अनुभव छुटि गेल? भाषा विषयक अनुकूल अछि आकि सजावट धरि सीमित अछि? रचना पाठकक चेतना खोलैत अछि आकि पहिनेसँ बनल धारणाकेँ दोहरबैत अछि? ई प्रश्न विरोध लेल नहि, रचनाक वास्तविक सामर्थ्य आ सीमा दुनूकेँ चिन्हबाक लेल होइत अछि।

निर्भीकताक अर्थ उद्दण्डता नहि। आलोचना पाठ, तर्क आ प्रमाणपर आधारित रहबाक चाही। रचनाकारक अपमान, बेकतीगत आक्षेप वा गुटगत निन्दा समीक्षा नहि अछि। जे पाठक रचनाक गुणकेँ सम्मानसँ स्वीकार करैत आ ओकर सीमापर स्पष्ट बात कहैत अछि, सएह रचनाकारक सच्चा सहयोगी अछि। फोकला प्रशंसा किछु काल सन्तोष दऽ सकैत अछि, मुदा इमानदार आ तर्कपूर्ण असहमति लेखककेँ अपन रचनापर फेरसँ विचार करबाक अवसर दैत अछि।

रचनाकारकेँ सेहो एहेन पाठकक आवश्यकता बुझबाक चाही। प्रशंसकसभसँ घेराएल लेखक धीरे-धीरे अपन सीमाकेँ देखब छोड़ि सकैत अछि। जखन ओ प्रश्न सुनैत अछि, असहमतिक कारण बुझैत अछि आ अपन रचनाकेँ पुनः परखैत अछि, तखन ओकर दृष्टि आरो व्यापक बनैत अछि। पाठकक स्वतंत्रता रचनाकारक स्वतंत्रताक विरोध नहि; ओ स्वस्थ साहित्यिक संवाद आ रचनात्मक विकासक आधार अछि।

समाजसँ सटल साहित्य तखने जीवन्त शक्ति बनत, जखन समाज ओकर भक्त नहि, सजग सहभागी पाठक बनत। जे पाठक प्रेमसँ पढ़त, विवेकसँ परखत आ निर्भीकतासँ बाजत, सएह साहित्यकेँ जीवित राखत। साहित्यकारकेँ भगवान

बनाकऽ पाठकसँ दूर नहि करू। रचनाकेँ जीवनक बीच आनू, पढ़ू, प्रश्न करू, असहमति राखू आ ओकर मूल्य रचनाकारक नामसँ नहि, ओकर कर्म आ रचनात्मक सामर्थ्यसँ तय करू।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 15

लोभसँ मुक्त जीवनहि, कलमकेँ स्वतंत्र रखैत अछि

मण्डलजी लिखै छैथ-"लोभ आदमीकेँ सुगतिसँ हटा दुर्गतिक बाट धड़ा दइए, तँए लोभसँ परहेज करैत अपन स्वतंत्र जीवनक गठन करू, जइसँ निरविचारी बनि समाजोक सेवा आ साहित्योक सेवा करब।" (पृ. 98)

ई पंक्ति नव रचनाकार लेल सामान्य नैतिक उपदेश नहि, रचनात्मक स्वतंत्रताक व्यावहारिक सूत्र अछि। मण्डलजी लोभकेँ धनक इच्छा धरि सीमित नहि रखै छैथ। पद, पुरस्कार, प्रसिद्धि, मंच, प्रशंसा, संस्थागत कृपा आ प्रभावशाली लोकक निकटताक इच्छा सेहो लोभक रूप लऽ सकैत अछि। जखन ऐ सभक चाह लेखनक दिशा निर्धारित करए लगैत अछि, तखन कलमक स्वतंत्रता धीरे-धीरे घटए लगैत अछि।

लोभक पहिल प्रभाव लेखकक दृष्टिपर पड़ैत अछि। ओ सत्य देखितो सोचए लगैत अछि जे ई बात कहलासँ के अप्रसन्न हएत, कोन अवसर छुटि जाएत वा कोन संस्था दूरी बना लेत। फलतः किछु बात बढ़ाकऽ कहल जाइत अछि, किछु अधखड़ुआ छोड़ि देल जाइत अछि आ किछु सत्य चुप्पीमे दबा देल जाइत अछि। कलम चलैत रहैत अछि, मुदा ओकर दिशा भीतरक विवेक नहि, बाहरी लाभ तय करए लगैत अछि।

सम्मान वा पुरस्कार स्वीकार करब अपने-आपमे लोभ नहि। रचनाकारक श्रमकेँ मान्यता भेटब नीक अछि आ रचनाक व्यापक पाठक धरि पहुँचब सेहो आवश्यक। समस्या तखन उत्पन्न होइत अछि, जखन मान्यता सृजनक परिणाम रहबाक बदला सृजनक लक्ष्य बनि जाइत अछि। तखन लेखक जीवनक प्रश्नसँ बेसी ओइ लोकक रुचि बुझए लगैत अछि, जेकर हाथमे पुरस्कार, मंच वा स्वीकृतिक निर्णय अछि। एहेन स्थितिमे रचनाकारक नजैर समाजसँ हटिकऽ लाभक स्रोत दिस जाए लगैत अछि।

स्वतंत्र जीवनक गठनक अर्थ गरीबीक महिमामण्डन नहि। रचनाकारोकेँ

परिवार, जीविका, स्वास्थ्य आ सामाजिक दायित्व अछि। स्वतंत्रताक अर्थ अपन आवश्यकता आ आकांक्षाक बीच विवेकपूर्ण सीमा बनौने रहब, श्रमसँ जीविका चलाएब आ एतेक आत्मबल अर्जित करब अछि जे अनुचित लाभक सोझाँ 'नहि' कहल जा सकए। जेकर जीवन पूर्णतः कृपापर निर्भर अछि, ओकर विचारक स्वतंत्रता निरन्तर संकटमे रहैत अछि।

"निरविचारी" बनबाक आशय पक्षपात, लोभ आ निजी लाभक गणनासँ मुक्त भऽ निष्पक्ष विचार करब अछि। समाजक सेवा तखने सम्भव अछि, जखन लेखक कमजोर, उपेक्षित आ कतियाएल लोकक सत्य बिना डरे कहि सकए। साहित्यक सेवा तखने सम्भव अछि, जखन ओ मित्रक कमजोर रचनाकेँ मित्रताक कारण श्रेष्ठ नहि कहए आ विरोधीक नीक रचनाकेँ वैमनस्यक कारण अस्वीकार नहि करए। साहित्यिक न्याय अपन-पराया नहि, रचनाक गुण-दोष देखैत अछि।

भूमण्डलीकरण आ डिजिटल प्रचारक समयमे लोभक रूप आरो सूक्ष्म भेल अछि। पाठक-संख्या, पसिन, सामग्री साझी कएल जाएब, दृश्यता आ तत्काल चर्चाक दबाव रचनाकारकेँ जल्दी-जल्दी लिखबाक लेल प्रेरित करैत अछि। मुदा लोकप्रियता आ साहित्यिक मूल्य एक्के वस्तु नहि। जे सामग्री एक दिनमे हजारो लोक धरि पहुँचैत अछि, से आवश्यक नहि जे दीर्घकाल धरि लोकक चेतनामे सेहो बँचल रहए। साहित्यक स्थायी मूल्य तत्काल प्रतिक्रियासँ नहि, ओकर जीवन-सत्य, मानवीय संवेदना आ रचनात्मक सामर्थ्यसँ बनैत अछि।

साहित्यिक संस्थासभक दायित्व सेहो अछि जे लेखककेँ लोभ आ निर्भरताक जालमे नहि धकेलए। अवसरक स्पष्ट नियम हो, रचनाक मूल्यांकन रचनाक गुण आ साहित्यिक कसौटीक आधारपर हो आ पुरस्कार वा मंच बेकतीगत निष्ठाक साधन नहि बनए। पाठक सेहो प्रसिद्धिक चमकक बदला रचनाक भीतरक श्रम, सत्य आ मानवीय मूल्यकेँ महत्त्व देत, तखन स्वतंत्र लेखनक स्वस्थ वातावरण बनत।

लोभसँ मुक्त जीवनहि कलमकेँ स्वतंत्र रखैत अछि। जेकर इच्छा ओकर विवेकपर शासन नहि करैत, सएह सत्यक पक्षमे निर्भीकतासँ ठाढ़ रहि सकैत अछि। स्वतंत्र जीवन, निष्पक्ष विचार आ लोकहितसँ जुड़ल सृजन, ई तीनू

मिलिकऽ साहित्य-सेवाकेँ नैतिक शक्ति दैत अछि। कलमक असली प्रतिष्ठा ऐ बातमे अछि जे ओ लाभक सोझाँ नहि झुकए, सत्य, न्याय आ मनुष्यता संग चलए।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 16

सम्मानपत्रसँ साहित्यक दायित्व पूरा नहि होइत

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "अपन भाषा, अपन साहित्य आ संस्कृतिकेँ परिमार्जित करैत हमहीं अहाँ ने ऐगला पीढ़ी तक पहुँचेबै।" (पृ. 28)

ई पंक्ति साहित्यिक दायित्वक गहींर अर्थ खोलैत अछि। भाषा, साहित्य आ संस्कृतिकेँ ऐगला पीढ़ी धरि पहुँचाएब लेखकक काज मात्र नहि। ई पाठक, आलोचक, सम्पादक, प्रकाशक, संस्था आ समाज, सभक साझी जिम्मेदारी अछि। सम्मान तखन सार्थक होइत अछि, जखन ओ दायित्वमे बदलैत अछि।

सम्मान देब गलत नहि। सम्मान आवश्यक सेहो अछि। मुदा सम्मान जँ कागत, माला, मंच आ औपचारिक घोषणा धरि सीमित रहि जाए, तँ साहित्यक वास्तविक काज अधखड़ुआ रहि जाइत अछि। कोनो लेखककेँ सम्मानित करब आ ओकर साहित्यकेँ पढ़ब, पढ़ाएब, समझब, बुझब, चर्चा करब आ पाठक धरि पहुँचाएब, दुनू अलग बात छी।

संस्था जँ नीक साहित्यकेँ प्रोत्साहन देबाक बात करैत अछि, तँ ओकर दायित्व सम्मानपत्र देब धरि सीमित नहि होइत। ओकरा पाठ-चर्चा करए पड़त, गोष्ठी करए पड़त, आलोचनात्मक लेखनकेँ बढ़ाबए पड़त, नव पाठक बनेबाक काज करए पड़त। विद्यालय, कॉलेज, पुस्तकालय आ सामाजिक माध्यम धरि साहित्यक जीवित संवाद पहुँचाएब सेहो संस्थाक जिम्मेदारी अछि।

समस्या तखन गम्भीर होइत अछि, जखन साहित्यिक संस्था सेहो जाति, खेमा, परिचय, सुविधा आ प्रतिष्ठाक दबावमे अपन दायित्व बिसैर जाइत अछि। तखन सम्मान साहित्यक मूल्यांकन नहि रहैत, सामाजिक औपचारिकता बनि जाइत अछि। जीवित साहित्यक जगह कागतक प्रमाण रहि जाइत अछि।

मण्डलजीक साहित्य सम्मानक वस्तु मात्र नहि, अध्ययनक विषय सेहो अछि। ओ समाजक छुटल जीवन, श्रम, शोषण, असमानता, महिला, किसान,

मजदूर, पिछड़ल-पछुआएल लोक आ हाशियाक संघर्षकेँ साहित्यक केन्द्रमे अनैत अछि। एहेन साहित्यक सम्मान तखन पूर्ण होएत, जखन संस्था ओकर प्रश्नकेँ समाजक बीच लऽ जाएत।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे भाषा, साहित्य आ संस्कृति ऐगला पीढ़ी धरि अपने-आप नहि पहुँचैत। ओकरा पहुँचाबए पड़ैत अछि। आ जे संस्था ई काज नहि करैत, ओकर सम्मान अधखड़ुआ रहि जाइत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 17

रचनाक मूल्य प्रचारमे नहि, जीवन-दिशामे अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "प्रचार कम हुअए आकि बेसी, मूल प्रश्न अछि जे हमर रचनासँ केते गोटेकेँ जीवन-दिशा भेटलैन।" (पृ. 73)

ई पंक्ति मण्डलजीक रचनाकार-सोभावक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिचय दैत अछि। ओ साहित्यक मूल्य प्रचार, पुरस्कार, चर्चा, बिक्री, मंचीय प्रतिष्ठा वा संस्थागत घोषणासँ नहि नापै छैथ। हुनका लग रचनाक असली कसौटी ई अछि जे ओ पाठकक भीतर केतेक चेतना जगौलक, केतेक नैतिक साहस देलक आ जीवनकेँ देखबाक केतेक दिशा देलक।

साहित्यक संसारमे प्राय: प्रचारकेँ उपलब्धि बुझि लेल जाइत अछि। कोन पोथीक केते चर्चा भेल, कोन लेखकक केते सम्मान भेल, कोन नाम केते मंचपर सुनाइत अछि, ई सभ देखल जाइत अछि। मुदा मण्डलजी ऐ बाहरी गिनतीसँ आगू बढ़ि पुछै छैथ जे रचना मनुक्खक जीवनमे की बदैल सकल?

ई प्रश्न सरल नहि अछि। रचना तखन जीवन-दिशा दैत अछि, जखन ओ पाठककेँ आनन्दसँ आगू बढ़ि दृष्टि दैत अछि। जखन ओ ओकरा भीतर प्रश्न जगबैत अछि। जखन ओ ओकरा अपन समय, समाज, अन्याय, श्रम, भाषा, संस्कृति आ मनुक्खक गरिमाक सम्बन्धमे नव ढंगसँ सोचबाक प्रेरणा दैत अछि।

मण्डलजीक साहित्यक असली शक्ति यएह अछि जे ओ प्रचारक चमकसँ हटि जीवनक कठोर धरातलपर ठाढ़ देखाइत अछि। ओ पाठककेँ सुरक्षित भावुकता नहि दइत। ओ ओकरा जीवनक कठोर सचसँ मिलबैत अछि। किसानक कष्ट, महिलाक पीड़ा, मजदूरक श्रम, पिछड़ल-पछुआएल समाजक

अपमान, अभाव, दहेज, शिक्षा-खर्च, सामाजिक दबाव आ मनुक्खक आत्मसम्मान, ई सभ हुनकर साहित्यक भीतर जीवन-दिशाक प्रश्न बनि उठैत अछि।

रचना जँ पाठक लेल पढ़िकऽ राखि देबाक वस्तु रहि जाए, तँ ओकर प्रभाव सीमित रहैत अछि। मुदा जँ रचना पाठकक जीवनमे उतैर जाए, ओकर सोचक हिस्सा बनि जाए, ओकर साहसकेँ जगबए, ओकर सामाजिक दृष्टि खोलए, तँ ओ रचना प्रचारसँ बेसी पैघ अर्थ ग्रहण करैत अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे साहित्यक असली सफलता ताली आकि थोपरीक आवाजमे नहि, जीवन-दिशामे अछि। जे रचना मनुक्खकेँ अप्पन जीवनक अर्थ बुझबैत अछि, समाजक अन्याय चिन्हबैत अछि आ गरिमासँ जीबाक साहस दैत अछि, सएह रचना दीर्घ काल धरि जीवित रहैत अछि।

प्रचार समयक शोर छी। जीवन-दिशा साहित्यक स्थायी प्रकाश छी। मण्डलजीक रचनाकारक विशेषता ई अछि जे ओ शोरक नहि, चेतनाक साहित्यकार छैथ।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 18

वर्तमानक कर्मे भविष्यक साहित्य बनबैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "वर्त्तमानमे जीबै छी तँए वर्त्तमानक जे क्रिया अछि ओ जेहेन भविष्य निरमाबए।" (पृ. 101)

ई पंक्ति मण्डलजीक समय-बोधक गहींर सूत्र अछि। ओ भविष्यक सपना देखै छैथ, मुदा खाली कल्पनामे नहि। हुनका लग भविष्य कोनो दूरमे टाँगल इच्छा नहि, वर्तमानक कर्मसँ बनैबला सामाजिक यथार्थ अछि। जे आइ करब, सएह काल्हिक दिशा बनत।

बहुत बेर साहित्य भविष्यक नामपर खाली घोषणामे बदैल जाइत अछि। अतीतक गौरव आ भविष्यक सपना सेहो कखनो-कखनो वर्तमानक कठोर प्रश्नसँ बचबाक साधन बनि जाइत अछि। मुदा मण्डलजी वर्तमानमे जीबैबला रचनाकार छैथ। ओ अपन समयक समाज, भाषा, संस्कृति, शोषण, अभाव, संघर्ष आ मनुक्खक गरिमाक प्रश्नसँ आँखि नहि चोरबै छैथ।

वर्तमानकेँ देखब आसान नहि। वर्तमानमे असुविधा अछि, प्रश्न अछि, दोष

अछि, दबाव अछि, अन्याय अछि। वर्तमानकेँ देखलासँ समाजक चमकदार चेहरा टुटैत अछि। अहूसँ कठिन बात ई अछि जे वर्तमानक भीतर रचनाकारक अपन जीवन-क्रिया सेहो संलग्न रहैत अछि। नीक बात बाजि देब आसान अछि, सुन्दर वाक्य लिखि देब सेहो आसान अछि, मुदा ओही बातकेँ काजक बेरमे, सम्बन्धमे आ बेवहारमे उतारब कठिन अछि। एक-सँ-एक रचनाकार लिखै बेरमे प्रगतिशीलता लिखि लइ छैथ, मुदा हुनकर बेवहारमे कखनो-कखनो वएह पुरान वर्चस्व, सुविधा, जातिक दूरी आ आत्मकेन्द्रितता देखाइत अछि। तँए वर्तमानक सच देखब माने समाजक चेहरा मात्र नहि, अपनो चेहरा देखब। मुदा जे लेखक वर्तमानक सच नहि देखत, ओ भविष्यक प्रामाणिक साहित्य केना रचत?

मण्डलजीक साहित्य भविष्यकेँ वर्तमानक जमीनपर ठाढ़ करैत अछि। हुनका लग किसानक आजुक चिन्ता, महिलाक आजुक पीड़ा, मजदूरक आजुक श्रम, पिछड़ल-पछुआएल समाजक आजुक संघर्ष, मैथिलीक आजुक स्थिति आ समाजक आजुक विग्रह, सभ भविष्यक साहित्यिक आधार अछि।

वर्तमानक क्रिया भविष्य बनबैत अछि। जँ आइ साहित्य हाशियाक आवाज सुनत, तखन भविष्यक साहित्य बेसी लोकतान्त्रिक होएत। जँ आइ भाषा लोकजीवनसँ जुड़त, तखन भविष्यक भाषा मजगूत होएत। जँ आइ रचनाकार समाजक जड़ि धरि पहुँचत, तखन भविष्यक आलोचना गहींर होएत।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे रचनाकारक काज भविष्यक कल्पना करब मात्र नहि, वर्तमानक जिम्मेदारी उठाएब अछि। वर्तमानमे जे अन्याय अछि, ओकरा चिन्हू। वर्तमानमे जे जीवन संघर्षरत अछि, ओकरा आवाज दिअ। वर्तमानमे जे समाज दिशाहीन अछि, ओकरा दिशा देखबैले साहित्य रचू।

मण्डलजी भविष्यक साहित्यकार ऐ लेल छैथ जे ओ वर्तमानसँ मुँह नहि मोड़ै छैथ। हुनकर साहित्य काल्हुक बाट आजुक माटिमे खोजैत अछि आ वर्तमानक संघर्षकेँ भविष्यक दिशामे बदलैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 19

जे माँगै नहि, दइ छैथ, ओकर हिसाब साहित्य रखैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "तइमे अप्पन कमसँ कम दू ने ते तीन पोथीक लोकार्पण होइए। साएसँ ऊपर अप्पन प्रकाशित रचना

(पोथी) अछि, जे कथा उपन्यास, कविता, नाटक, एकांकी इत्यादि विधामे अछि।" (पृ. 103-104)

ई कथन मण्डलजीक साहित्यिक साधनाक एकटा सादा, मुदा असाधारण चित्र सामने अनैत अछि। ऐमे दम्भ, आत्म-प्रचार वा स्वीकृतिक आग्रह नहि अछि। काजक सहज सूचना अछि। नियमित गोष्ठी होइत अछि, पोथीक लोकार्पण होइत अछि, अनेक विधामे लेखन होइत अछि आ रचनाक क्रम निरन्तर आगू बढ़ैत अछि। ऐ सादगीक भीतर एकटा पैघ साहित्यिक सत्य नुकाएल अछि: जे रचनाकार माँगै नहि, दइ छैथ, ओकर हिसाब साहित्य अपने रखैत अछि।

मण्डलजी पोथी लिखिकऽ चुप नहि बैस जाइ छैथ। हुनका लग साहित्य लिखिकऽ आ बाजिकऽ छोड़ि देबाक विषय नहि, करिकऽ देखेबाक कर्म अछि। एकटा होइए लिखिकऽ-बाजि कऽ अपन दायित्व पूरा मानि लेब, दोसर होइए साहित्यक लेल जमीनपर नियमित काज करब। मण्डलजी दोसर बाट चुनने छैथ। 2008 ईस्वीसँ प्रत्येक त्रैमासिक 'सगर राति दीप जरय' आयोजनमे ओ संध्या छह बजेसँ भिनसर छह बजे धरि भरि राति जागिकऽ रचनाकार, पाठक आ साहित्य-प्रेमीसभक संग बैसैत आबि रहल छैथ। अहू उमेरमे ओ ऐ साहित्यिक कर्मक नियमित निर्वहन करै छैथ।

ई काज ओ केकरोपर उपकार करबाक भावसँ नहि करै छैथ। हुनका लग ई अपन साहित्यिक कर्म आ जीवनक सोभाविक हिस्सा अछि। रचना लिखब, पोथी प्रकाशित करब, ओकरा पाठक धरि पहुँचाएब, चर्चा आ संवादक वातावरण बनाएब, नव पाठक जोड़ब आ नव रचनाकारकेँ अवसर देब, ई सभ हुनकर साहित्यिक जीवनक एक-दोसरसँ जुड़ल पक्ष अछि। तँए हुनकर कर्म लेखन धरि सीमित नहि, साहित्यक सामाजिक विस्तारसँ सेहो जुड़ल अछि।

'सगर राति दीप जरय' साहित्यिक आयोजन मात्र नहि, सोल्हन्नी खुला मंच अछि। ऐठाम प्रवेशक आधार जाति, वर्ग, गुट वा बेकतीगत निकटता नहि, रचना आ साहित्यक प्रति रुचि अछि। जखन अनेक मंच नियम, गुट, जाति आ वर्गक घेरामे बन्न भऽ जाइत अछि, तखन ई मंच नव रचनाकार, पाठक आ भिन्न विचारक लोककेँ एकठाम बैसबाक अवसर दैत अछि। ऐठाम पोथीक लोकार्पण होइत अछि, रचना सुनल जाइत अछि, विचार राखल जाइत अछि आ साहित्यक

सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूपमे लोकसँ जुड़ैत अछि।

देबाक संस्कार बहुत गहींर होइत अछि। कियो प्रतिष्ठा माँगैत अछि, कियो पुरस्कार, स्थान वा स्वीकृतिक अपेक्षा रखैत अछि। मुदा किछु रचनाकार चुपचाप अपन काज करैत रहैत अछि। ओ अपन शब्द, समय, अनुभव, श्रम आ साधन धरि साहित्यकेँ दइ छैथ। एहेन रचनाकारक मूल्यांकन सामान्य मापदण्डसँ नहि कएल जा सकैत।

मण्डलजी केकरोसँ ई नहि कहै छैथ जे हमरा मानू। ओ अपन काज करैत रहै छैथ। जे समाज छुटि गेल, ओकरा लिखै छैथ। जे पात्र कात छल, ओकरा केन्द्रमे अनै छैथ। जे जीवन उपेक्षित छल, ओकरा साहित्यिक गरिमा दइ छैथ। जे अनुभव मंच धरि नहि पहुँचै छल, ओकरा कथा बनाकऽ पाठकक सोझाँ ठाढ़ करै छैथ।

ई देब पोथी देब मात्र नहि। ई समाजकेँ नव नजैर देब अछि। पाठककेँ लोकजीवनक भीतर लऽ जाएब अछि। साहित्यक विषय-सीमाकेँ विस्तार देब अछि। मैथिली भाषाकेँ गामक माटि, खेतक पसेना, महिलाक अनकहल जीवन-अनुभव, किसानक चिन्ता आ उपेक्षित लोकक स्वाभिमानसँ जोड़ब अछि। एहेन रचनाकारक साहित्य पृष्ठक संख्यासँ नहि, जीवनक स्पर्शसँ नापल जाएत।

कएक बेर समाज तात्कालिक चमकमे उलैझ जाइत अछि। जे मंचपर बेसी देखाइत अछि, ओकरा पैघ बुझि लैत अछि। जे ऊँच आवाजमे बाजैत अछि, ओकरा निर्भीक मानि लैत अछि। जे संस्था आ प्रभावशाली लोकसँ सम्बन्ध बनबैत अछि, ओकरा प्रतिष्ठित बुझि लैत अछि। मुदा साहित्यक गहींर हिसाब अलग होइत अछि। साहित्य देखैत अछि जे केतेक निरन्तर लिखल गेल, कोन जीवनकेँ लिखल गेल, केकरा आवाज देल गेल, कोन समाजकेँ केन्द्रमे आनल गेल आ पाठकक भीतर कोन प्रश्न जगौल गेल।

मण्डलजीक रचना साधारण लोकक जीवनकेँ साहित्यिक गरिमा दइ छैथ। हुनकर साहित्य एहेन दर्पण अछि, जइमे श्रमक रेखा, अभावक चिन्ता, सम्बन्धक टुटन, जातीय चोट, महिलाक संघर्ष, किसानक धैर्य आ जीवनक लड़ाइ साफ देखाइत अछि। ओ पाठककेँ जीवनक ओ पक्ष देखबैत अछि, जे स्थापित साहित्यिक छविमे कात रहि जाइ छल।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे साहित्यक असली दान शब्दक दान

भरि नहि। असली दान अछि जीवनकेँ पढ़बाक नजैर देब, समाजक कात कएल लोककेँ साहित्यक भीतर स्थान देब, भाषाकेँ लोकक दुःख-सुख, श्रम, संघर्ष, स्मृति आ स्वाभिमानकेँ समेट अभिव्यक्त करबाक सामर्थ्य देब आ साहित्यिक संवाद लेल खुला धरातल तैयार करब। जखन रचनाकार ई सभ दए रहल हो, तखन ओकर प्रतिष्ठाक हिसाब तात्कालिक प्रशंसासँ नहि, साहित्यक दीर्घ स्मृतिसँ होइत अछि।

जे माँगै नहि, दइ छैथ, ओकर हिसाब साहित्य रखैत अछि। समय कखनो-कखनो देरी करैत अछि, मुदा दीर्घ कर्मक उजासकेँ सदिखन नुकौने नहि राखि सकैत।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 20

संघर्ष जखन साहित्य बनैत अछि

समाज प्रेमक बाट पबैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "जमीनी संघर्षक उपरान्त वैचारिक संघर्ष जोर पकड़ैत अछि तँए लिखब अनिवार्य भऽ गेल।" (पृ. 75)

ई पंक्ति मण्डलजीक रचनात्मक यात्राक मूल प्रेरणाकेँ खोलैत अछि। हुनकर लेखन सुख-सुविधाक कोठरीमे बैसकऽ बनौल कोनो साहित्यिक योजना नहि अछि। ओ जीवनक लमहर संघर्षसँ जन्मल वैचारिक अनिवार्यता अछि। पहिने माटि, गाम, खेत, समाज, अन्याय, दायित्व आ मनुक्खक दुःख-सुख हुनकर अनुभवमे उतरैत रहल। समयक संग ई अनुभव प्रश्न आ विचारमे बदलैत गेल आ तखन लेखन हुनका लेल विकल्प नहि, आवश्यक कर्म बनि गेल।

"जमीनी संघर्ष" ऐठाम जमीनक लड़ाइ धरि सीमित नहि। ई जीवनक वास्तविक धरातलपर ठाढ़ संघर्ष अछि। समाजमे पसरल असमानता, अन्याय, श्रमक अवमूल्यन, किसान-बोनिहारक पीड़ा आ पछुआएल लोकक अपमानकेँ मण्डलजी दूरसँ नहि देखलैन। ओ ओइ जीवनक बीच रहला, ओकर संघर्षमे सहभागी बनला आ ओकर माटि-पानि हुनकर अनुभवक हिस्सा बनल। अही प्रत्यक्ष सामाजिक अनुभवसँ हुनकर दृष्टि बनल आ विचारक दिशा निर्धारित भेल।

जखन मनुक्ख संघर्षकेँ बाहरसँ देखैत अछि, तखन ओ ओकर विवरण

प्रस्तुत करैत अछि। मुदा जखन संघर्ष ओकर अनुभव, चेतना आ जीवन-दृष्टिमे समा जाइत अछि, तखन ओ साहित्यक रूप ग्रहण करैत अछि। मण्डलजीक साहित्य अही दोसर कोटिक साहित्य अछि। ओ देखल जीवन, भोगल समय, बुझल समाज आ मनुक्खक पक्षमे ठाढ़ रहबाक साहित्य अछि। तँए हुनकर रचना कथा मात्र नहि, अपन समय आ समाजक प्रामाणिक साक्ष्य सेहो अछि।

मुदा संघर्षक साहित्य हेबाक अर्थ कटुता वा घृणाक साहित्य होएब नहि। असली साहित्य केवल घाव गिनैत नहि, ओ घावक कारण बुझैत आ ओकरा भरबाक सामाजिक बाट सेहो खोजैत अछि। मण्डलजी अन्यायकेँ सामने अनै छैथ, बेवस्थापर प्रश्न उठबै छैथ आ असमानताक विरोध करै छैथ, मुदा मनुक्खक प्रति प्रेम, करुणा आ सम्मानक भाव नहि छोड़ै छैथ। हुनकर संघर्ष मनुक्खकेँ मनुक्खक विरुद्ध नहि, अन्याय आ अमानवीयताक विरुद्ध ठाढ़ करैत अछि।

प्रेम आ भायचाराक अर्थ अन्यायपर चुप रहब नहि। असली भायचारा तखन अछि, जखन मनुक्ख दोसराक दुःखकेँ अपन दुःख बूझए, अपमानितक गरिमाक पक्षमे ठाढ़ हुअए आ असमान सम्बन्धकेँ न्यायपूर्ण बनेबाक प्रयास करए। न्यायक माँग प्रेमक विरोध नहि, बल्कि प्रेमक सामाजिक विस्तार अछि। मण्डलजीक साहित्यमे प्रेम भावुकता नहि, मनुक्खक सम्मान आ समानताक पक्षमे सक्रिय चेतना बनिकऽ अबैत अछि।

जमीनी संघर्ष मनुक्खकेँ कठोर बना सकैत अछि। मुदा जँ ओकरा भीतर करुणा, विवेक, प्रेम आ न्यायक आकांक्षा बँचल रहए, तँ वएह कठोर अनुभव सामाजिक परिवर्तनक तागत बनैत अछि। मण्डलजीक लेखनमे ई तागत बेर-बेर देखाइत अछि। ओ दोष चिन्है छैथ, मुदा सम्बन्धक सम्भावना नहि छोड़ै छैथ। ओ संघर्षकेँ घृणाक दिशामे नहि, न्याय, समानता, प्रेम आ सद्भावना दिस मोड़ै छैथ।

वैचारिक संघर्ष जमीनी संघर्षसँ अलग नहि, ओकर ऐगला आ दीर्घजीवी रूप अछि। खेत, समाज, सभा, आन्दोलन आ लोकसेवामे अर्जित अनुभव जखन विचारमे बदलैत अछि, तखन ओ तत्कालीन घटनाक सीमा पार करैत समाजक स्थायी प्रश्न बनि जाइत अछि। कागतपर उतरल विचार समय आ स्थानक सीमा पार करिकऽ नव पीढ़ी धरि पहुँचैत अछि। ऐ अर्थमे मण्डलजीक लेखन हुनकर जमीनी संघर्षक वैचारिक आ मानवीय विस्तार अछि।

हुनकर साहित्यक गरिमा अहीठाम अछि जे ओ जीवनक संघर्षकेँ रोष

धरि सीमित नहि रखैत। ओ दुःखक वर्णन कऽ कऽ नहि रुकैत, बल्कि ओकर पाछाँक कारण, सामाजिक असमानता, मनुक्खक आत्मसम्मान आ परिवर्तनक सम्भावनाकेँ सामने अनैत अछि। हुनकर साहित्य समाजकेँ तोड़बाक नहि, ओकर भीतरी ओझरीकेँ सोझरेबाक साहित्य अछि। ओ प्रश्न उठबैत अछि, मुदा प्रश्नक संग न्यायपूर्ण भविष्य आ मानवीय सम्बन्धक बाट सेहो खोजैत अछि।

असली साहित्य ओ अछि जे मनुक्खक दुःख बुझैत आ ओकरा मनुक्खसँ जोड़ैत अछि। असली साहित्यकार ओ अछि जे संघर्षक कठोरतामे सेहो प्रेम, भायचारा आ मानवीय गरिमाक पक्ष नहि छोड़ैत अछि। मण्डलजीक रचनात्मक यात्रा बतबैत अछि जे जीवनक भीतरसँ फूटल लेखन अनुभवसँ तपैत, संघर्षसँ धार पबैत आ प्रेमसँ मानवीय बनैत अछि। संघर्ष जखन अही रूपमे साहित्य बनैत अछि, तखन समाज घृणाक नहि, प्रेम आ भायचाराक बाट पबैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 21

लोक पढ़ैत अछि, मुदा बजैत किए नहि?

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "बीच बजैक अवसर भेटल। तँए अपन विचारकेँ सोझरबैत- 'मिथिला जीवन'केँ आधार बना अपन विचार राखब।" (पृ. 47)

ई पंक्ति कोनो कार्यक्रममे बजबाक मात्र औपचारिक सूचना नहि अछि। ऐमे मण्डलजीक गहींर सामाजिक संस्कार बजैत अछि। अवसर भेटल तँ चुप नहि रहू। अपन विचारकेँ सोझराउ। जीवनकेँ आधार बनाउ आ समाजक बीच अपन बात राखू।

आजुक समयमे सामाजिक माध्यम लोककेँ पढ़बाक नव जगह दऽ रहल अछि। लोक पोस्ट पढ़ैत अछि, विचार देखैत अछि, सहमत होइत अछि, असहमत सेहो होइत अछि, मुदा बहुत बेर सार्वजनिक रूपसँ किछु नहि बजैत। पढ़ल जाइत अछि, मुदा प्रतिक्रिया नहि देल जाइत। देखल जाइत अछि, मुदा बात आगू नहि बढ़ैत।

ई चुप्पी साधारण नहि अछि। ई केवल आलस्यक बात सेहो नहि। ऐ चुप्पीक पाछाँ समाजक डर अछि, सम्बन्धक दबाव अछि, जातीय-सामाजिक समीकरण अछि, निजी सुविधा अछि आ बहुत बेर अपन विचार सार्वजनिक

करबाक हिम्मतक कमी सेहो अछि। लोक सोचैत अछि- बाजब तँ के की बुझत? के नाराज हएत? सम्बन्धपर की असर पड़त? समाजक कोन खेमामे हमरा राखि देत?

मुदा विचार पढ़ि कऽ चुप रहब धीरे-धीरे समाजक चेतनाकेँ कमजोर करैत अछि। जँ गलत बातपर चुप्पी रहत, तँ गलत बात बेसी निर्भीक हएत। जँ सही विचारपर चुप्पी रहत, तँ सही विचार असगर पड़ि जाएत। समाजक भीतर विचार तखनहि चलैत अछि, जखन पाठक केवल पाठक नहि रहैत, सहभागी बनैत अछि।

मण्डलजीक संकेत ऐठाम महत्त्वपूर्ण भऽ उठैत अछि। ओ विचारकेँ जीवनसँ जोड़ै छैथ। जँ विचारक जड़ि जीवनक अनुभवमे अछि, तँ ओकरा समाजक बीच पहुँचब जरूरी अछि। जे बात समाजक जीवनसँ जुड़ल अछि, ओकरा पढ़ि कऽ भीतर राखि देब पर्याप्त नहि। ओकरापर चर्चा हेबाक चाही, प्रश्न उठेबाक चाही, समर्थन वा असहमति व्यक्त हेबाक चाही।

सामाजिक माध्यममे प्रतिक्रिया देब केवल “लाइक” करब नहि अछि। प्रतिक्रिया देब माने अपन चेतनाक उपस्थिति दर्ज करब। माने ई कहब जे हम पढ़ि रहल छी, सोचि रहल छी आ समाजक प्रश्नसँ निरपेक्ष नहि छी। जँ हम नहि बाजब, तँ समाजक सार्वजनिक जगह खाली नहि रहत। ओतए ओइ आवाजक कब्जा भऽ जाएत, जे भ्रम, डर, दूरी आ अन्धविश्वास पसारैत अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे विचारक सम्मान केवल पढ़बाक माध्यमसँ नहि होइत। विचारकेँ समाजक बीच चलबैयो पड़ैत अछि। पढ़ब चेतनाक आरम्भ छी, मुदा बाजब चेतनाक सामाजिक स्वीकार छी।

लोक पढ़ि रहल अछि, ई नीक बात अछि। मुदा पढ़ि कऽ चुप रहि जाएब समाज लेल चिन्ताक बात अछि। कारण, केवल पढ़निहार पाठक समाजक दिशा नहि बदलैत। समाजक दिशा ओ पाठक बदलैत अछि, जे पढ़ैत अछि, सोचैत अछि आ समय आबि गेलापर अपन बात स्पष्ट रूपसँ बजैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 22

लोक धरि नहि पहुँचल साहित्य, सीमित रहि जाइत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "सभ जिला, सभ क्षेत्रमे अभियान पहुँचाएल जाए।" (पृ. 30)

ई पंक्ति साहित्यकेँ कोठरीसँ बाहर निकालि समाजक बीच लऽ जेबाक आग्रह करैत अछि। साहित्यक काज मात्र लिखल आ छपल रहि जाएब नहि। ओकरा लोक धरि पहुँचबाक चाही। जे साहित्य जीवनक दुःख, संघर्ष, श्रम, अन्याय, असमानता आ बदलावक आकांक्षासँ जन्मैत अछि, ओकर असली जगह पाठकक मन आ समाजक विचारमे होइत अछि।

पोथी छपि गेल, नाम दर्ज भऽ गेल, किछु लोक पढ़ि लेलैन, एतबेसँ साहित्यक यात्रा पूरा नहि होइत। जँ ओ विचार गाम-घर, विद्यालय, कॉलेज, पुस्तकालय, गोष्ठी, पाठक-समूह आ नव पीढ़ीक संवाद धरि नहि पहुँचत, तँ ओकर प्रभाव सीमित रहि जाएत। मण्डलजी ऐठाम साहित्यकेँ अभियानक रूपमे देखै छैथ। अभियान माने निरन्तर काज, फैलाव, संवाद आ लोकक बीच पहुँचेबाक चेष्टा।

मण्डलजीक साहित्यक असली पहिचान यएह अछि जे ओ ओइ जीवनकेँ भाषा दैत अछि, जेकरा बहुत दिन धरि साहित्यक मुख्य धारासँ दूर राखल गेल। किसानक पसेना, मजदूरक श्रम, महिलाक पीड़ा, पिछड़ल-पछुआएल लोकक अपमान, दबल-कुचलल समाजक तिरोट, भूख, अभाव, शोषण आ संघर्ष, ई सभ हुनकर साहित्यमे प्रसंग मात्र नहि, केन्द्रक जीवन अछि। तँए एहेन साहित्यकेँ चुन्नटदार वाक्य वा प्रशंसाक भाषणमे नहि, लोक-पाठ आ सामाजिक चर्चामे उतरबाक चाही।

सभ जिला, सभ क्षेत्रमे अभियान पहुँचेबाक अर्थ अछि जे साहित्यक पाठ सीमित समूह धरि बन्न नहि रहए। एकर अंश पढ़ल जाए, चर्चा होए, प्रश्न उठौल जाए, लेख लिखल जाए, नव पाठक तैयार कएल जाए, विद्यार्थी धरि सामग्री पहुँचौल जाए आ सामाजिक माध्यमपर विचार-विस्तार कएल जाए। जे साहित्य लोकक जीवनसँ जन्मल अछि, ओकरा लोकक चेतना आ सामाजिक संवादक हिस्सा बनेबाक चाही।

ऐ बाटमे चुप्पी, उपेक्षा, खेमा, जातीय आग्रह आ सुविधाक देबार अवश्य

भेटत। कियो अनदेखी करत, कियो देरीसँ स्वीकार करत, कियो पढ़ने बिना राय बना लेत। मुदा साहित्यक जीवित काज अही देबालसभकेँ पार करब अछि। विचार जेतेक बेर पाठक धरि जाएत, ओतेक बेर ओकर सामाजिक उपस्थिति मजगूत होएत।

मान्यता दर्ज हेबासँ नहि बनैत। मान्यता तखन बनैत अछि, जखन साहित्य लोकक अनुभवक हिस्सा बनैत अछि। कागत सूचना देत, मुदा पाठक अर्थ देत। मंच परिचय देत, मुदा निरन्तर पाठ ओकरा जीवन देत। जे साहित्य समाजक भीतर उतरैत अछि, सएह समयक संग डटल रहैत अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे साहित्य रचना मात्र नहि, लोक-जागरणक प्रक्रिया सेहो अछि। ओकरा सभ जिला, सभ क्षेत्र आ सभ वर्ग धरि पहुँचाएब जरूरी अछि। जे साहित्य लोकक जीवनसँ उठल अछि, ओकर असली प्रतिष्ठा लोकेक बीच बनत।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 23

मैथिली साहित्यक लोकतंत्रीकरण अखन प्रतीक्षामे अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “आन भारतीय भाषाक साहित्यमे जे लोकतंत्रीकरण भेल, से मैथिली भाषा-साहित्यमे नहि भेल अछि, ओ अखन प्रतीक्षामे अछि।” (पृ. 29)

ई पंक्ति मैथिली साहित्यक वर्तमान आ भविष्य दुनूपर गम्भीर विचार करबाक लेल बाध्य करैत अछि। मण्डलजी ऐठाम केवल साहित्यिक टिप्पणी नहि करै छैथ। ओ मैथिली साहित्यक भीतर प्रतिनिधित्वक प्रश्न उठबै छैथ। के बाजि रहल अछि? के सुनल जा रहल अछि? के साहित्यक केन्द्रमे अछि? आ के अखनो तक बाहर ठाढ़ अछि?

लोकतंत्रीकरणक अर्थ केवल ई नहि जे भाषा सभकेँ प्रिय हो। लोकतंत्रीकरणक अर्थ ई अछि जे साहित्यक दुआर समाजक सभ लोक लेल खुलए। किसान, मजदूर, महिला, दलित, पिछड़ल-पछुआएल समाज, बाढ़ि-सुखाड़ झेलैत लोक, गामक साधारण मनुक्ख, शहरक उपेक्षित जीवन, प्रवासी श्रमिक आ नव पीढ़ीक बेचैनी, सभक अनुभव साहित्यक केन्द्रमे आबए। साहित्य तखन लोकतान्त्रिक बनैत अछि, जखन ओ समाजक बहुसंख्य जीवनकेँ

सम्मानसँ अपनबैत अछि।

बहुत बेर भाषापर प्रेम रहैत अछि, मुदा भाषा केकर अनुभव बाजत, ऐ प्रश्नपर चुप्पी पसैर जाइत अछि। साहित्यमे सौन्दर्य रहैत अछि, मुदा समाजक असमानतापर गुम्मी लाधि दैत अछि। मंच सजैत अछि, मुदा हाशियाक आवाज ओतए स्थान नहि पबैत। ई स्थिति भाषा आ समाज दुनूक लेल नोकसानदेह अछि, कारण भाषा तखने सचमुच जीवित रहैत अछि, जखन ओ अपन लोकक सम्पूर्ण जीवन, संघर्ष आ अनुभवकेँ आवाज दऽ सकैत अछि।

ऐठाम मण्डलजीक दृष्टि बिल्कुल साफ अछि। जँ मैथिली साहित्यकेँ सच्चे अर्थमे व्यापक बनबाक अछि, तँ ओकरा लोकजीवनक पूरा विस्तारकेँ स्वीकार करए पड़त। केवल सजल-धजल भाषा, प्रसिद्ध नाम, परम्परागत विषय आ सीमित पाठक-वर्गसँ साहित्यक लोकतंत्रीकरण नहि होइत। लोकतंत्रीकरण तखन होइत अछि, जखन समाजक उपेक्षित जीवन, दबाएल अनुभव आ हाशियाक आवाज साहित्यक भीतर सम्मानसहित स्थान पबैत अछि।

असलमे साहित्यक लोकतंत्रीकरण समाजक लोकतंत्रीकरणसँ अलग नहि अछि। जइ समाजक बहुसंख्य लोकक जीवन साहित्यमे अनुपस्थित रहैत अछि, ओइ समाजक आत्मा सेहो अधखड़ुआ रहि जाइत अछि। जँ भाषामे ओ लोक नहि बाजत जे धरतीपर श्रम करैत अछि, विपदा झेलैत अछि, अपमान सहैत अछि आ संघर्ष करैत अछि, तँ भाषा समृद्ध होइतो अपूर्ण रहत।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे मैथिली साहित्यक भविष्य ओकर लोकतंत्रीकरणमे अछि। साहित्य जेतेक बेसी लोकक अनुभवसँ जुड़त, ओतेक बेसी जीवित, शक्तिशाली आ व्यापक बनत। जे साहित्य केवल गिनल-चुनल लोकक अनुभव धरि सीमित रहैत अछि, ओ धीरे-धीरे अपन पाठक-वर्ग गमा दैत अछि। जे साहित्य समाजक भीतर उतरैत अछि, ओकर पाठक समाज स्वयं बनैत अछि।

मैथिली साहित्यक लोकतंत्रीकरण अखन प्रतीक्षामे अछि। ई प्रतीक्षा पूर्ण करबाक जिम्मेदारी लेखक, पाठक, सम्पादक, आलोचक, प्रकाशक आ सामाजिक माध्यमपर सक्रिय प्रत्येक सजग बेकतीक अछि। भाषा तखन लोकतान्त्रिक बनत, जखन ओकर साहित्य समाजक सभ आवाजक घर बनत।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 24

मंचक मनमानी साहित्यिक अराजकता बनैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "मुदा गोष्ठीक बीच एकरूपता नहि रहल, केतौ एहेन आयोजन भेल जे साँझसँ भोर भेलो पछाइत कथाकारक कथा रहि जाइ छैन तँ केतौ अधरतियेमे बेवस्थापक चाह-पान समेट लइ छैथ।" (पृ. 41)

ई पंक्ति साहित्यिक आयोजनक भीतरक एकटा कठोर सच खोलैत अछि। मंच बनल, उद्देश्य नीक रहल, कथापाठक परम्परा शुरू भेल, रचनाकार जुटला, पोथी लोकार्पित भेल, चर्चा भेल आ नव-नव स्वर प्रवेश केलक। मुदा मण्डलजी ऐ उपलब्धिक बीच ईहो देखै छैथ जे गोष्ठीक संचालनमे एकरूपता नहि रहल। केतौ भोर धरि आयोजन चलल, तैयो कथाकारक कथा रहि गेल। केतौ अधरतिये बेवस्थापक चाह-पान समैट लेलक। ई आयोजनक सामान्य भूल मात्र नहि, साहित्यिक बेवहारमे पसरैत अराजकता अछि।

साहित्यिक मंचक असली अर्थ रचनाकारकेँ सुनबाक अवसर देब, पाठककेँ विचारक जगह देब आ समाजकेँ साहित्यसँ जोड़ब अछि। जँ मंचपर पहुँचला-पछाइतो रचना सुनल नहि जाए, तँ मंचक मूल उद्देश्य पूरा नहि होइत। जँ बेवस्था बेकतीगत सुविधानुसार चलए, तँ साहित्यिक लोकतन्त्र कमजोर पड़ैत अछि। मंचकेँ खुला कहि देलासँ ओ खुला नहि भऽ जाइत। खुला तखन होइत अछि, जखन ओकर नियम आ बेवहार सभक लेल स्पष्ट, बरबैर आ निष्पक्ष हो।

गोष्ठी कुर्सी, माइक, अध्यक्षता, स्वागत, चाह-पान आ फोटोक आयोजन मात्र नहि। गोष्ठी साहित्यक जीवित प्रयोगशाला अछि। ओत्तै रचना अपन पहिल सामाजिक साँस लैत अछि। कथाकार कथा सुनबैत, पाठक सुनैत, समीक्षक प्रश्न करैत, असहमति उठैत आ साहित्यक भीतर नव गति बनैत अछि। एहेन ठाम अनुशासन नहि रहत, तँ रचनात्मकता बाधित होएत, संवाद टुटत आ गोष्ठी औपचारिकतामे सिमैट जाएत।

मण्डलजीक कथनमे असल पीड़ा कथाकारक अधिकारक अछि। जे कथाकार दूरसँ आएल, भरि राति बैसल आ अपन रचना लऽकऽ उपस्थित भेल, ओकर कथा जँ रहि जाए, तँ ई ओकर बेकतीगत निराशा मात्र नहि। ई मंचक

बेवस्था आ साहित्यिक न्यायक प्रश्न अछि। साहित्यिक समाजक कसौटी एत्तै देखाइत अछि जे ओ प्रसिद्ध नामकेँ मात्र सुनैत अछि आकि नव, अल्पपरिचित, चुप आ दूरसँ आएल रचनाकारकेँ सेहो उचित समय दैत अछि।

दोसर दिस, अधरतियेमे चाह-पान समैट लेब सेहो साधारण बात नहि। ई संकेत अछि जे आयोजनक भीतर साहित्यक धैर्यपर सुविधा आ थकान हावी भऽ गेल। जखन बेवस्थापक मनमानी करैत अछि, तखन मंच रचनाकारक बदला बेवस्थापकक नियन्त्रणमे जाए लगैत अछि। साहित्य पाछू छुटि जाइत अछि आ आयोजनक बाहरी ढाँचा आगू आबि जाइत अछि।

ऐठाम अराजकता हल्लासँ नहि, असमान बेवहारसँ बनैत अछि। केकरा पहिने पढ़ौल जाए? केकरा रोकल जाए? केकरा समय भेटए? केकरा टारल जाए? केकर पोथी उठौल जाए? केकर रचनापर टिप्पणी हो? जँ ऐ सभक लेल स्पष्ट पद्धति नहि रहत, तँ गोष्ठी धीरे-धीरे गुट, परिचय, प्रभाव आ मनमानीक शिकार भऽ जाएत।

तँए साहित्यिक मंचक खुलापनक संग स्पष्ट बेवस्था सेहो चाही। समयक मर्यादा, रचनापाठक क्रम, कथाकारक अधिकार, समीक्षाक गरिमा आ लोकार्पणक सादगी चाही। सभसँ बेसी ई भाव चाही जे मंच केकरो निजी जागीर नहि, साहित्यिक संवादक साझी जगह अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे मंचक महत्त्व तखनहि अछि, जखन ओ रचनाकेँ केन्द्रमे राखए। मंचपर रचनाकारक आवाज दबि जाए आ बेवस्थाक मनमानी बँचल रहए, तँ ओ मंच साहित्यिक अराजकताक जगह बनि सकैत अछि। गोष्ठी जीवित तखन रहत, जखन ओकरा भीतर साहित्य, संवाद, समीक्षा आ सभ सहभागीकेँ बरबैर अवसर भेटत।

मंचक मनमानी साहित्यिक अराजकता बनैत अछि। बेवस्था स्पष्ट रहत, तखन मंच सृजन आ संवादक साझी जगह बनत। बेवस्था मनमानीसँ चलत, तखन मंच धीरे-धीरे साहित्यक बदला गुट आ प्रभावक केन्द्र बनि जाएत।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 25

सत्ताक निकटता जखन कसौटी बनैत अछि, नव प्रतिभा कात भऽ जाइत अछि

मण्डलजी लिखै छैथ-"जे साहित्यकार सत्तासँ जुड़ल रहला अछि हुनकर विचारधाराक संग बेवहार एहेन रहलैन जे नव आ पछुआएल परिवारक साहित्यकारक संग जेहेन बेवहार हेबा चाही से नहि केलैन जइसँ साहित्यकारक बीच नमहर दूरी बनियेँ गेल अछि।" (पृ. 99)

ई पंक्ति साहित्यक भीतर सक्रिय सत्ता-सम्बन्धपर गम्भीर प्रश्न उठबैत अछि। साहित्यिक सत्ता सरकार वा राजनीतिक पद धरि सीमित नहि। पत्र-पत्रिकाक सम्पादन, प्रकाशन, पुरस्कार-निर्णय, आयोजन, पाठ्यक्रम, संस्था आ मंचपर अवसर देबाक अधिकार सेहो सत्ताक रूप अछि। जेकरा लग ई अधिकार अछि, ओकर बेवहार साहित्यिक वातावरणक दिशा निर्धारित करैत अछि।

सत्ताक निकट रहब अपने-आपमे दोष नहि। साहित्यकार संस्था, सरकार वा सार्वजनिक मंचसँ जुड़िकऽ समाजोपयोगी काज कऽ सकैत अछि। समस्या तखन होइत अछि, जखन निकटता योग्यताक कसौटी बनि जाए। रचना पढ़लासँ पहिने लेखकक परिचय देखल जाए, विचारसँ पहिने सम्बन्ध जाँचल जाए आ अवसरक निर्णय प्रतिभासँ नहि, निष्ठासँ हो, तखन साहित्यिक न्याय कमजोर पड़ए लगैत अछि।

नव आ पछुआएल परिवारक लेखकक सोझाँ पहिनेसँ अनेक बाधा रहैत अछि। ओकरा लग पोथी कीनबाक साधन कम भऽ सकैत अछि, पैघ नगरक आयोजन धरि पहुँचब कठिन भऽ सकैत अछि आ प्रभावशाली लोकसँ परिचय सेहो नहि रहैत अछि। जँ साहित्यिक संस्था सेहो ओकरा अपनेबाक बदला दूरी बनबैत अछि, तँ ओकर प्रतिभाकेँ सोझाँ एबाक अवसर आरो कम भऽ जाइत अछि।

ऐ उपेक्षाक प्रभाव एक लेखक धरि सीमित नहि रहैत। धीरे-धीरे नव रचनाकारक भीतर ई धारणा बनए लगैत अछि जे श्रेष्ठ लेखनसँ बेसी जरूरी कोनो गुट वा प्रभावशाली बेकतीक निकट रहब अछि। कियो निराश भऽ लिखब छोड़ि दैत अछि, कियो स्वीकृतिक लोभमे अपन स्वतंत्र स्वर बदैल लैत अछि आ कियो साहित्यिक समाजसँ पूर्णतः दूरी बना लैत अछि। अहीसँ मण्डलजीक कहल

"नमहर दूरी" बनैत अछि।

एहेन दूरीसँ साहित्यक अपन हानि होइत अछि। समाजक नव अनुभव, नव भाषा आ नव प्रश्न साहित्य धरि नहि पहुँच पबैत अछि। साहित्य गिनल-चुनल परिवार, क्षेत्र आ विचारक दायरामे बन्न भऽ जाइत अछि। जे जीवन पहिनेसँ हाशियापर अछि, ओकर अभिव्यक्ति साहित्यिक मंचपर सेहो हाशियेमे रहि जाइत अछि।

साहित्यिक संस्थाकेँ अवसर देबाक प्रक्रिया स्पष्ट रखबाक चाही। रचनाकेँ साहित्यिक कसौटीक आधारपर पढ़ल जाए, आमन्त्रणक दायरा विस्तृत हो, नव लेखक लेल खुलल मंच बनए आ निर्णय लेनिहार लोक समय-समयपर बदलैत रहए। असहमति वा अपरिचयकेँ अयोग्यता नहि मानल जाए। जेकर रचना कमजोर अछि, ओकरा कारणसहित प्रतिक्रिया भेटए; जेकर रचना समर्थ अछि, ओकरा परिचयक अभावमे रोकल नहि जाए।

वरिष्ठ साहित्यकारक दायित्व दरबार बनाएब नहि, सेतु बनाएब अछि। ओ अपन अनुभवसँ नव लेखककेँ भाषा, अध्ययन आ रचना-प्रक्रियामे सहायता दऽ सकै छैथ। नव प्रतिभाक आगमनसँ अपन स्थान घटत, ई डर साहित्यिक असुरक्षा अछि। सच्चा वरिष्ठ वएह अछि, जे साहित्यक यात्रा आगू बढ़बैत रहबाक लेल नव पीढ़ी तैयार करैत अछि।

सत्ताक निकटता जखन कसौटी बनैत अछि, नव प्रतिभा कात भऽ जाइत अछि। साहित्यक कसौटी सम्बन्ध नहि, रचना हो; निष्ठा नहि, सृजनात्मक इमानदारी हो। अवसरक दुआर सभ लेल खुलल रहत आ मूल्यांकन न्यायपूर्ण हएत, तखने साहित्यकारक बीचक दूरी घटत आ साहित्य समाजक व्यापक अनुभवक प्रतिनिधि बनत।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 26

मोबाइल युगमे साहित्यक परीक्षा

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "आजुक जे मोबाइल युग आबि गेल अछि तइमे अपना ऐठामक नाट्य साहित्य रहत कि पाठ्य साहित्य बनत से तँ प्रश्न अछिए।" (पृ. 89)

ई पंक्ति मण्डलजीक सजग समय-बोधक प्रमाण अछि। ओ अतीत,

परम्परा आ लोकजीवनपर मात्र नहि सोचै छैथ; बदलैत माध्यम, बदलैत पाठक आ साहित्यक बदलैत रूपपर सेहो विचार करै छैथ। मोबाइल युग हुनका लेल सुविधा मात्र नहि, साहित्यक सोझाँ ठाढ़ एकटा नव प्रश्न सेहो छैन।

समय बदलैत अछि, तँ पढ़बाक, सुनबाक आ देखबाक ढंग सेहो बदैलिते अछि। मंच बदलैत अछि, पाठकक धैर्य बदलैत अछि आ शब्दक यात्रा सेहो नव बाट पकड़ैत अछि। जे साहित्य पहिने पोथीक पृष्ठ, गोष्ठीक मंच, रंगमंच वा सामूहिक पाठमे पाठक देखि पबै छल, से आब मोबाइलक स्क्रीनपर सेहो पहुँच रहल अछि।

मुदा माध्यम बदललासँ साहित्यक जिम्मेदारी समाप्त नहि होइत। अपितु ओकर परीक्षा आरो कठिन भऽ जाइत अछि। मोबाइल युगमे सूचना आ शोर बेसी अछि, मुदा गौर करैत पढ़बाक समय कम। प्रतिक्रिया तेज अछि, मुदा गहींर विचारक अवसर घटैत अछि। एहेन समयमे साहित्यकेँ अपन गम्भीरता, गरिमा आ सामाजिक अर्थ बँचबैत पाठक धरि पहुँचए पड़त।

मण्डलजीक प्रश्न खाली नाट्य आ पाठ्य साहित्यक रूप धरि सीमित नहि अछि। असल प्रश्न ई अछि जे बदलैत समयमे साहित्य अपन जीवन-सम्बन्ध केना जोगौत। मंच बदैल गेल, तँ अभिव्यक्तिक रूप केना बदलत? पाठकक आदत बदैल गेल, तँ साहित्य ओकरा धरि कोन बाटे पहुँचत?

मोबाइल आ सामाजिक माध्यम साहित्य लेल चुनौती सेहो अछि आ अवसर सेहो। चुनौती ई जे रचना हल्लुक टिप्पणी, तुरन्त प्रतिक्रिया आ क्षणिक शोरमे गुम भऽ सकैत अछि। अवसर ई जे एक पंक्ति, एक अंश वा एक विचार पाठकक भीतर पूरा पोथी पढ़बाक जिज्ञासा जगा सकैत अछि।

जीवनसँ जुड़ल साहित्य माध्यम बदललासँ अप्रासंगिक नहि होइत। ओकर प्रस्तुति बदैल सकैत अछि, पहुँचबाक साधन बदैल सकैत अछि, मुदा ओकर मूल दायित्व ओहिना रहैत अछि। सामाजिक माध्यम साहित्यक विकल्प नहि, साहित्य धरि पहुँचबाक नव बाट बनि सकैत अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे साहित्यकेँ बदलैत समयसँ डरबाक नहि, ओकर सोभाव बुझबाक चाही। पोथी, मंच, पाठ, मोबाइल आ फेसबुक, सभक अपन भूमिका अछि। मुदा मूल कसौटी एक्के अछि: साहित्य मनुक्खक जीवन, सामाजिक संघर्ष, भाषा, संस्कृति आ विवेकक पक्षमे केतेक इमानदारीसँ

ठाढ़ अछि?

मोबाइल युगमे साहित्यक वास्तविक परीक्षा एत्तै अछि। जे साहित्य डिजिटल परिवेशक सोभाव आ पाठकीय परिवर्तनकेँ बुझने बिना केवल पुरान रूपपर अड़ल रहत, ओ धीरे-धीरे पाठकसँ दूर भऽ सकैत अछि। मुदा जे अपन वैचारिक गहींरता, भाषिक गरिमा आ रचनात्मक गुणवत्ता जोगबैत नव माध्यमक सम्भावनाकेँ अपनौत, ओ नव पाठकधरि पहुँच हुनकर भीतर विचार आ संवादक नव दुआर खोलि सकैत अछि।

माध्यम बदलैत अछि, मुदा साहित्यक सामाजिक दायित्व नहि बदलैत। मण्डलजीक प्रश्न हमरा सचेत करैत अछि जे नव समयमे साहित्यक रूप, पहुँच आ पाठकपर विचार करब सेहो साहित्यिक जिम्मेदारीक हिस्सा अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 27

प्रतिष्ठा देल नहि जाइत, कर्मसँ बनैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "कथा गोष्ठीसँ कथाधारामे एक गति आएल, नव-नव रचनाकारक प्रवेश गोष्ठीमे होइत रहल, गोष्ठी आगू बढ़ैत रहल।" (पृ. 41)

ई पंक्ति एकटा कथा-गोष्ठीक इतिहास मात्र नहि कहैत, साहित्यक भीतर प्रतिष्ठा बनबाक वास्तविक प्रक्रिया दिस सेहो संकेत करैत अछि। प्रतिष्ठा केकरो देने नहि होइत। ओ घोषणा, प्रशंसा, मंचीय अभिनन्दन वा संस्थागत मोहरक वस्तु नहि। प्रतिष्ठा दीर्घ कर्म, निरन्तर उपस्थिति, पाठक-सम्बन्ध, रचनाक जीवन-सत्य आ साहित्यिक निष्ठासँ बनैत अछि।

मण्डलजीक साहित्यिक यात्रा ऐ अर्थमे विशेष अछि। ओ साहित्यक बाटपर प्रतिष्ठा माँगए नहि, लिखए आ लोकजीवनक अनुभवकेँ शब्द देबए एला। हुनकर रचनामे किसान, मजदूर, महिला, माटिसँ जुड़ल लोक, संघर्ष, अपमान, जिजीविषा आ मनुक्खक गरिमा उपस्थित अछि। जे साहित्य एहेन जीवनकेँ केन्द्रमे अनैत अछि, ओकर प्रतिष्ठा धीरे-धीरे समाजक भीतर जड़ि पकड़ैत अछि।

कएक बेर साहित्यिक समाज प्रतिष्ठाक अर्थ उलटा बुझि लैत अछि। कोनो समूह नाम घोषित केलक, तँ प्रतिष्ठा; कोनो मंच अभिनन्दन केलक, तँ प्रतिष्ठा; कोनो संस्था सम्मान देलक, तँ प्रतिष्ठा। संस्था, मंच आ पुरस्कारक अपन महत्त्व

अवश्य अछि, मुदा प्रतिष्ठाक अर्थ एतबे नहि। ओकर मूल स्रोत रचनाकारक कर्म अछि। जँ रचना जीवनसँ जुड़ल अछि, जँ ओकरा भीतर गहींर अनुभव अछि आ जँ पाठक ओकरा अपन जीवनक दर्पण मानैत अछि, तँ प्रतिष्ठा अपना लेल बाट बनबैत जाइत अछि।

मण्डलजीक सन्दर्भमे गोष्ठी आ रचना अलग-अलग काज नहि। कथा लिखल गेल, पोथी बनल, लोकार्पण भेल, पाठक धरि पहुँचल, गोष्ठीमे कथा सुनल गेल, टिप्पणी आ समीक्षा भेल तथा नव रचनाकारक प्रवेश होइत रहल। ई सभ मिलिकऽ साहित्यिक जीवनक निरन्तर प्रक्रिया बनैत अछि। ऐ प्रक्रियामे प्रतिष्ठा बाहरसँ चिपकौल लेबल नहि, रचनाकारक प्रति भीतरसँ बनल विश्वास अछि।

कथा-गोष्ठीसँ कथाधारामे गति एबाक अर्थ साहित्यक सामाजिक संचरण अछि। रचना कोठरीमे बन्न रहि जाए, तँ ओकर जीवन सीमित रहैत अछि। जखन ओ पाठक धरि पहुँचैत, सुनल जाइत, तेकरापर प्रश्न उठैत, असहमति आ प्रशंसा सामने अबैत तथा समीक्षा होइत अछि, तखन ओ साहित्यिक समाजक चलैत धारामे प्रवेश करैत अछि।

प्रतिष्ठा ओत्तै बनैत अछि, जेतए रचनाकार अपन काजसँ पाछू नहि हटैत। जेतए श्रम, निरन्तरता, विषयक गम्भीरता आ लोकजीवनक प्रति जिम्मेदारी देखाइत अछि। जे रचनाकार अपन कर्मक आधारपर ठाढ़ अछि, ओकर साहित्यिक महत्त्वकेँ स्थायी बनेबाक लेल बाहरी सहाराक खगता नहि रहैत।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे साहित्यक वास्तविक प्रतिष्ठा समयक धैर्यपूर्ण निर्णय अछि। जे रचना लोकक जीवनमे प्रवेश करैत, पाठकक मनमे प्रश्न जगबैत, समाजक छुटल दृश्यकेँ सामने अनैत आ निरन्तर कर्मसँ साहित्यक धरती जोतैत रहैत अछि, ओकर प्रतिष्ठा एक दिनमे नहि, पीढ़ीक स्मृतिमे बनैत अछि।

प्रतिष्ठा देल नहि जाइत, कर्मसँ बनैत अछि। जे कर्म लोकजीवनक पक्षमे निष्ठा आ इमानदारीसँ निरन्तर चलैत रहैत अछि, ओकर साहित्यिक अर्थ समयक संग आरो स्पष्ट आ उज्जर होइत जाइत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 28

स्वीकृति घोषणा नहि, लोकस्मृतिमे उतरबाक प्रक्रिया छी

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "लिखैक मानदण्ड आ समीक्षाक कसौटी के बनौत? बीतल युगक दृष्टि वर्तमान साहित्यक समुचित मूल्यांकन नहि कऽ सकैए। प्रत्येक युग अपन साहित्यिक कसौटी अपने गढ़ैए; तँए समसामयिक रचनाक मूल्यांकन समसामयिक रचनाकार आ समीक्षकक ऐतिहासिक जिम्मेदारी अछि।" (पृ. 41)

ई पंक्ति आधुनिक मैथिली साहित्यक सामने एकटा गम्भीर प्रश्न रखैत अछि। लिखबाक आ समीक्षा करबाक मानदण्ड के बनौत? संस्था, पुरस्कार, समीक्षक, विश्वविद्यालय, मंच, पाठक आकि समय? मण्डलजीक प्रश्न मानदण्ड बनेबाक संग साहित्यिक जिम्मेदारीक प्रश्न सेहो अछि। अपन समयक रचनाकेँ बुझबाक दृष्टि जँ समसामयिक साहित्यिक समाज नहि बनौत, तँ आगूक पीढ़ीकेँ एकभगाह अभिलेख, सीमित समीक्षा आ अपूर्ण साहित्यिक परिचय भेटत।

स्वीकृति घोषणा नहि। घोषणा तात्कालिक घटना होइत अछि, मुदा स्वीकृति दीर्घ प्रक्रिया अछि। कोनो पोथीक नाम मंचपर कहल गेल, से एकटा घटना अछि। कोनो लेखककेँ पुरस्कार भेटल, से एकटा औपचारिक मान्यता अछि। साहित्यिक स्वीकृति तखन आकार लैत अछि, जखन रचना पढ़ल जाइत, फेर पढ़ल जाइत, गोष्ठीमे चर्चा होइत, विद्यार्थी धरि पहुँचैत, पाठक ओकरा अपन अनुभवसँ जोड़ैत आ आलोचना ओकर साहित्यिक मूल्यकेँ परखैत अछि।

मण्डलजीक साहित्यक सन्दर्भमे ई प्रश्न आरो आवश्यक भऽ उठैत अछि। हुनकर लेखन विपुल, विविध, निरन्तर आ लोकजीवनक गहींर धरातलसँ जुड़ल अछि। एहेन रचनाकारक मूल्यांकन पुरस्कार-सूची, पोथी-संख्या वा औपचारिक परिचयसँ पूर्ण नहि भऽ सकैत। हुनकर साहित्यक भीतर जे समाज, भाषिक धरती, संघर्ष आ लोक-पक्ष उपस्थित अछि, ओकर गहींर आ सम्यक् पाठ आवश्यक अछि।

कए बेर स्वीकृति देरीसँ अबैत अछि, कारण साहित्यिक समाजक नजैर समयपर तैयार नहि रहैत। जे रचना प्रचलित रुझानसँ अलग होइत अछि, ओकरा पढ़बाक तैयारी कम रहैत अछि। जे लेखक सत्ता-समर्थित विषयक बदला माटिसँ जुड़ल लोकक जीवन लिखैत अछि, ओकरा बुझबाक लेल अलग

नजैर चाही। जे साहित्य सजल भाषाक बदला जीवनक खाँटी रूप आ श्रमक गन्ध लऽ कऽ अबैत अछि, ओकर मूल्यांकन लेल पाठकीय दृष्टिक सेहो तैयार हएब आवश्यक अछि।

मण्डलजीक साहित्य एहने चुनौती दैत अछि। ओ मैथिली साहित्यसँ पुछै छैथ: की किसानक जीवनकेँ साहित्यक केन्द्र मानल जाएत? की मजदूरक अनुभवकेँ साहित्यिक गरिमा भेटत? की महिलाक अनकहल पीड़ा आ आकांक्षाक स्वर सुनल जाएत? की दबल-कुचलल समाजक कथाकेँ परिशिष्ट नहि, साहित्यक मूलधारा मानल जाएत? जँ हँ, तँ मानदण्डो बदलैए पड़त। पुरान कसौटीसँ नव लोकजीवनक समुचित मूल्यांकन नहि कएल जा सकैत।

स्वीकृति ऊपरसँ उतरैबला वरदान नहि। ओ पाठक, रचना आ समाजक बीच निरन्तर सम्बन्धसँ बनैत अछि। पोथी पाठकक हाथमे जाए, कथा सुनल जाए, गोष्ठीमे प्रश्न उठए, समीक्षा लिखल जाए, मतभेद सामने आबए, नव पीढ़ी पढ़ए, शिक्षक पढ़बए, शोधार्थी परखए आ समाज अपन चेहरा ओइ साहित्यमे देखए, तखन स्वीकृति धीरे-धीरे लोकस्मृतिमे उतरैत अछि।

ऐठाम 'सगर राति दीप जरय' जकाँ मंचक महत्त्व बुझाइत अछि। केतेको लेखकक साहित्यिक यात्रा सुविधाक कुर्सीसँ शुरू भऽ ब्लॉग, इन्टरनेट आ पत्रिकाक पन्नापर थमि जाइत अछि। शब्द छपैत अछि, मुदा समाजसँ ओकर साक्षात्कार बाँकी रहि जाइत अछि। एहेन मंच आयोजन मात्र नहि, साहित्यिक स्मृति गढ़बाक कर्मभूमि अछि। जेतए रचना सुनल जाइत, पोथी लोकार्पित होइत, कथाकार आ पाठक एकठाम बैसैत तथा समीक्षा आ असहमति सामने अबैत, ओत्तै साहित्य आलमारीक निस्तब्धता आ स्क्रीनक एकान्तसँ बाहर आबि समाजक बीच साँस लैत अछि।

मण्डलजीक प्रश्न "मानदण्ड के बनौत?" असलमे हमरालोकनिकेँ झकझोरैत अछि। जँ हम अपन समयक रचनाकारकेँ समयपर नहि पढ़ब, तँ आगूक पीढ़ी कोन आधारपर ओकर मूल्यांकन करत? जँ लोकजीवनक साहित्यकेँ गौण मानैत रहब, तँ भाषा अपन समाजक पैघ अंशसँ कटि जाएत। जँ स्थापित नामक परिक्रमा मात्र करैत रहब, तँ साहित्यक नव इतिहासक बाट के खोलत?

पयस्विनी हमरालोकनिकेँ ई बोध करबैत अछि जे साहित्यिक स्वीकृति

आग्रह वा घोषणासँ स्थायी नहि होइत। ओ रचनाक सामर्थ्य, निरन्तर सृजनकर्म आ पाठक-समाजसँ बनल सम्बन्धक माध्यमसँ अर्जित होइत अछि। साहित्यिक समाजक जिम्मेदारी अछि जे एहेन काजकेँ समयपर पढ़ए, परखए आ ओकर मूल्यक अनुरूप स्थान दिअए। देरीसँ भेल स्वीकृति सेहो अर्थवान होइत अछि, मुदा समयपर कएल न्याय साहित्यक ऊर्जा, विचार-प्रवाह आ निरन्तरताकेँ बँचौने रखैत अछि।

तँए स्वीकृति घोषणा नहि, लोकस्मृतिमे उतरबाक प्रक्रिया छी। जे रचना लोकजीवनकेँ केन्द्रमे अनैत आ समाजकेँ अपन यथार्थक प्रति सजग करैत अछि, ओ पुरस्कार, अभिलेख वा कागजी मान्यतामे सीमित नहि रहैत। पाठकक अनुभवसँ जुड़ैत-जुड़ैत ओ लोकक मन आ साहित्यक दीर्घ स्मृतिमे अपन स्थान बना लैत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 29

अवसर बाहरसँ नहि अबैत,

दृष्टि ओकरा चिन्हैत अछि

मण्डलजी लिखै छैथ- “नव लेखक लेल बुझू, आकि नव लेखन लेल, अवसर केतौ बाहरसँ अबैत नहि अछि। अवसर समाजमे रहिते अछि। ओकरा चिन्हबाक आ उपयोग करबाक क्षमता लेखकक अपन दृष्टिपर निर्भर करैत अछि। बेकती केवल समाजक इकाइ नहि, दुनियाँक इकाइ सेहो छी। ओ अपन लेखन, श्रम आ दृष्टिसँ एकाइ-दहाइसँ बढ़ैत लाख-करोड़ लोक धरि केना पहुँचत, ई जिम्मेदारी अपने लेखकक भेल। तँए अवसरक प्रतीक्षा नहि, अपन काजसँ अवसर बनबए पड़ैत अछि।” (पृ. 112)

ई पंक्ति नव लेखक आ नव लेखनक सोझाँ अवसरक अर्थकेँ नव ढंगसँ रखैत अछि। मण्डलजी अवसरकेँ बाहरसँ भेटएबला कोनो उपहार नहि मानै छैथ। हुनकर कहब छैन जे अवसर जीवनमे रहिते अछि, मुदा ओकरा चिन्हबाक सामर्थ्य लेखकक दृष्टिमे हेबाक चाही।

एक्के घटना हजारो लोक देखैत अछि, मुदा सभ ओकरा भीतरक अर्थ नहि देखि पबैत अछि। किसानक श्रम, मजदूरक मिहनत, महिलाक चुप्पी, बच्चाक जिज्ञासा, वृद्धक स्मृति, गामक बदलैत रूप, बाजारक दबाव आ

मनुक्खक सम्बन्धमे अबैत परिवर्तन सभक सोझाँ रहैत अछि। लेखकक सजग नजैर अही सामान्य बुझाइबला जीवनक भीतर नुकाएल प्रश्न, पीड़ा, सौन्दर्य आ सम्भावनाकेँ चिन्हैत अछि। तखने देखल घटना रचनाक विषय बनैत अछि।

अवसर रहिते अछि, एकर अर्थ ई नहि जे सभ लेखकक बाट समान रूपेँ सहज अछि। केकरो मंच सहज भेटैत अछि, तँ केकरो अपन आवाज पाठक धरि पहुँचेबामे नमहर संघर्ष करए पड़ैत अछि। सामाजिक स्थिति, आर्थिक अभाव, क्षेत्रीय दूरी आ संस्थागत उपेक्षा सेहो बाटमे बाधा बनि सकैत अछि। मुदा ई बाधा लेखकक भीतरक रचनात्मक सम्भावनाकेँ समाप्त नहि करैत अछि। जाधैर जीवन, भाषा, अनुभव आ प्रश्न अछि, ताधैर लेखनक जमीनो अछि।

नव लेखकक पहिल पूँजी परिचय, पुरस्कार वा पैघ मंच नहि, ओकर सजग नजैर अछि। ओ अपना चारूकातक जीवनकेँ केतेक धियानसँ देखैत अछि, लोकक बात केतेक धैर्यसँ सुनैत अछि, अपन अनुभवपर केतेक गहींर विचार करैत अछि आ भाषाकेँ समृद्ध करबाक लेल केतेक श्रम करैत अछि, अहीसँ ओकर रचनात्मक बाट बनैत अछि। मंच रचनाकेँ लोक धरि पहुँचा सकैत अछि, मुदा रचनाक प्राण लेखकक अनुभव, दृष्टि आ संवेदनासँ जन्म लैत अछि।

मण्डलजी बेकतीकेँ समाजेक नहि, दुनियाँक इकाइ सेहो कहै छैथ। ऐ कथनमे व्यक्तिगत सामर्थ्यक संग सामाजिक दायित्व सेहो समाहित अछि। लेखक अपन अनुभवसँ लिखैत अछि, मुदा ओकर रचना केवल ओकर निजी वस्तु नहि रहैत। ओ समाजक स्मृति, वर्तमानक प्रश्न आ भविष्यक सम्भावनाक संग जुड़ि जाइत अछि। एक बेकतीक विचार एकाइ-दहाइ होइत लाखो लोक धरि तखने पहुँचैत अछि, जखन ओकरा भीतर व्यापक मनुष्यता आ लोकहितक भावना रहैत अछि।

लाख-करोड़ लोक धरि पहुँचबाक अर्थ केवल संख्या बढ़ाएब नहि। हजारो लोक कोनो सामग्री देखि सकैत अछि, मुदा ओ लोकक चेतनामे कोनो प्रश्न नहि जगबए, ई सम्भव अछि। दोसर दिस, सीमित पाठक धरि पहुँचल कोनो रचना हुनकर भीतर गहींर हलचल उत्पन्न करि सकैत अछि आ धीरे-धीरे व्यापक सामाजिक संवादक आधार बनि सकैत अछि। तँए लेखकक लक्ष्य केवल चर्चित होएब नहि, जीवनक सत्यकेँ एहेन रूपमे अभिव्यक्त करब हो जे पाठक ओकरा अपन अनुभवसँ जोड़ि सकए।

अवसर चिन्हबाक लेल प्रतीक्षासँ बेसी तैयारी आवश्यक अछि। नियमित अध्ययन, जीवनक अवलोकन, भाषाक अभ्यास, आत्मपरीक्षण आ आलोचना सुनबाक साहस लेखकक दृष्टिकेँ विस्तृत करैत अछि। जइ प्रश्नपर सभ चुप अछि, ओतए आवाज उठाएब अवसर अछि। जइ जीवनकेँ साहित्य कम स्थान देने अछि, ओकरा धियानसँ बुझब अवसर भेल। पुरान विषयक भीतर नव अर्थ खोजब आ बदलैत समयकेँ नव नजैरसँ देखब सेहो अवसर भेल।

नव लेखक लेल सभसँ पैघ संकट अवसरक अभावसँ पहिने अपन सम्भावनापर अविश्वासक अछि। जखन ओ मानि लैत अछि जे कियो आमन्त्रण देत तखने लिखब, कियो मान देत तखने आगू बढ़ब वा कोनो संस्था प्रमाणित करत तखने ओकर रचना सार्थक हएत, तखन ओ अपन सृजनात्मक शक्तिक निर्णय दोसराक हाथमे दऽ दैत अछि। मण्डलजी ऐ निर्भरतासँ मुक्त भऽ अपन दृष्टिकेँ सक्रिय करबाक प्रेरणा दइ छैथ।

अवसर केतौसँ अबैत नहि, रहिते अछि। प्रश्न केवल ई अछि जे हमर नजैर ओकरा चिन्हैत अछि आकि नहि। नव लेखनक बाट जीवनक बीच खुजल अछि। ओकरा देखबाक दृष्टि, ओइपर चलबाक साहस आ अपन अनुभवकेँ सामाजिक अर्थ देबाक जिम्मेदारी अपने अर्जित करए पड़त।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 30

पुरस्कार अन्तिम लक्ष्य नहि,

सृजनक यात्रा अनवरत अछि

मण्डलजी लिखै छैथ- "'को बर छोट कहत अपराधू' जहिना कथा यात्रा 'टैगोर लिटरेचर एवार्ड' देलक तहिना उपन्यास 'साहित्य अकादेमी पुरस्कार' देलक। तँए अप्पन कोनो लक्ष्य नहि अछि। ओ अनवरतता छी, जखन जेहेन तखन तेहेन।" (पृ. 105)

ई पंक्ति पुरस्कारक उपलब्धिसँ बेसी रचनाकारक मानसिक स्थितिक परिचय दैत अछि। कथा-संग्रहकेँ 'टैगोर लिटरेचर एवार्ड' आ उपन्यासकेँ 'साहित्य अकादेमी पुरस्कार' भेटल, मुदा मण्डलजी अपन सृजनात्मक यात्राकेँ ओतए पूर्ण नहि मानै छैथ। हुनका लेल पुरस्कार कोनो अन्तिम लक्ष्य नहि, अनवरत लेखन-यात्राक बीच आएल सार्वजनिक स्वीकृति अछि।

मण्डलजी पुरस्कारक महत्त्वकेँ नकारै नहि, ओकर उचित स्थान निर्धारित करै छैथ। पुरस्कार रचनाकारक श्रमकेँ मान्यता दैत, रचनाकेँ व्यापक पाठक धरि पहुँचेबाक बाट खोलैत आ भाषा-साहित्यक प्रतिष्ठा बढ़बैत अछि। मुदा पुरस्कार भेटिते लेखकक प्रश्न समाप्त नहि भऽ जाइत अछि। जीवन बदलैत रहैत अछि, समाज नव ओझरी उत्पन्न करैत अछि आ प्रत्येक समय लेखकसँ नव रचनात्मक उत्तर माँगैत अछि। एक कृतिक सफलता आगूक रचनाक स्थान नहि लऽ सकैत अछि।

“ओ अनवरतता छी” मण्डलजीक रचनात्मक जीवनक मूल सूत्र अछि। अनवरतताक अर्थ केवल पोथीक संख्या बढ़ाएब नहि। एकर अर्थ अछि जीवनसँ सम्बन्ध बनौने रहब, बदलैत समाजकेँ धियानसँ देखब, अपन दृष्टिकेँ परखब आ नव प्रश्नक संग रचनात्मक संवाद करब। कलम चलैत रहए, मुदा ओइमे जीवनक नव अनुभव प्रवेश नहि करए, तँ पोथीक संख्या बढ़लाक बादो सृजन भीतरसँ ठमैक सकैत अछि।

पुरस्कारक बाद लेखकक सोझाँ आत्मसन्तोषक सूक्ष्म संकट उत्पन्न होइत अछि। ओ अपनहि सफल रचनाक अनुकरण करए लगए, प्राप्त प्रतिष्ठाक चौहद्दीमे बन्न भऽ जाए वा आलोचनात्मक प्रश्नसँ दूरी बना लिअए, ई सम्भव अछि। अनवरतता लेखककेँ अही आत्ममोहसँ बँचबैत अछि। ओ मोन पाड़ैत अछि जे बीतल उपलब्धि सम्मानक विषय अछि, मुदा वर्तमानक रचनात्मक इमानदारीक विकल्प नहि।

“जखन जेहेन तखन तेहेन” लापरवाहीक कथन नहि, बदलैत जीवनक प्रति रचनाकारक सजगताक संकेत अछि। प्रत्येक समय अपन प्रश्न अनैत अछि आ प्रत्येक विषय अपन अभिव्यक्ति माँगैत अछि। कथा, उपन्यास, कविता वा नाटक एक्के रचनात्मक ढाँचा स्वीकार नहि करैत। ग्रामीण जीवनक अनुभव, सामाजिक विषमता, पारिवारिक सम्बन्ध आ मानवीय संघर्ष सभक अपन-अपन स्वर अछि। अनवरत लेखक समय आ विषयक सोभावकेँ बुझि ओकर योग्य भाषा आ रूप खोजैत रहैत अछि।

सृजनक लक्ष्य जँ केवल पुरस्कार बनि जाए, तँ लेखकक नजैर जीवनसँ बेसी निर्णायक संस्थादिस रहि सकैत अछि। ओ लिखैत काल सोचए लगैत अछि जे कोन विषय चर्चित हएत, कोन शैली स्वीकृत हएत आ कोन रचना प्रतिष्ठाक

बाट खोलत। तखन रचना जीवनक आन्तरिक आवश्यकतासँ नहि, बाहरी गणनासँ संचालित होमए लगैत अछि। मण्डलजीक अनवरतता ऐ मानसिकतासँ अलग अछि। हुनका लेल लेखन जीवनसँ चलैत संवाद अछि, पुरस्कारक प्रतीक्षामे कएल गेल आयोजन नहि।

पाठक आ साहित्यिक समाजक दायित्व सेहो ऐठाम जुड़ैत अछि। कोनो रचनाकारकेँ ओकर पुरस्कार-प्राप्त एक्के कृतिमे बन्न कऽ देखब उचित नहि। पुरस्कार ओइ कृतिक विशिष्टता चिन्हैत अछि, रचनाकारक समूचा विकासकेँ समाप्त नहि करैत। पुरस्कारसँ पहिलुक आ बादक रचना पढ़ल जाए, ओकर दृष्टिक विकास बुझल जाए आ प्रत्येक नव कृतिक स्वतंत्र मूल्यांकन कएल जाए, तखने रचनाकारक अनवरत यात्राक वास्तविक परिचय भेटत।

अनवरत सृजनक आधार अध्ययन, अनुभव, श्रम आ आत्मपरीक्षण अछि। प्रशंसा भेटए आकि आलोचना, आयोजन हो आकि एकान्त, लेखकक सम्बन्ध अपन कागत-कलम आ समाजसँ बनल रहए। उपलब्धि ओकर उत्साह बढ़बए, मुदा आत्ममुग्ध नहि बनबए। असहमति ओकरा पुनर्विचार लेल प्रेरित करए, मुदा रचनात्मक गति नहि रोकए।

पुरस्कार रचनाकारक यात्राकेँ सार्वजनिक मान्यता दैत अछि, मुदा ओ यात्रा समाप्त नहि करैत। लेखकक वास्तविक पहचान अहीसँ बनैत अछि जे सम्मान भेटलाक बादो ओकर नजैर जीवनपर सजग रहैत अछि। बीतल उपलब्धिक उजासमे ठाढ़ रहितो जे नव अनुभव, नव प्रश्न आ नव रचनाक बाटपर आगू बढ़ैत रहैत अछि, ओकर सृजनक यात्रा सचमुच अनवरत बनैत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 31

भाषा कमजोर नहि, भरोस कमजोर अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “एतेक समृद्ध भाषा मैथिली अछि। जनभाषा छिऐ। ...तँए भाषा कमजोर नइए।” (पृ. 43)

ई पंक्ति मैथिली भाषाक सम्बन्धमे मण्डलजीक आत्मविश्वासक सोझ आ स्पष्ट घोषणा अछि। ओ मैथिली लेल दया नहि माँगै छैथ। ओ मैथिली लेल ओकर अपन लोकक भरोस माँगै छैथ। हुनका लग मैथिली कोनो दुर्बल, असहाय अथवा केवल भावुक स्मृतिक भाषा नहि अछि। ई जनभाषा छी, लोकजीवनसँ जन्मल

भाषा छी, धरतीक महक, श्रमक लय, घर-आँगनक सम्बन्ध, समाजक अनुभव आ मनुक्खक सामूहिक चेतनासँ बनल भाषा छी।

भाषा कमजोर तखन नहि होइत, जखन ओकर बजनिहार गरीब हुअए। भाषा कमजोर तखन होइत अछि, जखन ओकर बजनिहार ओकरापर भरोस करब छोड़ि दैत अछि। जखन लोक अपन भाषा घरमे रखि, बाहर दोसर भाषाक दुआरपर आत्महीन भऽ ठाढ़ भऽ जाइत अछि, तखन भाषा नहि, मन कमजोर पड़ैत अछि। भाषाक वास्तविक संकट ओकर शब्दक अभावमे नहि, ओकर लोकक आत्मविश्वासक कमीमे होइत अछि।

मण्डलजीक बात ऐठाम बहुत गहींर अछि। ओ कहै छैथ जे भाषाक जन्म आ विकास कहियो रुकैत नहि। समयक संग भाषा बदैलत अछि, बढ़ैत अछि, नव शब्द ग्रहण करैत अछि, नव अनुभवकेँ स्वर दैत अछि आ नव समाजक प्रश्नकेँ अपना भीतर जगह दैत आगू बढ़ैत अछि। मुदा ऐ लेल भाषा-प्रेम केवल भावुक घोषणा बनिकऽ नहि रहि जाए। ओकरा बेवहारमे, लेखनमे, पाठमे, संवादमे आ साहित्यक सघन धरातलपर उतारए पड़त। भाषा तखनहि जीवित रहैत अछि, जखन ओकर प्रेम केवल कहल नहि जाइत, बल्कि रोज-रोज जियल जाइत अछि।

मैथिलीकेँ बँचेबाक अर्थ केवल मैथिलीपर गर्व करब नहि अछि। मैथिलीमे सोचब, मैथिलीमे लिखब, मैथिलीमे पढ़ब, मैथिलीमे विवाद करब, मैथिलीमे नव पीढ़ीकेँ जोड़ब आ मैथिलीमे समाजक वास्तविक प्रश्नकेँ व्यक्त करब, सएह असली भाषा-सेवा अछि। भाषा मंचक घोषणा मात्रसँ नहि बँचैत अछि। भाषा तखन बँचैत अछि, जखन ओ जीवनक सामान्य बेवहारसँ लऽ कऽ विचारक पैघ प्रश्न धरि सोभाविक रूपसँ उपस्थित रहैत अछि।

भाषाक संकट प्रायः बाहरसँ कम आ भीतरसँ बेसी अबैत अछि। जखन हम अपन भाषाकेँ छोट मानए लगै छी, तखन दोसर ओकरा छोट कहबाक साहस पाबैत अछि। जखन हम अपन भाषामे विचारक पैघ प्रश्न नहि उठबै छी, तखन लोक बुझए लगैत अछि जे ई भाषा केवल घर-परिवारक बोलीचाली धरि सीमित अछि। ई धारणा भाषा लेल नहि, समाज लेल खतरनाक अछि।

मण्डलजीक दृष्टि ऐ भ्रमकेँ तोड़ैत अछि। हुनका लग भाषा समाजक आत्मा छी। जे समाज अपन भाषाकेँ सम्मान नहि दऽ सकैत, ओ अपन अनुभव, इतिहास,

स्मृति आ अस्मिताक पूरा अर्थ सेहो नहि बँचा सकैत। भाषा केवल बजबाक-बोलबाक माध्यम नहि, अपन लोकक भीतरक जीवनकेँ चिन्हबाक आधार सेहो अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे मैथिली कमजोर नहि अछि। कमजोर अछि हमर भरोस, हमर निष्ठा आ हमर नियमित बेवहार। भाषा तखन मजगूत होइत अछि, जखन ओकर लोक ओकरा अपन जीवन, विचार, श्रम, संघर्ष आ भविष्यक भाषा बनबैत अछि। मैथिलीकेँ कमजोर कहबासँ पहिने हमरा अपन भरोसकेँ देखबाक चाही। कारण भाषा तखने धरि जीवित आ समर्थ रहैत अछि, जखन धरि ओकर लोक ओकरा अपन आत्माक आवाज मानि बेवहार करैत रहैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 32

सत्य हाशियाक नहि,

ओकर स्वीकृति विलम्बित अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "मुदा मूलवासीक जीवन-शैली आ रीति-नीतिक पूर्ण विलयन ने तँ सम्भव छल आ ने से भेल। आइयो ओ दूबि बनि माटि पकड़ने छैथ।" (पृ. 19)

ई पंक्ति सांस्कृतिक वर्चस्वक बीच लोकजीवनक अदम्य जीवन-शक्तिक परिचय दैत अछि। मण्डलजी बतबै छैथ जे आरोपित संस्कृति चाहे केतबो प्रभावी रहल हो आ सत्ता चाहे केतबो मजगूत रहल हो, मूलवासीक जीवन-शैली आ रीति-नीतिक पूर्ण विलयन सम्भव नहि भेल। ओकरा दबौल गेल, कात राखल गेल, ओकर प्रतिष्ठा घटौल गेल आ ओकर नाओं बदैल देल गेल, मुदा ओकर अस्तित्व समाप्त नहि भेल। ओ माटि पकड़ने रहल, दूबि जकाँ।

दूबि देखबामे छोट होइत अछि, मुदा ओकर जड़ि माटिक भीतर दूर धरि पसरल रहैत अछि। ओकरा रौंदल जा सकैत अछि, काटल जा सकैत अछि, मुदा सहजतासँ मिटौल नहि जा सकैत। अनुकूल अवसर भेटिते ओ फेर माटिक भीतरसँ निकैल अबैत अछि। मण्डलजी मूलवासीक जीवन-शैलीक तुलना अही जीवन-शक्तिसँ करै छैथ। ई सुन्दर बिम्ब मात्र नहि, दबावक बीच बँचल लोकजीवनक गहींर सामाजिक व्याख्या अछि।

ऐठाम 'हाशिया' आ 'विलम्बित सत्य'क अन्तर बुझब जरूरी अछि। हाशिया समाजमे कात राखल जेबाक अवस्था अछि, जखन कि विलम्बन स्वीकृति, पहिचान आ अभिलेखनमे भेल देरीक संकेत अछि। जइ समुदायकेँ सत्ता कात राखलक, ओ इतिहासमे हाशियापर अवश्य छल। मुदा ओकर जीवन-सत्य अपन मूल्य आ महत्त्वमे हाशियाक नहि छल। ओ जीवन पहिनेसँ उपस्थित छल; विलम्बित मात्र ओकर सामाजिक स्वीकृति आ इतिहासमे उचित अभिलेखन भेल।

'हाशिया' शब्द अन्यायकेँ चिन्हबाक लेल उपयोगी अछि। ई बतबैत अछि जे कोनो समुदायकेँ सत्ता आ संसाधनक केन्द्रसँ दूर राखल गेल। मुदा जँ हाशियाकेँ ओइ समुदायक स्थायी परिचय बना देल जाए, तँ शब्द स्वयं एकटा नव सीमा बनि सकैत अछि। केकरो हाशियापर राखल गेल कहब ऐतिहासिक अन्यायकेँ चिन्हब अछि; ओकरा सोभावतः हाशियाक मानि लेब ओइ अन्यायकेँ स्वीकार करब अछि।

मण्डलजीक दृष्टि ऐठाम विशेष महत्त्व रखैत अछि। ओ दबौल जीवनकेँ मृत जीवन नहि मानै छैथ। जे रीति निम्न कहि उपेक्षित कएल गेल, से लोकक बेवहारमे जीवित रहल। जे भाषा अशुद्ध कहल गेल, से लोकक कण्ठमे बजैत रहल। जइ ज्ञानकेँ शास्त्रीय मान्यता नहि भेटल, से खेती, श्रम, प्रकृति आ सामूहिक जीवनकेँ चलबैत रहल। सत्ता ओकर प्रतिष्ठा घटा सकल, मुदा ओकर उपयोगिता आ जीवन-शक्ति समाप्त नहि कऽ सकल।

साहित्यक जिम्मेदारी एत्तै बढ़ि जाइत अछि। साहित्य दबौल जीवनकेँ अस्तित्व नहि दैत; ओ पहिनेसँ उपस्थित अस्तित्वकेँ दृश्य आ पठनीय बनबैत अछि। जेकर इतिहास देरीसँ दर्ज भेल, ओकरा धैर्य आ संवेदनासँ पढ़ब साहित्यक नैतिक जिम्मेदारी अछि। जइ जीवनकेँ बहुत दिन धरि कात राखल गेल, ओकर उचित स्थान स्वीकार करब कोनो कृपा नहि, साहित्यिक आ सामाजिक न्याय अछि।

दूबिक बिम्ब हमरा ईहो बुझबैत अछि जे लोकजीवन स्मृतिक विषय मात्र नहि। ओ वर्तमानमे सेहो जीवित अछि। ओकर रीति, भाषा, ज्ञान आ सामूहिकता बदलैत समयक बीच नव रूप धारण करैत रहैत अछि। तँए ओकरा संग्रहालयक वस्तु बनाकऽ नहि, जीवित सामाजिक अनुभवक रूपमे बुझबाक चाही।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे हाशियापर राखल जीवनकेँ नव नजैरसँ पढ़ू। बहुत बेर साहित्यक भविष्य ओतएसँ खुलैत अछि, जेतए इतिहासक आँखि देरीसँ पहुँचैत अछि। जे धारा मुख्य इतिहाससँ बाहर राखल गेल, से दोसर दर्जाक इतिहास नहि, समाजक जीवनक ओ जरूरी पक्ष अछि, जेकरा बिना इतिहासक समग्र रूप सामने नहि आबि सकैत।

सत्य हाशियाक नहि होइत, ओकर स्वीकृति विलम्बित भऽ सकैत अछि। तँए दबौल जीवन-सत्यकेँ पढ़ू, स्वीकार करू, अध्ययन करू आ साहित्यमे ओकर उचित स्थान दिअ। समाजक इतिहास तखनहि समग्र बनत, जखन दबौल स्मृति सेहो अपन नाम, अपन स्वर आ अपन अस्मिताक संग दर्ज भऽ जाएत।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 33

अतीतक गौरवमे अँटकल साहित्य,

वर्तमानक धड़कन नहि सुनैत

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “जहाँतक साहित्यिक प्रवृत्तिक प्रश्न अछि, ओ अखनो अतीतोन्मुखी अछिए। जरूरत अछि सम-सामयिक बनबाक, तइमे कमी अछि। ओ कमी के दूर करत? हमहीं-अहाँ ने करबै।” (पृ. 110)

ई पंक्ति मैथिली साहित्यक वर्तमान प्रवृत्तिपर गम्भीर प्रश्न उठबैत अछि। मण्डलजी अतीतकेँ नकारै नहि छैथ। ओ परम्परासँ सम्बन्ध तोड़बाक बातो नहि कहै छैथ। मुदा ओ सचेत करै छैथ जे साहित्य जँ अतीतक गौरवमे अँटैक जाए, तँ वर्तमानक जीवन आ ज्वलन्त प्रश्नक संग ओकर सम्बन्ध कमजोर पड़ि जाएत।

अतीत समाजकेँ स्मृति, परम्परा आ सांस्कृतिक आधार दैत अछि। मुदा साहित्यक दायित्व खाली अतीतक उपलब्धि गनाएब नहि। ओकर काज वर्तमानक धड़कन सुनब, बदलैत समाजकेँ देखब, नव समस्याकेँ चिन्हब आ अपन समयक मनुक्खक पीड़ा, संघर्ष तथा आकांक्षाकेँ शब्द देब सेहो अछि। जे साहित्य वर्तमानकेँ नहि पढ़ैत, ओ धीरे-धीरे पाठकक जीवनसँ दूर पड़ि जाइत अछि।

“सम-सामयिक बनबाक” मण्डलजीक आह्वान फैशनक पाछू भागबाक आग्रह नहि। समसामयिक बनबक माने अपन समयक वास्तविकतासँ

साक्षात्कार करब। आजुक किसान केना जीबैत अछि? मजदूरक श्रम आ अधिकारक स्थिति की अछि? गामक नवपीढ़ी पलायन लेल किएक विवश अछि? घर-परिवारमे मैथिलीक स्थान केतेक बँचल अछि? महिलाक अनुभव आ संघर्षमे कोन परिवर्तन आएल अछि? डिजिटल युगमे भाषा-साहित्यक नव जिम्मेदारी की अछि? साहित्यिक मंच आ संस्थामे किनका स्थान भेटैत अछि आ के कातमे छोड़ल जाइत अछि? ई सभ प्रश्न वर्तमान जीवनक भीतरसँ उठैत अछि।

जँ साहित्य केवल गौरवक कथा सुनबैत रहत, तँ समाजक वर्तमान पीड़ा उपेक्षित रहि जाएत। जँ ओ पुरान उपलब्धिक बखान आ पुनरावृत्तिमे ओझराएल रहत, तँ नव चुनौतीक सामना केना हएत? जखन साहित्यिक संसार स्थापित नामक परिक्रमा धरि सीमित भऽ जाएत, तँ नव स्वर आ नव विषयकेँ स्थान केना भेटत, नव पाठक साहित्यसँ केना जुड़त आ नव पीढ़ीक लेल आगू बढ़बाक बाट केना खुजत? मण्डलजीक प्रश्न अही बिन्दुपर साहित्यक भूमिका, दायित्व आ भविष्यक सम्बन्धमे गहींर आत्मपरीक्षणक माँग करैत अछि।

“ओ कमी के दूर करत?” ई प्रश्न पुछि मण्डलजी केवल दोष नहि गनबै छैथ। ओ उत्तरदायित्वक घेरामे अपनाकेँ सेहो रखै छैथ। “हमहीं-अहाँ ने करबै” कहैत ओ लेखक आ पाठकक बीचक दूरी मेटा दइ छैथ। ऐ “हमहीं-अहाँ”मे लेखक, पाठक, शिक्षक, विद्यार्थी, शोधार्थी, सम्पादक, प्रकाशक, आयोजक आ संस्था सभ सम्मिलित अछि। साहित्यक वर्तमान आ भविष्य बनेबाक जिम्मा कोनो अदृश्य शक्तिक नहि, हमरे सभक अछि।

साहित्य तखने समसामयिक बनत, जखन हम अपन समयक लोकक स्वर सुनब। खेत-पथारमे बाजल जाइबला भाषा सुनब। रोजी लेल गाम छोड़ैत युवकसभक बेचैनी बुझब। घर-परिवारमे बच्चासभक मैथिलीसँ बढ़ैत दूरीक कारणकेँ खोजब। समाजक जातीय, आर्थिक, लैंगिक आ सांस्कृतिक दूरीकेँ चिन्हब। डिजिटल माध्यममे उभरैत नव पाठकवर्गक रुचि आ भाषा बुझब। जीवन जखन बदलैत रहत, तँ साहित्यक विषय, दृष्टि आ अभिव्यक्तिक पद्धतियो बदलैत रहत।

अही बिन्दुपर मण्डलजीक रचनात्मक दृष्टि आकर्षित करैत अछि। ओ अतीतक अनुभव आ लोकपरम्परासँ गहींर रूपेँ जुड़ल छैथ, मुदा वर्तमानक प्रश्नसँ

मुँह नहि मोड़ै छैथ। हुनकर रचनामे खेत, श्रम, गाम, जातीय विषमता, आर्थिक दूरी, शिक्षा, संस्कृति आ सामाजिक परिवर्तन जीवन्त अनुभवक रूपमे अबैत अछि। तँए हुनका लग साहित्य केवल सौन्दर्य-सृष्टि नहि, समाजकेँ अपन चेहरा देखेबाक दर्पण सेहो अछि।

अतीतसँ कटिकऽ वर्तमान नहि बनैत। मुदा अतीतकेँ पकड़ने रहिकऽ सेहो भविष्य नहि गढ़ल जा सकैत अछि। आवश्यकता अछि अतीतसँ शक्ति लेबाक, वर्तमानकेँ निर्भीकतासँ बुझबाक आ भविष्य लेल नव बाट बनेबाक। साहित्यक जीवन्तता अही यात्रामे अछि।

अतीतमे अँटकल साहित्य वर्तमान नहि गढ़ैत। जे साहित्य अपन समयक सुख-दुःख, संघर्ष आ सम्भावनासँ जुड़ैत अछि, वएह भविष्यक स्मृति बनैत अछि। मण्डलजीक "हमहीं-अहाँ" अही साहित्यिक जिम्मेदारीकेँ स्वीकार करबाक सामूहिक आह्वान अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 34

लोकक भाषामे लिखल साहित्य

लोककेँ प्रेमक सूत्रमे जोड़ैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "कर्मक क्षेत्र अपन गाम रहल जैठामक भाषा मैथिली छी तँए हिन्दीक विद्यार्थी रहितौं मैथिलीमे लिखै छी।" (पृ. 75)

ई पंक्ति मण्डलजीक भाषिक निष्ठा आ साहित्यिक निर्णयक स्पष्ट परिचय दैत अछि। ओ हिन्दीक विद्यार्थी रहला, मुदा रचनाक भाषा मैथिली चुनलैन। ई चयन भाषिक सुविधा वा केवल भावुक आग्रहक परिणाम नहि, बल्कि अपन जीवन, कर्मभूमि आ समाजक प्रति उत्तरदायित्वसँ लेल गेल निर्णय अछि। जे गाम हुनकर कर्मक क्षेत्र रहल, जे समाज हुनकर अनुभवक आधार बनल आ जे लोक हुनकर रचनाक पात्र बनल, ओकर भाषा मैथिली अछि। तँए हुनकर साहित्यिक भाषा सेहो ओत्तैसँ जन्मल।

भाषा रचनाकार लेल अभिव्यक्तिक साधन मात्र नहि होइत। भाषा जीवनक ओ घर होइत अछि, जेतए अनुभव अपन सहज रूपमे साँस लैत अछि। मण्डलजी बुझै छैथ जे गामक दुःख-सुख, किसानक चिन्ता, महिलाक अनकहल

अनुभव, बोनिहारक श्रम आ उपेक्षित लोकक संघर्ष मैथिलीमे अपन सोभाविक स्वर पबैत अछि। ओइ जीवनकेँ दोसर भाषामे व्यक्त करब सम्भव अछि, मुदा ओकर गन्ध, ताप, अपनापन, वाक्यक चालि आ माटिक स्पर्श ओतेक सहजतासँ सुरक्षित नहि रहि सकैत।

जइ भाषामे माए बच्चाकेँ सिनेहसँ शोर पाड़ैत अछि, पड़ोसी विपत्तिमे ढाढ़स बान्हैत अछि, लोक हँसी आ दुःख बाँटैत अछि, अपन गलती स्वीकारैत अछि आ सम्बन्धक टुटनकेँ फेर जोड़ैत अछि, ओ भाषा शब्दक भण्डार मात्र नहि रहैत। ओ समाजक प्रेम, स्मृति आ भायचाराक जीवित घर बनि जाइत अछि। अही भाषामे लिखल साहित्य पाठककेँ कथा मात्र नहि सुनबैत, ओकरा अपन लोक, अपन सम्बन्ध आ अपन सामूहिक जीवनसँ जोड़ैत अछि।

मण्डलजीक मैथिलीमे लिखब मैथिली-प्रेमक औपचारिक घोषणा भरि नहि, अपन कर्मभूमिक प्रति उत्तरदायित्व अछि। रचनाकार जइ लोकक बीच रहैत अछि आ जेकर श्रम, सम्बन्ध तथा संघर्षसँ अनुभव अर्जित करैत अछि, ओकरा ओइ लोकक भाषामे बजबाक नैतिक जिम्मेदारी सेहो रहैत अछि। मण्डलजी अही जिम्मेदारीकेँ स्वीकार करै छैथ। ओ भाषाकेँ मंचक आभूषण नहि बनबै छैथ, बल्कि ओकरा लोकजीवनक श्रम, संघर्ष, प्रेम, स्मृति आ स्वाभिमानकेँ अभिव्यक्त करबाक सामर्थ्य दइ छैथ।

हिन्दीक विद्यार्थी रहितो मैथिलीमे लिखब एकटा गहींर संकेत अछि। पढ़ाइ रचनाकारकेँ ज्ञान, विचार आ साहित्यिक संस्कार दैत अछि, मुदा जीवन ओकर रचनात्मक जड़ि आ वास्तविक दिशा निर्धारित करैत अछि। हिन्दी अध्ययन मण्डलजीकेँ बौद्धिक तैयारी देलक, मुदा हुनकर रचनात्मक संवेदना, सामाजिक अनुभव आ लोक-संवाद मैथिलीमे आकार ग्रहण केलक। हुनकर भाषिक चयन शिक्षा आ कर्मभूमिक बीच विरोध नहि, बल्कि दुनूक सार्थक समन्वय अछि।

साहित्यक भाषा तखन प्रामाणिक बनैत अछि, जखन ओ पात्रक जीवन, परिवेश आ अनुभवसँ मेल खाइत अछि। जँ खेतक मनुक्ख अपन बात बाजि रहल अछि, गामक महिला अपन अनुभव कहि रहल अछि, बोनिहार अपन श्रमक अर्थ खोलि रहल अछि वा बुढ़ किसान मौसम, माटि, पानि आ परिवारक बात करि

रहल अछि, तँ ओकर भाषा ओइ जीवनसँ कटिकऽ नहि रहबाक चाही। मण्डलजीक मैथिली अही कारण जीवन्त, धरती-स्पर्शी आ भरोसयोग्य बनैत अछि।

ऐ पंक्तिमे "कर्मक क्षेत्र" शब्दक विशेष महत्त्व अछि। रचनाकारक कर्मक क्षेत्र जँ गाम अछि, तँ गाम ओकर विषय मात्र नहि, शिक्षक सेहो अछि। गाम ओकरा शब्द, मुहावरा, वाक्यक चालि, अनुभव आ दृष्टि दैत अछि। मण्डलजीक लेखनमे गाम पृष्ठभूमि मात्र नहि, रचना-चेतनाक आधार अछि। गामक भाषा हुनका लेल लोक-सत्य, सामाजिक सम्बन्ध आ मनुक्खक भीतरी जीवन धरि पहुँचबाक बाट अछि।

अपन भाषासँ प्रेमक अर्थ दोसर भाषाक विरोध नहि। जे प्रेम विरोध आ हीनताबोध पैदा करए, ओ साहित्यिक उदारता नहि। अपन भाषाक सम्मान जखन दोसर भाषा आ ओकर लोकक सम्मानसँ जुड़ैत अछि, तखने भाषिक प्रेम भायचाराक रूप ग्रहण करैत अछि। मण्डलजीक मैथिली-निष्ठा कोनो भाषिक दीवार नहि बनबैत। ओ अपन लोकक जीवनकेँ ओकर सहज भाषामे प्रतिष्ठा दैत अछि आ व्यापक मानवीय साहित्यकेँ समृद्ध करैत अछि।

साहित्यक गरिमा अहीमे अछि जे ओ अपन समाजक भाषाकेँ सम्मान दिअए। जइ भाषामे लोक हँसैत, कानैत, श्रम करैत, प्रेम व्यक्त करैत आ सामाजिक सम्बन्ध बनबैत अछि, ओइ भाषामे साहित्य रचब समाजक सामूहिक आत्मसम्मानकेँ स्वीकार करब अछि। लोकभाषामे लिखल साहित्य लोककेँ ई भरोस दैत अछि जे ओकर जीवन, श्रम, दुःख, प्रेम आ सपना साहित्यक योग्य अछि।

असली साहित्य भाषाक प्रदर्शन नहि, मनुक्खक बीच सम्बन्ध बनेबाक सृजनात्मक कर्म अछि। असली साहित्यकारक पहचान अहीमे अछि जे ओ अपन भाषाकेँ लोकसँ आ लोककेँ व्यापक मानवतासँ जोड़ए। मण्डलजीक लेखन बतबैत अछि जे साहित्य तखन प्रामाणिक होइत अछि, जखन रचनाकार अपन लोकक भाषामे अपन लोकक जीवन कहैत आ ओकरा भीतर बँचल प्रेम, सिनेह आ भायचाराकेँ स्वर दैत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 35

मिथिला सबहक, मैथिली सबहक, सेवा सेहो सबहक

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “मिथिला सबहक मातृभूमि आ मैथिली सबहक भाषा छी तँए अपन बुझि सेवामे लागि जाउ।” (पृ. 83)

ई पंक्ति मण्डलजीक समावेशी चेतनाक स्पष्ट उद्‌घोष अछि। ओ मिथिला आ मैथिलीकेँ कोनो जाति, वर्ग, क्षेत्र, संस्था वा खेमाक निजी सम्पैत नहि मानै छैथ। हुनका लग मिथिला सबहक मातृभूमि अछि आ मैथिली सबहक भाषा। तँए एकर अधिकार जखन सबहक अछि, तखन एकर सेवाक उत्तरदायित्व सेहो सबहक भेल।

मैथिली किछु लेखक वा विद्वानक लिखबाक भाषा मात्र नहि। ई घर-आँगनक भाषा अछि, लोक-कण्ठक भाषा अछि, संस्कार-गीतक भाषा अछि। ई खेत-पथार, हाट-बाजार, गामक गप-सप्प, कथा-कविता आ लोकक दुःख-सुखक भाषा अछि। लोकजीवनमे एतेक गहींर बसल भाषाकेँ किछु लोक धरि सीमित करब ओकर सोभाव आ सम्मान दुनूक विरुद्ध अछि।

मिथिला केवल भूगोलक नाम नहि। मिथिला एकटा सांस्कृतिक सम्बन्ध अछि, जे मधुबनी, दरभंगा, सुपौल, सहरसा, पूर्णिया, कटिहार, सीतामढ़ी, जनकपुर, विराटनगरसँ लऽ कऽ देश-दुनियाँमे पसरल मैथिली लोककेँ जोड़ैत अछि। मण्डलजीक ‘सबहक’ शब्द ऐ सम्बन्धक सीमा बढ़बैत अछि आ अधिकारक केन्द्रमे प्रत्येक मैथिलीभाषीकेँ अनैत अछि।

मैथिली सबहक भाषा अछि, तँए ओकर संरक्षण आ संवर्द्धनक उत्तरदायित्व सेहो सबहक अछि। एकर सेवा केवल विद्वान, लेखक वा संस्थाक काज नहि। लेखक अपन लेखनसँ, पाठक नियमित अध्ययनसँ, शिक्षक नवपीढ़ीकेँ पढ़ाकऽ आ गायक अपन स्वरमे मैथिलीकेँ जीवित राखिकऽ योगदान दऽ सकैत अछि। किसान अपन बोलीक सोभाविक रूपकेँ बँचाकऽ, माए बच्चाकेँ मैथिली बजाकऽ आ नवपीढ़ी डिजिटल माध्यममे मैथिलीकेँ स्थान दऽ कऽ भाषाक भविष्य मजगूत कऽ सकैत अछि। भाषा तखने बँचैत अछि, जखन ओकर बजनिहार प्रत्येक बेकती अपन हिस्साक उत्तरदायित्व बुझैत अछि।

“अपन बुझि सेवामे लागि जाउ” वाक्यक भीतर आदेशसँ बेसी आत्मीयता

अछि। मण्डलजी कहै छैथ जे मिथिला बाहरक वस्तु नहि, अपन अछि। मैथिली बाहरक भाषा नहि, अपन अछि। अपन चीजक सेवा लेल हकार वा अनुमति नहि चाही। जेतए छी, जे साधन अछि आ जेतेक सामर्थ्य अछि, ओत्तैसँ काज शुरू कएल जा सकैत अछि।

ऐ विचारक सामाजिक अर्थ सेहो गहींर अछि। जँ मैथिली सबहक भाषा अछि, तँ ओकर साहित्यक केन्द्रमे सेहो सबहक जीवन एबाक चाही। केवल अभिजन, मंच आ स्थापित नाम नहि; किसान, महिला, मजदूर, पिछड़ल-पछुआएल समाज, नव रचनाकार, लोकगायक आ लोककथा कहनिहारक अनुभवकेँ सेहो उचित स्थान भेटक चाही।

जइ भाषामे लोकक समूचा जीवन बाजैत अछि, ओइ भाषाक साहित्य सेहो लोकक समूचा जीवनकेँ समेटए। मैथिलीक सेवा केवल भाषण, समारोह वा स्मारिकासँ पूर्ण नहि होइत अछि। भाषामे नव लेखन, नीक प्रकाशन, नियमित पठन, बाल-साहित्य, अनुवाद, शोध आ डिजिटल उपस्थिति सेहो आवश्यक अछि।

सेवा प्रेमसँ जुड़ल अछि। प्रेमक बिना सेवा औपचारिक बनि जाइत अछि। सद्भावनाक बिना सेवा अहंकारक रूप लऽ सकैत अछि। समावेशक बिना सेवा किछु चुनल लोक धरि सीमित भऽ जाइत अछि। मण्डलजीक सेवा-दृष्टि सबहक भागीदारीपर आधारित अछि। तँए ई दृष्टि विभाजन नहि, मिलनक बाट खोलैत अछि।

पयस्विनी हमरा सिखबैत अछि जे भाषा बँचेबाक अर्थ व्याकरण वा लिपि बँचाएब मात्र नहि। भाषा बँचेबाक अर्थ लोकक आत्मविश्वास, सांस्कृतिक स्मृति, पारिवारिक सम्बन्ध, गामक अनुभव आ नवपीढ़ीक भाषिक अधिकार बँचाएब अछि। जे मैथिलीकेँ अपन बुझैत अछि, ओकरा मैथिली बजनिहार लोककेँ सेहो अपन बुझए पड़त।

मिथिला सबहक, मैथिली सबहक, सेवा सेहो सबहक। ई खाली घोषणा नहि, साझी जिम्मेदारीक संकल्प अछि। भाषा-प्रेमकेँ भावुकता धरि सीमित नहि राखि ओकरा सझिया श्रम, सझिया प्रतिष्ठा आ सझिया भविष्यक रूपमे जीबए पड़त।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 36

पोथीसँ फेसबुक धरि विचारक यात्रा

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “अधिक-सँ-अधिक हमसभ एकठाम भऽ कऽ अपन विचारक जे ‘आदान-प्रदान’ अछि ओ करैत रही।” (पृ. 44)

ई पंक्ति मण्डलजीक साहित्यिक-सांस्कृतिक दृष्टिक एकटा महत्त्वपूर्ण सूत्र अछि। हुनका लग साहित्य खाली पोथीक पृष्ठमे बन्न रहबाक वस्तु नहि अछि। साहित्य तखन जीवित रहैत अछि, जखन ओ पाठक धरि पहुँचैत अछि, संवाद बनैत अछि, प्रश्न उठबैत अछि आ समाजक भीतर विचारक हलचल पैदा करैत अछि।

ऐ दृष्टिसँ पोथीसँ फेसबुक धरि विचारक यात्रा केवल माध्यमक परिवर्तन नहि अछि। ई विचारक लोक-यात्रा अछि। जे विचार पहिने पोथीक पृष्ठमे पाठकक प्रतीक्षा करै छल, ओ आब सामाजिक माध्यम, माने सोशल मीडियाक माध्यमसँ अधिक लोक धरि पहुँच रहल अछि। ई पहुँच मात्र प्रचार नहि, साहित्यक लोक-सम्पर्क छी।

मण्डलजीक गद्यांश ऐ लेल महत्त्वपूर्ण अछि जे ओ पाठककेँ केवल सुन्दर वाक्य नहि दैत अछि, बल्कि सोचबाक धरातल दैत अछि। ओ परम्परापर प्रश्न करै छैथ, समाजक दूरी देखबै छैथ, हाशियाक आवाज सुनबै छैथ, भाषाक गरिमा चिन्हबै छैथ आ साहित्यक जिम्मेदारी तय करै छैथ। एहेन विचार जँ केवल पोथीक भीतर रहि जाए, तँ ओकर असर सीमित भऽ जाएत।

फेसबुकक खतरा ई अछि जे ओ बहुत बेर तात्कालिक प्रतिक्रिया, हलुक टिप्पणी आ क्षणिक प्रसन्नताक जगह बनि जाइत अछि। मुदा ओही फेसबुककेँ जँ विचारक मंच बनौल जाए, तँ ओ पाठककेँ फेर पोथी दिस मोड़ि सकैत अछि। छोट पोस्टक माध्यमसँ गहींर पोथीक दुआर खुजि सकैत अछि। एक पंक्ति, एक विचार आ एक टिप्पणी पाठकक भीतर पूरा पोथी पढ़बाक जिज्ञासा जगा सकैत अछि।

अही ठाम ऐ शृंखलाक अर्थ स्पष्ट होइत अछि। ‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु राखब माने मण्डलजीक विचारकेँ छोट करब नहि, बल्कि ओकरा पाठकक दिनचर्यामे प्रवेश कराएब अछि। जे पाठक तुरन्त पूरा पोथी नहि पढ़ि सकैत अछि,

ओ एक पंक्तिसँ, एक संकेतसँ, एक विचार-बिन्दुसँ सोचबाक शुरुआत कऽ सकैत अछि।

साहित्यक असली लोक-प्रसार तखन होइत अछि, जखन विचार पुस्तकालयक आलमारीसँ निकैल लोकक बातचीतमे अबैत अछि। जखन पाठक पूछए लगैत अछि, असहमति करैत अछि, अपन अनुभव जोड़ैत अछि आ फेर मूल पोथी दिस मुड़ैत अछि। ओइ क्षण साहित्य केवल लिखल वस्तु नहि रहैत, समाजक भीतर चलैत विचार बनि जाइत अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे विचारक काम केवल लिखल जाएब नहि, समाजमे चलब सेहो अछि। पोथी ओकर आधार छी, फेसबुक ओकर प्रसारक एक माध्यम। मुदा लक्ष्य एक्के अछि- साहित्यक माध्यमसँ समाजक भीतर विवेक, संवाद आ मनुक्खक गरिमाक चेतना जगाएब।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 37

आँगुरक इशाराक युगमे सुस्त समाज नहि चलि सकत, ओ लटुआए जाएत

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "आब अपना सभ एकैसमी सदीक वैज्ञानिक युगमे पहुँच गेल छी। एहेन समयमे जँ बाँसक फट्ठापर बाउल दऽ आगि निकालब, तँ ओइमे केतेक समय लागत, जखन कि आब आँगुरक एक इशारापर आगि उपलब्ध अछि।" (पृ. 110)

ई पंक्ति बदलैत समयक गतिपर मण्डलजीक तीक्ष्ण नजैर देखबैत अछि। जखन आधुनिक साधन सहज उपलब्ध अछि, तखन पुरान कठिन पद्धतिक मोहमे फँसल रहब समय आ श्रम दुनूक क्षति अछि। आँगुरक इशारापर आगि उपलब्ध हेबाक युगमे बाँसक फट्ठापर बाउल दऽ आगि निकालब खाली पुरान आदैतिक निर्वाह नहि, समयक वास्तविकतासँ कटि जाएब सेहो अछि।

ई तुलना परम्पराक तिरस्कार नहि। मण्डलजीक आग्रह समयानुकूल साधन चुनबाक अछि। परम्परा समाजकेँ ओकर जड़िसँ जोड़ैत अछि, मुदा विज्ञान ओकर सामर्थ्य बढ़बैत अछि। बुद्धिमानी अतीतक अनुभवकेँ सुरक्षित रखैत वर्तमानक साधनक उचित उपयोग करबामे अछि। युग बदलैत अछि तँ काज

करबाक पद्धति, विचार पहुँचेबाक माध्यम, संगठनक रूप आ पाठकसँ संवादक बाट सेहो बदलैत अछि।

अही ठाम मण्डलजीक वैचारिक सजगता धियान खींचैत अछि। ग्रामीण जीवनक परिचित बाँस, बाउल आ आगिक दृश्यसँ ओ वैज्ञानिक युगक जटिल सत्य बुझा दइ छैथ। हुनकर भाषा लोकजीवनसँ निकलैत अछि, मुदा दृष्टि समयक आगाँ धरि जाइत अछि। सरल उदाहरणक भीतर पैघ सामाजिक अर्थ भरि देब हुनकर गद्यक विशिष्ट सामर्थ्य अछि।

मैथिली समाज लेल ई पंक्ति विशेष महत्त्व रखैत अछि। आब केवल छपल पोथी धरि सीमित रहलासँ भाषा-साहित्यक काज पूरा नहि हएत। पोथी अपन स्थानपर आवश्यक अछि, मुदा ओकरा संग डिजिटल पाठ, ई-पोथी, ऑडियो, वीडियो, ऑनलाइन गोष्ठी, पाठ-समूह आ सुरक्षित डिजिटल संग्रह सेहो चाही। साहित्यकेँ पाठक धरि पहुँचेबाक बाट जेतेक विस्तृत हएत, भाषाक जीवनक्षेत्र तेतेक बढ़त।

आँगुरक एक इशारासँ विचार हजारो लोक धरि पहुँच सकैत अछि। मोबाइलपर कथा पढ़ल जा सकैत अछि। दूर देशमे रहैत मैथिल लोक अपन भाषा सुनि सकैत अछि। दुर्लभ पोथी डिजिटल रूपमे नव पाठकक हाथ धरि पहुँच सकैत अछि। जे विचार पहिने सीमित गोष्ठी वा अलमारीमे बन्द रहि जाइ छल, से आब व्यापक संवादक आधार बनि सकैत अछि। प्रश्न खाली साधन उपलब्ध हेबाक नहि, ओकर सार्थक उपयोग करबाक सेहो अछि।

सुस्ती केवल देहक नहि होइत। समाजो सुस्त होइत अछि, जखन ओ कहैत अछि, जेना चलि रहल अछि, चलए दियौ। साहित्यिक समाज तखन सुस्त होइत अछि, जखन ओ नव पाठक बनेबाक प्रयास नहि करैत। भाषा-समाज तखन सुस्त होइत अछि, जखन बच्चाक भाषा बदलैत देखलाक बादो चुप रहैत अछि। संस्था तखन सुस्त होइत अछि, जखन ओ गुट, जाति, पद, प्रतिष्ठा, आयोजन आ आर्थिक लाभक जोड़-तोड़मे फँसि अपन मूल काज बिसैर जाइत अछि। मण्डलजीक पंक्ति अही मानसिक आ संस्थागत सुस्तीक विरुद्ध चेतावनी अछि।

मुदा केवल गति उपलब्धिक प्रमाण नहि अछि। आधुनिक साधनक

उपयोग खाली चमक देखेबाक, प्रचार बढ़ेबाक, संख्या जुटेबाक अथवा ‘ई पैघ आ ओ पैघ, ई पहिल आ ओ प्रथम’ केर नारा लगबैत रहबाक नाम नहि। डिजिटल माध्यम विचारकेँ पलभरिमे दूर-दूर धरि पहुँचा सकैत अछि, मुदा विचारक सत्यता परखब, ओकर दिशा चुनब आ समाजपर पड़ैत प्रभावकेँ बुझब मानवीय विवेकक काज अछि। सामग्रीमे गम्भीरता, भाषामे जीवन, विचारमे स्पष्टता आ समाजक प्रति जिम्मेदारी रहबाक चाही। माध्यमक सार्थकता तखने अछि, जखन ओ मनुक्खकेँ मनुक्खसँ जोड़ए, पारस्परिक दूरी घटबए आ प्रेम, सद्भावना तथा सम्मानक वातावरण बनबए। डिजिटल गति लोकजागरण, ज्ञान-विस्तार आ सार्थक सांस्कृतिक संवादक गति बनए। साधन आधुनिक हो, मुदा ओकर उद्देश्य मानवीय सम्बन्धकेँ मजगूत करब आ समाजकेँ नीक दिशामे आगू बढ़ाएब रहए।

आइ मैथिली साहित्यक सोझाँ अवसर पैघ अछि। आब ओकर रचना भौगोलिक सीमाकेँ पार कऽ दुनियाँक कोनो कोणमे रहैत पाठक धरि पहुँच सकैत अछि। मुदा एकरा लेल जागल, तत्पर आ सुसंगठित समाज चाही। लेखककेँ नव माध्यमक सोभाव आ सम्भावना बुझए पड़त, सम्पादककेँ भाषाकेँ सहज, स्पष्ट आ प्रभावपूर्ण बनेबाक दायित्व निमाहए पड़त, प्रकाशककेँ साहित्यक डिजिटल पहुँच बढ़ाबए पड़त आ पाठककेँ गुणवत्तापूर्ण सामग्रीकेँ प्राथमिकता दैत ओकर पक्षमे ठाढ़ होमए पड़त।

पयस्विनी हमरा बुझबैत अछि जे समय बदललासँ अपने-आप समाज नहि बदलैत। समय साधन उपलब्ध करबैत अछि, ओकर सार्थक उपयोग मनुक्ख करैत अछि। जँ मनुक्ख सुस्त रहल, तँ आँगुरक इशाराक युगमे सेहो समाज अन्हारमे रहि सकैत अछि। जँ ओ जागल आ कर्मशील रहल, तँ छोटो माने सिमितो साधन लोकजागरणक दीप बनि सकैत अछि।

आँगुरक इशाराक युगमे सुस्त समाज नहि चलि सकत, ओ लटुआए जाएत। मैथिलीकेँ पढ़बाक, लिखबाक, सुनेबाक, बुझेबाक, पहुँचेबाक आ नवपीढ़ीसँ जोड़बाक काज तेज, सजग आ प्रेमपूर्ण ढंगसँ करए पड़त। समय हमर हाथमे आगि देलक अछि। आब ई हमरा सभपर निर्भर अछि जे ओइ आगिसँ इजोत करै छी आकि क्षणिक चमक देखैत रहि जाइ छी।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 38

कागतपर लिखल मूल्यक परीक्षा,

साहित्यकारक बेवहारमे होइत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ-

“आइ, मानि लिअ जे अहूँ नीक चाहि रहलिऐ हेन जे मैथिलीक कल्याण होइ, हमहूँ चाहि रहलिऐ हेन जे मैथिलीक कल्याण होइ, तखन मतभेद केतए? फेर मतभेद केतए भऽ जाइए? सभ दृष्टिकोणमे...।” (पृ. 44)

ई प्रश्न मतभेदक कारण खोजबाक संगहि साहित्यकारक सार्वजनिक आचरणपर विचार करबाक बाट सेहो खोलैत अछि। जखन सभक घोषित उद्देश्य मैथिलीक कल्याण अछि, तखन व्यक्तिगत अहंकार, आपसी विद्वेष, गुटबन्दी आ एक-दोसराकेँ कमजोर करबाक प्रवृत्ति कोन ठामसँ जन्म लैत अछि? जँ रचनामे लोकहितक पक्ष लेल जाए, मुदा बेवहारमे निजी हित प्रधान भऽ जाए, तँ विचार आ आचरणक बीच दूरी उत्पन्न होइत अछि।

साहित्यकारक चरित्रक अर्थ ओकर निजी जीवनमे अनावश्यक प्रवेश करब नहि अछि। ऐठाम चरित्रसँ आशय ओकर सार्वजनिक साहित्यिक बेवहारसँ अछि। ओ असहमत बेकतीक सम्मान करैत अछि आकि ओकरा शत्रु मानि लैत अछि? आलोचनाकेँ आत्मपरीक्षणक अवसर बुझैत अछि आकि व्यक्तिगत अपमान? नव रचनाकारकेँ आगू बढ़बाक अवसर दैत अछि आकि अपन स्थानक डर देखाकऽ ओकर बाट रोकैत अछि? दोसराक उपलब्धिक सम्मान करैत अछि आकि ओकरा छोट सिद्ध करबाक प्रयास? साहित्यिक चरित्र अही प्रश्नसभक उत्तरमे देखाइत अछि।

कागतपर प्रेम, समानता, न्याय, भायचारा आ मानवीय गरिमाक पक्षमे लिखब अपेक्षाकृत सहज अछि। कठिन ई अछि जे ओही मूल्यकेँ अपन बेवहारमे सेहो उतारल जाए। जे लेखक रचनामे समानताक पक्षधर अछि, मुदा साहित्यिक जीवनमे पद, प्रतिष्ठा, जाति, संस्था वा निकटताक आधारपर लोकक मूल्यांकन करैत अछि, ओकर कथनी आ करनी परस्पर विरोधी भऽ जाइत अछि। एहेन विरोधाभास धीरे-धीरे ओकर रचनाक नैतिक विश्वसनीयताकेँ सेहो कमजोर करैत अछि।

विचार आ बेवहारमे पूर्ण संगति साधब सहज नहि। प्रत्येक मनुक्खमे सीमा, चूक आ अन्तर्विरोध रहैत अछि। साहित्यकारो एकर अपवाद नहि। मुदा ओकर विशेष दायित्व ई अछि जे ओ अपन अन्तर्विरोधकेँ चिन्हए, आलोचनासँ सीखए आ अपन बेवहारकेँ लिखल मूल्यक समीप अनबाक निरन्तर प्रयास करए। चूक भऽ जाएब मानवीय अछि; चूककेँ स्वीकार नहि करब आ ओकरा उचित सिद्ध करैत रहब बेसी चिन्ताजनक अछि।

साहित्य समाजकेँ खाली शब्दे नहि दैत अछि; ओ जीवन-दृष्टि सेहो दैत अछि। तँए साहित्यकारक प्रभाव ओकर रचना धरि सीमित नहि रहैत। ओकर आचरण नव लेखक, पाठक आ सम्पूर्ण साहित्यिक वातावरणकेँ प्रभावित करैत अछि। जँ वरिष्ठ साहित्यकार उदारता, संवाद आ न्यायपूर्ण बेवहारक उदाहरण रखै छैथ, तँ साहित्यिक समाजमे विश्वास बढ़ैत अछि। जँ ओ उपेक्षा, ईर्ष्या आ गुटबन्दीकेँ प्रोत्साहित करै छैथ, तँ ओ प्रवृत्ति आगूक पीढ़ी धरि सेहो पहुँचैत अछि।

मतभेद विचारक सोभाविक परिणाम अछि। दू गोट बेकती मैथिलीक कल्याण चाहितो ओकर विकासक बाटपर असहमत भऽ सकैत अछि। ई असहमति दोष नहि; साहित्यिक विकासक आधार बनि सकैत अछि। दोष तखन उत्पन्न होइत अछि, जखन दृष्टिकोणक अन्तरकेँ व्यक्तिगत शत्रुतामे बदैल देल जाइत अछि। स्वस्थ साहित्यिक चरित्र असहमतिमे सेहो सम्बन्ध, सम्मान आ समान उद्देश्यकेँ सुरक्षित रखैत अछि।

साहित्यकारक वास्तविक परिचय केवल ओकर प्रकाशित पोथी, पुरस्कार वा प्रशंसासँ नहि होइत। ईहो देखल जाइत अछि जे साहित्यिक जीवनमे ओकर उपस्थिति केहेन वातावरण बनबैत अछि। ओकरासँ संवाद बढ़ैत अछि आकि डर? नव प्रतिभाकेँ स्थान भेटैत अछि आकि ओकर बाट रोकल जाइत अछि? साहित्यक लोक एक-दोसराक समीप अबै छैथ आकि आरो विभाजित होइ छैथ?

जँ मैथिलीक कल्याण सबहक लक्ष्य अछि, तँ साहित्यकारक रचना आ बेवहार दुनूमे ओ लक्ष्य देखाइ पड़बाक चाही। कागतपर लिखल मूल्य तखने पूर्ण विश्वसनीय बनैत अछि, जखन ओकर इजोत साहित्यकारक सार्वजनिक आचरणमे सेहो देखाइत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 39

गुट साहित्यकेँ सीमित करैत अछि,

सबहक उद्देश्य ओकर विस्तार करैत अछि।

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ-

"औझुका जे कार्यक्रम देखलौं हेन जइमे ठीके शिवकुमार बाबू कहलैन हेन जे 'किछु गोरे ग्रूप बना कऽ..!' मुदा नहि.., आइ जहिना एकठाम सभकियो एक विचारसँ, एक समस्याकेँ मानि कऽ, जे मैथिलीक कल्याणक सबाल अछि ऐ बिन्दुपर अगर जँ हम एकजुट भऽ अहिना आगू बढ़ैत रहब तँ मैथिलीक विकास... हेबे करतै।" (पृ. 43)

ई कथन साहित्यिक गुटबन्दीक विपरीत सामूहिकताक महत्त्व स्पष्ट करैत अछि। साहित्य सोभावतः अनेक विचार, प्रवृत्ति, पीढ़ी आ सृजन-पद्धतिक क्षेत्र अछि। ऐ विविधताकेँ समाप्त करब उचित नहि। मुदा विविधताक नामपर एहेन घेरा बना लेब सेहो साहित्यक हितमे नहि, जइमे अपन लोकक प्रत्येक रचना श्रेष्ठ आ घेरासँ बाहरक प्रत्येक काज महत्वहीन बुझाइ।

समान विचार वा रुचिबला लोकक एकठाम भऽ काज करब सोभाविक अछि। प्रत्येक साहित्यिक समूह गुट नहि होइत अछि। समूह जखन खुलल संवाद, रचनात्मक सहयोग आ साहित्यक व्यापक हितपर आधारित रहैत अछि, तखन ओ साहित्यकेँ समृद्ध करैत अछि। मुदा जखन सम्बन्ध रचनाक मूल्यांकनक आधार बनि जाए, योग्यताक स्थान पक्षधरता लऽ लिअए आ साहित्यिक हितपर अपन घेराक लाभ भारी पड़ए लगए, तखन समूह गुटमे बदैल जाइत अछि।

गुट अपन सदस्यकेँ प्रशंसा करैत अछि, मुदा केतेको बेर आवश्यक आलोचनासँ वंचित सेहो राखि दैत अछि। घेराक भीतर सभ एक-दोसराक प्रत्येक काजकेँ नीक कहैत रहैथ, तँ रचनात्मक विकासक बाट बन्न भऽ जाइत अछि। दोसर दिस, घेरासँ बाहरक श्रेष्ठ काजकेँ केवल अपन नहि हेबाक कारण उपेक्षित कएल जाए, तँ भाषा योग्य रचना, प्रतिभा आ नव सम्भावनासँ वंचित होइत अछि।

साहित्यिक गुटबन्दीक सभसँ पैघ क्षति नव रचनाकारकेँ होइत अछि। ओकर रचना पढ़बासँ पहिने जँ ई पुछल जाए जे ओ केकर निकट अछि, कोन

संस्थासँ जुड़ल अछि अथवा कोन पक्षक लोक अछि, तँ प्रतिभासँ बेसी सम्पर्क महत्त्वपूर्ण बनि जाइत अछि। किछु लोक सहज अवसर पबैत अछि आ किछु योग्य होइतो उपेक्षित रहि जाइत अछि। फलतः साहित्यक भीतर निराशा, अविश्वास आ दूरी बढ़ैत अछि।

एकजुटताक अर्थ सभक विचारकेँ एक रंगक बना देब नहि। एकजुटता ई अछि जे मतभेद रहितो सबहक हितसँ जुड़ल प्रश्नपर संग ठाढ़ भेल जाए। भाषा, साहित्य, पाठक, प्रकाशन, शिक्षा आ नव पीढ़ीक हित एहेन महत्त्वपूर्ण प्रश्नसभ अछि, जैपर अलग-अलग विचारधाराक लोक सेहो सहयोग कऽ सकै छैथ। सहमति लक्ष्यपर रहए आ ओकर उपायपर खुलल विचार-विमर्श चलैत रहए।

मैथिलीक विकास कोनो एक संस्था, समूह वा बेकतीक उपलब्धि नहि भऽ सकैत अछि। एक ठाम सृजन होइत अछि, दोसर ठाम सम्पादन; कियो प्रकाशन करैत अछि, कियो समीक्षा; कियो पाठक तैयार करैत अछि, कियो भाषा-शिक्षणक काज। ई सभ प्रयास जखन परस्पर सम्मानसँ जुड़ैत अछि, तखने साहित्यिक विकास व्यापक रूप लैत अछि।

गुटबन्दी मतभेदसँ नहि, असहिष्णुतासँ जन्म लैत अछि। स्वस्थ साहित्यिक समाजमे आलोचना रहत, विचारक टकराव सेहो रहत। मुदा ओइ टकरावक उद्देश्य बेकतीकेँ पराजित करब नहि, विचारकेँ स्पष्ट आ रचनाकेँ समृद्ध करब हेबाक चाही। जँ असहमतिक कारण संवाद बन्न भऽ जाए, तँ अन्ततः सभ पक्षक क्षति होइत अछि।

मण्डलजीक आग्रह सभकेँ एक मतक बना देबाक नहि, मैथिलीक कल्याणक समान धरतीपर एकठाम अनबाक अछि। साहित्यक वास्तविक शक्ति बन्द घेरामे नहि, खुलल सहभागितामे विकसित होइत अछि। गुट अपन सीमित लोककेँ स्थान दैत अछि; व्यापक उद्देश्य सम्पूर्ण भाषिक समाजक लेल बाट खोलैत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 40

विचारक विनिमय संवाद बढ़बैत अछि,

संवाद साहित्यकेँ गतिशील रखैत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ-

“तँए चाहब जे अधिक-सँ-अधिक कार्यक्रम अहाँक साहित्यमे हुअए,

अधिक-सँ-अधिक हमसभ एकठाम भऽ कऽ अपन विचारक जे 'अदान-प्रदान' अछि ओ करैत रही।" (पृ. 43)

ई कथन साहित्यिक कार्यक्रमकेँ केवल औपचारिक आयोजन नहि, विचार-विनिमयक जीवन्त स्थानक रूपमे देखैत अछि। लोक एकठाम भेला, मंच सजल, भाषण भेल आ समाचार प्रकाशित भऽ गेल- एतबासँ कार्यक्रमक उद्देश्य पूरा नहि होइत। ओकर वास्तविक सार्थकता तखन अछि, जखन अलग-अलग अनुभव, प्रश्न आ दृष्टिकोण एक-दोसराक सोझाँ अबैत अछि।

रचनाकार अपन जीवनानुभव, अध्ययन आ परिवेशसँ एकटा दृष्टि अर्जित करैत अछि। मुदा कोनो एक दृष्टि जीवनक सम्पूर्ण सत्यकेँ समेट नहि सकैत अछि। संवाद ओकर सीमाकेँ स्पष्ट करैत अछि। दोसराक विचार सुनलासँ अपन मान्यताक परीक्षा होइत अछि, नव प्रश्न जन्म लैत अछि आ केतेको बेर जीवनक ओ पक्ष देखाइत अछि, जे एकाकी चिन्तनमे नजैरसँ छुटल रहैत अछि।

विचार-विनिमयक अर्थ केवल अपन बात कहब नहि, दोसराक बात धैर्यपूर्वक सुनब सेहो अछि। जँ प्रत्येक बेकती केवल बजबाक अवसर खोजत आ सुनबाक दायित्वसँ बचत, तँ मंचपर अनेक स्वर रहितो वास्तविक संवाद उत्पन्न नहि हएत। संवाद तखन बनैत अछि, जखन विचारक उत्तर विचारसँ देल जाए, प्रश्नकेँ सम्मान भेटए आ असहमत बेकतीक आशय बुझबाक प्रयास हो।

साहित्यिक कार्यक्रमक संख्या बढ़ब आवश्यक अछि, मुदा संख्यासँ बेसी ओकर प्रकृति महत्त्वपूर्ण अछि। कार्यक्रम केवल सम्मान, लोकार्पण आ प्रशंसाक अवसर बनि रहत, तँ ओकर प्रभाव सीमित रहत। ओइमे रचना-पाठक संग गम्भीर समीक्षा, खुलल प्रश्नोत्तर, भाषिक समस्या, प्रकाशनक स्थिति, पाठक-विस्तार आ नव लेखकक मार्गदर्शनपर सेहो विचार हेबाक चाही। एहेन कार्यक्रम साहित्यिक समाजकेँ आत्मपरीक्षणक अवसर दैत अछि।

विचारक विनिमय पीढ़ीसभकेँ सेहो जोड़ैत अछि। वरिष्ठ साहित्यकारक अनुभव नव लेखककेँ इतिहास, परम्परा आ रचनात्मक अनुशासनसँ परिचित करबैत अछि। नव पीढ़ीक प्रश्न वरिष्ठकेँ बदलैत समयक संवेदना, तकनीक आ अभिव्यक्तिक नवीन रूपसँ जोड़ैत अछि। जखन दुनू पीढ़ी एक-दोसराकेँ प्रतिद्वन्द्वी नहि, सहयात्री मानैत अछि, तखन साहित्यिक परम्परा गतिशील रहैत अछि।

भाषाक विकास केवल रचनाक संख्यासँ नहि होइत। ओकरा लेल लेखक, सम्पादक, आलोचक, प्रकाशक, शिक्षक आ पाठकक बीच निरन्तर सम्बन्ध आवश्यक अछि। संवादहीन साहित्यिक समाजमे नीक रचनाकेँ उचित पाठक नहि भेटैत अछि, आलोचना व्यक्तिगत प्रतिक्रिया बनि जाइत अछि आ अनेक उपयोगी प्रयास एक-दोसरासँ अनजान रहि जाइत अछि। विचार-विनिमय ई दूरी घटबैत अछि।

साहित्यिक संवादमे विनम्रता आवश्यक अछि। अपन विचारकेँ अन्तिम सत्य मानि लेब संवादक दुआर बन्न करैत अछि। अपनासँ फराक विचार सुनब आत्मसमर्पण नहि, बौद्धिक विस्तार अछि। असहमतिक बीचसँ जे स्पष्टता निकलैत अछि, ओ एकरूप प्रशंसासँ सम्भव नहि। प्रश्न विचारकेँ कमजोर नहि करैत अछि; ओकर आधारकेँ परखैत अछि।

मैथिलीक विकास निरन्तर चलएबला प्रक्रिया अछि आ ओकर गति साहित्यिक समाजक सक्रियतापर निर्भर करैत अछि। जेतेक बेसी सार्थक भेँट-घाँट, रचनात्मक संवाद आ निष्पक्ष विचार-विनिमय हएत, तेतेक भाषाक वैचारिक धरती समृद्ध हएत। एकठाम भेला मात्रसँ एकता नहि बनैत अछि; एक-दोसराकेँ सुनला, बुझला आ सबहक दायित्व स्वीकार केलासँ बनैत अछि।

मण्डलजी साहित्यिक कार्यक्रमक संख्या बढ़ेबाक संग ओकर उद्देश्य सेहो स्पष्ट करै छैथ। कार्यक्रमक सार मंचक ऊँचाइमे नहि, विचारक खुलापनमे अछि। जेतए विचार निर्भयतासँ राखल जाए, धैर्यसँ सुनल जाए आ लोकहितक आधारपर परखल जाए, ओत्तै संवाद साहित्यकेँ गतिशील बनबैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 41

रचना बैसारी समयक खेल नहि, जीवनक नियमित वृत्ति अछि

मण्डलजी लिखै छैथ-"उपन्यास, कथा लिखब जे जीवनक शुरूमे पकड़लक से अखनो ओहिना पकड़ने अछि, तँए कोन नीक कोन बेजाए, केना कहल जाए।" (पृ. 88)

ई कथन लेखनक संग मण्डलजीक आजीवन सम्बन्धकेँ प्रकट करैत अछि। कथा आ उपन्यास लिखब हुनका लेल कखनो-कखनो मनोरंजनक साधन नहि, जीवनक नियमित वृत्ति बनि गेल। जे लेखन जीवनक शुरूमे पकड़लक, से

समय, संघर्ष, सम्मान आ परिवर्तनक बीचोबीच अखनो ओहिना पकड़ने अछि। ई निरन्तरता रचनाकारक वास्तविक साधनाक परिचय अछि।

रचनाकेँ बैसारी समयक काज मानल जाए, तँ ओकर समय कहियो नहि अबैत अछि। परिवार, जीविका, सामाजिक दायित्व, बीमारी आ जीवनक छोट-पैघ समस्या सदिखन रहत। लेखक जँ सभ काज समाप्त भेलाक बाद बँचल समयक प्रतीक्षा करत, तँ रचना लगातार स्थगित होइत रहत। सृजन लेल समय अपने नहि भेटैत; जीवनक व्यस्तताक बीच ओकरा निर्धारित करए पड़ैत अछि।

नियमितताक अर्थ प्रतिदिन निश्चित संख्यामे पृष्ठ लिखब मात्र नहि। नियमितता जीवनकेँ लेखकक नजैरसँ देखैत रहब सेहो अछि। लोकक बात सुनब, घटना मोन राखब, शब्दक अर्थपर धियान देब, आवश्यक बात नोट करब, पढ़ब, विचारब आ लिखल सामग्रीकेँ फेरसँ परखब, ई सभ रचना-प्रक्रियाक हिस्सा अछि। कागतपर शब्द नहि उतैरितो लेखकक भीतर अनुभव आ विचार रचनाक रूप ग्रहण करैत रहैत अछि।

कथा वा उपन्यास जीवनक सतही विवरणसँ नहि बनैत अछि। पात्रक सोभाव, सामाजिक सम्बन्ध, घटनाक कारण, भाषाक लय आ अनुभवक भीतरी सत्य बुझबाक लेल धैर्य चाही। नियमित अभ्यास लेखककेँ सामान्य घटनाक भीतर नुकाएल असामान्य अर्थ देखबाक सामर्थ्य दैत अछि। जे घटना आन लोक लेल बीतल क्षण अछि, सएह सजग लेखक लेल कथा वा उपन्यासक आधार, कथासूत्र बनि सकैत अछि।

अर्थोपार्जन आ सृजनक बीच सन्तुलन बनाएब सेहो आवश्यक अछि। जीविका लेखककेँ जीवनक धरातल दैत अछि आ सृजन ओइ जीवनकेँ अर्थ प्रदान करैत अछि। दुनूकेँ एक-दोसरक विरोधी मानलासँ समस्या बढ़ैत अछि। जीवनक आवश्यक काजक संग अध्ययन आ सृजन लेल नियमित समय राखल जाए, तँ कठिन परिस्थितियोमे रचनात्मक क्रम बनल रहि सकैत अछि।

नियमित लेखनक संग पुनर्लेखन सेहो जुड़ल अछि। पहिल बेर लिखल प्रत्येक पंक्ति अन्तिम नहि होइत अछि। कथ्य स्पष्ट अछि आकि नहि, भाषा पात्र आ परिवेशक अनुकूल अछि आकि नहि, अनावश्यक विस्तार केतए अछि आ कोन आवश्यक बात छुटि गेल, ई सभ पुनर्लेखनमे देखल जाइत अछि। प्रेरणा रचनाक आरम्भ करा सकैत अछि, मुदा अनुशासन ओकरा सुगठित आ पूर्ण

करैत अछि।

विश्राम, चुप्पी आ अस्थायी विरामकेँ रचनात्मक निष्क्रियता नहि बुझबाक चाही। खेतकेँ जहिना प्रत्येक समय जोतल नहि जाइत, मुदा ओकरा भीतर नव उपजाक तैयारी चलैत रहैत अछि, तहिना लेखकक विराममे अनुभव, अध्ययन आ विचार सँजोगाइत रहैत अछि। प्रश्न ई नहि जे प्रत्येक दिन केतेक लिखल गेल; मूल प्रश्न ई अछि जे जीवन, समाज आ भाषासँ लेखकक सम्बन्ध जीवित अछि आकि नहि।

रचना बैसारी समयक खेल नहि, जीवनक नियमित वृत्ति अछि। प्रसिद्धि, पुरस्कार वा आमन्त्रणक प्रतीक्षासँ लेखनक क्रम नहि बनैत; अध्ययन, अवलोकन, समय-संयम, निरन्तर अभ्यास आ पुनर्लेखनसँ बनैत अछि। जे लेखक जीवनक व्यस्तताक बीचमे अपन रचनात्मक वृत्तिकेँ जीवित रखैत अछि, ओकर कलम अवसरक प्रतीक्षा नहि करैत; अपन तैयारी आ निरन्तरतासँ अवसर बनबैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 42

समाजसँ कटि साहित्यक भाँज नहि लगैत

मण्डलजी लिखै छैथ- "जाधैर साहित्य समाजक वस्तु नै बनत ताधैर के केकरा की कहै छिऐ से भाँज थोड़े लगत।" (पृ. 150)

ई पंक्ति साहित्यक सामाजिक अस्तित्वक बुनियादी शर्त सोझमे रखैत अछि। साहित्य जाधैर समाजक बीच नहि पहुँचत, ताधैर लोक केना बुझत जे के की कहि रहल अछि, केकरा पक्षमे बजैत अछि, कोन जीवनक प्रतिनिधित्व करैत अछि आ ओकर कथनक वास्तविक आधार की अछि? साहित्यक अर्थ, पक्ष, लक्ष्य आ प्रभाव तखने स्पष्ट होइत अछि, जखन ओ समाजक अनुभव आ विवेक दुनूक सामने अबैत अछि।

ऐठाम 'समाजक वस्तु'क अर्थ बाजारमे बिकैबला वस्तु नहि, सार्वजनिक सांस्कृतिक सम्पदा अछि। समाजक वस्तु बनब माने साहित्य लोकक पहुँचमे आबए, ओकर जीवनसँ संवाद करए, प्रश्न उत्पन्न करए आ अपन सत्यक सामाजिक जाँच करबए। लोकप्रियता एकर एकमात्र कसौटी नहि। कोनो रचना भलेँ सीमित लोक धरि पहुँचए, तैयो ओ समाजक जीवनक कोनो गहींर सत्यकेँ

प्रकट कऽ व्यापक सामाजिक महत्त्व प्राप्त कऽ सकैत अछि। मूल प्रश्न ई अछि जे ओ समाजसँ जीवन्त सम्बन्ध बनबैत अछि आकि साहित्यिक घेराक भीतर अपने प्रशंसा-आलोचनाक चक्करमे घुमैत रहैत अछि।

साहित्य केवल लेखकक निजी भाव वा बेकतीगत उपलब्धि नहि। ओ समाजक अनुभवक सार्वजनिक रूप अछि। लोकक दुःख-सुख, प्रेम, श्रम, संघर्ष, असमानता, अपमान, आत्मसम्मान आ भविष्यक आकांक्षा साहित्यमे शब्द पबैत अछि। लेखकक अनुभव निजी भऽ सकैत अछि, मुदा रचना बनलाक बाद ओ पाठकक अनुभवसँ जुड़ैत अछि। अही जुड़ावमे ओकर अर्थ विस्तार पबैत आ ओकर सामाजिक जीवन आरम्भ होइत अछि।

साहित्य समाजक बनबाक अर्थ ईहो अछि जे किसान ओइमे अपन श्रमक गरिमा देखि सकए, मजदूर अपन थकानक कारण चिन्हि सकए, महिला अपन असुनल अनुभवक प्रतिध्वनि पाबि सकए, पछुआएल लोक अपन मनुष्यता आ आत्मसम्मानक उपस्थितिक अनुभव कऽ सकए आ नवपीढ़ी अपन समयक प्रश्नसँ साक्षात्कार कऽ सकए। पाठक जखन कहैत अछि, “ई हमर जीवनक बात अछि,” तखने साहित्य लेखकक निजी संसारसँ निकैल सामूहिक चेतनाक हिस्सा बनैत अछि।

साहित्य जँ केवल मंच, संस्था वा सीमित साहित्यिक मण्डली धरि रहत, तँ समाज ओकर भाँज केना लगौत? जँ रचनाक चर्चा सम्बन्ध, गुट आ सुविधाक हिसाबसँ चलत, तँ पाठक ओकर मूल्य कोन आधारपर बुझत? जँ भाषा प्रतिष्ठित लोकक अभिव्यक्ति बनि रहत, तँ सामान्य लोकक जीवन ओकरा भीतर प्रवेश केना करत? समाजसँ कटि रचना बनत, तँ ओकर मूल्यांकन सेहो सामाजिक सत्यक बदला बेकतीगत सम्बन्धसँ संचालित होमए लगत।

“के केकरा की कहै छिऐ” वाक्य साहित्यिक संसारमे रहल अही अस्पष्टताकेँ प्रकट करैत अछि। जखन साहित्य समाजक सम्पदा नहि बनैत, तखन प्रशंसा आ आलोचना दुनूक विश्वसनीयता संदिग्ध भऽ जाइत अछि। कियो केकरा बढ़ा रहल अछि, केकरा दबा रहल अछि, केकरा साहित्यकार घोषित कऽ रहल अछि आ केकरा उपेक्षित राखि रहल अछि, समाज एकर वास्तविकता नहि बुझि पबैत। रचना पाछू छुटि जाइत अछि आ सम्बन्ध मूल्यक स्थान लऽ लैत अछि।

साहित्यक सामाजिकता अही बन्न घेराकेँ तोड़ैत अछि। रचना पाठकक हाथमे जाइत अछि, शिक्षक पढ़बैत अछि, विद्यार्थी प्रश्न करैत अछि, गोष्ठीमे सहमति-असहमति सामने अबैत अछि आ भिन्न जीवनानुभवक लोक ओकर अर्थ खोलैत अछि। धीरे-धीरे रचनाक मूल्य कोनो एक बेकती वा गुटक निर्णयसँ नहि, समाजक विकसित होइत विवेकसँ तय होमए लगैत अछि। ई प्रक्रिया धीमी भऽ सकैत अछि, मुदा साहित्यकेँ दीर्घजीवी बनबैत अछि।

मण्डलजीक साहित्य अही कारण महत्त्वपूर्ण अछि जे ओ समाजकेँ केवल विषयक रूपमे नहि चुनैत, समाजक भीतर जीबैत अपन रचनात्मक दृष्टि अर्जित करैत अछि। हुनकर पात्र सजावटी आकृति नहि, अपन श्रम, विवशता, स्वाभिमान आ आकांक्षाक संग जीवन-संघर्ष करैत लोक अछि। हुनकर प्रश्न अकादमिक शब्द-जाल नहि, जीवनक वास्तविक ओझरीसँ उपजल प्रश्न अछि। हुनकर भाषा मंचीय आडम्बरक भाषा नहि, लोकक साँस, श्रम, अनुभव आ स्मृतिसँ बनल भाषा अछि। तँए हुनकर साहित्य समाजसँ सम्बन्धक दावा मात्र नहि करैत, अपन सम्पूर्ण रचना-संसारसँ ओइ सम्बन्धक जीवन्त प्रमाण प्रस्तुत करैत अछि।

आइ लिखब, प्रकाशित करब आ प्रचार करब पहिनेसँ सहज भेल अछि। मुदा प्रकाशित भऽ जाएब आ समाजक वस्तु बनि जाएब एक बात नहि। साहित्य समाजक तखन बनैत अछि, जखन लोक ओकरा पढ़ैत, अपन जीवनसँ मिलबैत, प्रश्न करैत, असहमत होइत आ फेरो ओकरा संवादक योग्य बुझैत अछि। सामाजिकता प्रचारक संख्यासँ नहि, अर्थपूर्ण पाठकीय सम्बन्धसँ बनैत अछि।

समाजसँ कटि साहित्यक भाँज नहि लगैत। साहित्य समाजक बनत, तखने ओकर सत्य, पक्ष, गरिमा आ उपयोगिता साफ देखाएत। मण्डलजीक कथन साहित्यकेँ बन्न घेरासँ निकालि लोकक बीच अनबाक आह्वान अछि। साहित्य जखन समाजक अनुभवसँ जुड़ैत अछि, तखन ओ केवल लिखल शब्द नहि रहैत, सामाजिक चेतना आ आत्मपरीक्षणक इजोत बनि जाइत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 43

एक आँखि समाजपर, तखने कलम सार्थक

मण्डलजी लिखै छैथ- "शुभेक्षु साहित्यकारक दायित्व बनैए जे एक आँखि समाजपर रखि दोसर आँखि जखन कागत-कलमपर रखता तखन मैथिली साहित्ये नहि मिथिलाक कल्याण हएत।" (पृ. 150)

ई पंक्ति साहित्यकारक दायित्वकेँ अत्यन्त सहज बिम्बमे परिभाषित करैत अछि। एक आँखि समाजपर आ दोसर कागत-कलमपर। ई दू अलग-अलग दृष्टि नहि, एक्के रचनात्मक चेतनाक दू पक्ष अछि। समाज लेखककेँ जीवनक सत्य दैत अछि आ कागत-कलम ओइ सत्यकेँ साहित्यिक रूप देबाक माध्यम बनैत अछि। दुनू दृष्टि जखन एक बिन्दुपर मिलैत अछि, तखने रचना जीवनसँ जुड़ल आ कलात्मक रूपसँ समर्थ बनैत अछि।

समाजपर आँखि रखब माने दूरसँ ओकर निरीक्षण करब वा रचनाक विषय खोजबाक लेल ओकर उपयोग करब नहि। एकर अर्थ समाजक बीच रहब, ओकर बदलैत चालि बुझब, चुप्पीक अर्थ बुझब आ लोकक सुख-दुःखमे अपन सहभागिताक अनुभव करब अछि। खेत-पथार, घर-आँगन, विद्यालय, बाजार, कार्यालय आ बस्तीमे जे जीवन घटित भऽ रहल अछि, साहित्यकारक दृष्टि ओइसँ विमुख नहि रहबाक चाही। समाजक टुटैत सम्बन्ध, बढ़ैत दूरी, श्रमक उपेक्षा, भाषा-संकोच आ मनुक्खक भीतर बँचल प्रेम-सद्भावनाक सम्भावना, ई सभ ओकर चेतनामे उपस्थित रहए।

मुदा केवल समाजकेँ देखबासँ साहित्य नहि बनैत। अनुभवकेँ कलात्मक रूप देबाक लेल भाषा, अध्ययन, अनुशासन, संवेदना आ विचारक स्पष्टता चाही। कागत-कलमपर आँखि रखबाक अर्थ अही सृजनात्मक उत्तरदायित्वसँ अछि। रचनाकार अनुभवकेँ अनगढ़ रूपमे राखि नहि दइत। ओ ओकरा भीतरक अर्थ खोजैत, घटना आ कारणक सम्बन्ध चिन्हैत, चुप्पीक भाषा सुनैत आ जीवनक बिखरल संकेतकेँ एहेन रूप दैत अछि जे पाठकक मनमे नव विचार आ संवेदना जगा सकए।

समाजक दृष्टि बिगैर शिल्प आत्ममुग्ध प्रदर्शन बनि सकैत अछि आ शिल्पक साधना बिगैर सामाजिक अनुभव केवल विवरण बनि रहि सकैत अछि। साहित्यकेँ दुनू चाही। जीवनक तापो आ अभिव्यक्तिक संयमो। समाजक सत्यो आ कलाक अनुशासनो। मण्डलजीक दू आँखिक बिम्ब अही सन्तुलनक रचनात्मक आवश्यकता बतबैत अछि।

ऐ कथनक नैतिक केन्द्र 'शुभेक्षु साहित्यकार' शब्दमे अछि। शुभेक्षा केवल सदिच्छा वा कोमल भावना नहि। एकर अर्थ समाजक कल्याणक प्रति जिम्मेदार दृष्टि अछि। शुभेक्षु साहित्यकार समाजक दोष देखैत अछि, मुदा मनुक्खक

अपमान नहि करैत। ओ अन्यायक विरोध करैत अछि, मुदा घृणाकेँ अपन लक्ष्य नहि बनबैत। ओ टुटन देखबैत अछि, मुदा टुटन बढ़ेबाक बदला संवाद, न्याय आ सद्भावनाक सम्भावना खोजैत अछि।

एहेन साहित्यकारक आलोचना प्रेमहीन प्रहार नहि होइत। ओकर प्रेम सेहो अन्हर समर्थन नहि होइत। शुभेक्षा ओकरा सत्य कहबाक साहस दैत अछि आ मनुक्खक गरिमा बँचौने रखबाक विवेक सेहो। ओ समाजक कमजोरी नुकबैत नहि, मुदा ओकरा एना प्रस्तुत करैत अछि जे समाज अपन विकृति चिन्हि सुधारक बाटपर बढ़ि सकए। ओकर कलम दण्ड देबए नहि, चेतना जगबए चाहैत अछि।

अही कारण मण्डलजी साहित्यकारक दायित्वकेँ केवल मैथिली साहित्यक विकास धरि सीमित नहि रखै छैथ। ओ साहित्यक प्रश्नकेँ मिथिलाक भाषा, समाज, संस्कृति आ समग्र कल्याणसँ जोड़ि कऽ देखै छैथ। हुनका लेल मैथिली साहित्य आ मिथिलाक जीवन दू अलग क्षेत्र नहि, एक-दोसरकेँ अर्थ, शक्ति आ पहचान दइबला जीवन्त सम्बन्ध अछि।

जँ साहित्य मिथिलाक वास्तविक जीवन, श्रम-संस्कृति, संघर्ष, असमानता, लोकबुधि, भाषा-बोध, पारिवारिक-सामाजिक सम्बन्ध आ बदलैत आकांक्षाक साक्षी नहि बनत, तँ मैथिली केवल लिखल-पढ़ल शब्दक भाषा बनि रहि जाएत, लोकजीवनक सक्रिय भाषा नहि। एहेन साहित्य अपन समाजक स्मृति, पीड़ा, प्रश्न आ सम्भावनासँ धीरे-धीरे कटैत जाएत। भाषा पोथी आ मंचपर तँ देखाएत, मुदा लोकक दैनिक जीवन, विचार आ संवादमे ओकर स्थान कमजोर पड़ैत जाएत।

दोसर दिस, जँ मैथिली साहित्य समाजक गहींर अनुभव, श्रमशील लोकक आवाज, उपेक्षित समुदायक आत्मसम्मान आ बदलैत समयक प्रश्नकेँ स्वर देत, तँ ओ केवल भाषाकेँ बँचाएत नहि, समाजकेँ अपने इतिहास, वर्तमान आ भविष्य बुझबाक दृष्टि सेहो देत। साहित्य लोककेँ अपन स्थिति चिन्हबैत, अपन सामर्थ्य बुझबैत आ सामाजिक सम्बन्धकेँ बेसी मानवीय बनेबाक प्रेरणा दैत अछि। तँए मैथिली साहित्यक विकासक अर्थ केवल पोथीक संख्या, लेखकक प्रसिद्धि वा संस्थागत विस्तार नहि, मिथिलाक जीवनकेँ अधिक सजग, संवेदनशील, न्यायपूर्ण आ आत्मचेतस बनाएब सेहो अछि।

साहित्य समाजक भीतर दबल प्रश्नकेँ सार्वजनिक करैत अछि। ओ लोककेँ अपन जीवन, बेवहार आ बेवस्थापर सोचबाक अवसर दैत अछि। आत्मसम्मान जगबैत, अन्यायक पहिचान करबैत आ भाषा-प्रेमकेँ केवल भावुक घोषणासँ निकालि जीवनक बेवहारमे अनैत अछि। साहित्यक माध्यमसँ समाज अपन स्मृति बँचबैत अछि आ भविष्यक दिशा सेहो खोजैत अछि। ऐ अर्थमे साहित्यकारक कलम भाषाक सेवाक संग समाजक सेवा करैत अछि।

आइ शब्द लिखब, सजाएब आ प्रसारित करब पहिनेसँ सहज भेल अछि। तकनीक शब्द जुटा सकैत अछि, भाषा-रूप बना सकैत अछि आ अभिव्यक्तिक गति बढ़ा सकैत अछि, मुदा सामाजिक उत्तरदायित्व अपने नहि उठा सकैत। कोन पीड़ाकेँ स्वर देबाक अछि, कोन अन्यायक विरोध करबाक अछि, आलोचनाकेँ घृणासँ केना बँचाएब आ मनुक्खक बीच प्रेम तथा सद्भावनाक आधार केना मजगूत करब, ई निर्णय सजग मानवीय विवेककेँ लेबए पड़ैत अछि।

साहित्यकार समाजक ऊपर बैस ओकर निर्णय सुनबैबला बेकती नहि। ओ समाजक भीतर रहि, ओकरा बुझि, ओकर हितमे आ ओकरा प्रति उत्तरदायी भऽ कऽ लिखनिहार अछि। ओकर कलम लोकपर बोझ नहि, लोकक अनुभवक भाषा बनए। ओकर रचना समाजकेँ केवल दोष नहि देखबए, अपने भीतरक सामर्थ्य आ परिवर्तनक सम्भावना सेहो चिन्हबए।

एक आँखि समाजपर, तखने कलम सार्थक। समाजक गहींर समझ आ सृजनक सजग साधना जखन शुभेक्षासँ जुड़ैत अछि, तखने साहित्य भाषाकेँ गरिमा आ समाजकेँ दिशा दैत अछि। एहेन साहित्यकार केवल मैथिली साहित्यकेँ समृद्ध नहि करैत, मिथिलाक भीतर मानवीयता, न्याय, प्रेम आ सद्भावनाक चेतना सेहो जगबैत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 44

समाजसँ सटल साहित्ये आन्दोलन बनैत अछि

मण्डलजी लिखै छैथ- “बंगालक धरतीपर जहिना साहित्यिक कार्यक्रम समाजसँ, सामाजिक गतिविधिसँ सामाजिकताक संग सटिकऽ सघन रूपमे चलैत रहल अछि।” (पृ. 110)

ई पंक्ति साहित्यिक सक्रियताक असली आधार बतबैत अछि। साहित्य जँ

समाजसँ सटल नहि, तँ ओ गिनल-चुनल पोथी आ आयोजन धरि सीमित रहि जाइत अछि। मुदा जखन साहित्य लोकक जीवन, सामाजिक गतिविधि, भाषा-सेवा, पाठक-निर्माण आ सामूहिक चेतनासँ जुड़ैत अछि, तखन ओ आन्दोलन बनैत अछि। मण्डलजी साहित्यकेँ मंचक सीमासँ निकालि समाजक बीच सक्रिय देखए चाहै छैथ।

साहित्यिक कार्यक्रमक अर्थ केवल सभागार, अध्यक्षता, माल्यार्पण, भाषण आ फोटो नहि। कार्यक्रम तखन सार्थक अछि, जखन ओ समाजमे प्रश्न जगाबए, पाठक बनाबए, नव लेखककेँ जोड़ए, लोकक अनुभव सुनए आ भाषा तथा संस्कृतिक प्रति जिम्मेदारी बढ़ाबए। जइ आयोजनक बाद समाजमे कोनो हलचल नहि उठए, ओ औपचारिक घटना भरि अछि। जे आयोजन लोकक मनमे विचार आ काजक प्रेरणा छोड़ि जाए, सएह आन्दोलनक आरम्भ अछि।

मण्डलजी बंगालक उदाहरण दैत साहित्यक सामाजिक सघनता दिस संकेत करै छैथ। जेतए साहित्य समाजसँ जुड़ल रहैत अछि, ओतए पाठक केवल दर्शक नहि, सहभागी बनैत अछि। रचनाकार केवल मंचपर नहि रहैत, लोकक बीच पहुँचैत अछि। पोथी केवल अलमारीमे नहि रहैत, पाठ, चर्चा, बहस, गीत, नाटक, अध्ययन आ सामाजिक संवादक हिस्सा बनैत अछि।

मैथिली-समाज लेल ई पंक्ति बहुत जरूरी अछि। मैथिली साहित्य जँ गिनल-चुनल लोकक दायरामे रहत, तँ ओकर प्रभाव सीमित रहत। भाषा-प्रेम जँ केवल विशेष अवसरक भाषणमे रहत, तँ नव पीढ़ी धरि नहि पहुँचत। साहित्य जँ समाजक दुख, श्रम, प्रेम, सद्भावना, अन्याय आ आशाकेँ नहि छूएत, तँ पाठक ओकरा अपन केना मानत?

समाजसँ सटल साहित्य लोककेँ जोड़ैत अछि। किसान ओकरामे अपन जीवन देखैत अछि, मजदूर अपन स्वर पबैत अछि, महिलाक दबौल अनुभवकेँ अभिव्यक्ति भेटैत अछि, बच्चा अपन भाषापर भरोस करैत अछि आ नव रचनाकार अपन बाट चिन्हैत अछि। एहेन साहित्य केवल पढ़ल नहि जाइत, जीअल जाइत अछि। ओ समाजक भीतर सक्रिय विचार बनि जाइत अछि।

आइक समयमे साहित्यिक आन्दोलनक रूप सेहो बदैल रहल अछि। गोष्ठी चाही, मुदा संगमे पाठक-चर्चा चाही। पोथी चाही, मुदा संगमे डिजिटल पहुँच चाही। मंच चाही, मुदा संगमे गाम, स्कूल, परिवार, सोशल मीडिया, पाठ-समूह आ

नव पीढ़ीसँ जीवित सम्बन्ध चाही। साहित्यकेँ समाजसँ जुड़ल रखबाक ई नव रूप अछि।

साहित्य समाजक विश्वस्त साथी तखन बनैत अछि, जखन ओ लोकहितक पक्षमे ठाढ़ रहैत अछि। ओ केवल प्रशंसा नहि करैत, प्रश्नो उठबैत अछि। ओ केवल स्मृति नहि सहेजैत, भविष्यक तैयारीओ करैत अछि। ओ केवल संवेदना नहि जगबैत, सामाजिक दिशा सेहो देखबैत अछि। मण्डलजीक साहित्य-दृष्टिक मूल अही सामाजिक सक्रियतामे अछि।

समाजसँ सटल साहित्ये आन्दोलन बनैत अछि। जे साहित्य लोकक बीच जाइत अछि, लोकसँ सीखैत अछि, लोककेँ आवाज दैत अछि आ लोककेँ संग लऽ चलैत अछि, सएह भाषाकेँ दीर्घ जीवन दैत अछि। मैथिलीकेँ एहने साहित्यिक-सामाजिक आन्दोलनक जरूरत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 45

साहित्यक मूल स्वर प्रेम आ भायचारा,

एकर साधना अपने लगसँ शुरू होइत अछि

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "सभकेँ माने हर मनुक्खकेँ अपने लगसँ जिनगी शुरू करक चाहिऐन।" (पृ. 75)

ई पंक्ति मण्डलजीक जीवन-दर्शन आ साहित्यिक दृष्टिकेँ एकसंग खोलैत अछि। ओ मनुक्खकेँ बाहरी सहारा आ दोसराक पहलपर निर्भर नहि रहबाक शिक्षा दइ छैथ। प्रत्येक मनुक्खकेँ अपने लगसँ जिनगी शुरू करबाक चाही। ई बात सुनबामे सादा अछि, मुदा ऐमे व्यापक सामाजिक तागत सन्निहित अछि। जे मनुक्ख अपने लगसँ आरम्भ करैत अछि, ओ अपन जीवनक जिम्मेदारी बुझैत अछि। जखन समाजक प्रत्येक मनुक्ख अही जिम्मेदारीकेँ स्वीकार करैत अछि, तखन सामाजिक परिवर्तनक बाट खुलैत अछि।

अपने लगसँ शुरू करबाक अर्थ स्वार्थ वा समाजसँ अलगाव नहि। एकर अर्थ आत्मबोध आ आत्म-परीक्षण अछि। अपन स्थिति देखू, अपन सामर्थ्य चिन्हू, अपन कमजोरी बुझू, अपन समाजक सच स्वीकार करू आ जेतए ठाढ़ छी, ओत्तैसँ काज आरम्भ करू। ई विचार मनुक्खकेँ समाजसँ काटैत नहि, ओकरा भीतरसँ तैयार करैत अछि, जइसँ ओ परिवार, समाज आ लोकजीवनक प्रति

बेसी सजग, उत्तरदायी आ सक्रिय बनए।

प्रेम आ भायचारा दूरक भाषणसँ शुरू नहि होइत। एकर पहिल परीक्षा अपन घर, परिवार, पड़ोस आ लगक सम्बन्धमे होइत अछि। मतभेदक समय हम कोन भाषा बजै छी, कमजोर मनुक्खक संग केहेन बेवहार करै छी, विरोधी विचार राखैबलाकेँ केतेक सम्मान दइ छी आ दोसराक दुःखमे केहेन ठाढ़ होइ छी, अही सभसँ प्रेमक वास्तविकता प्रकट होइत अछि। जे अपन लगक मनुक्खकेँ सम्मान नहि दइ सकैत अछि, ओकर दूरक समाज लेल प्रेमक घोषणा खोखल भऽ जाइत अछि।

अही कारण साहित्यक मूल मूल्यक साधना साहित्यकारकेँ सेहो अपने लगसँ शुरू करबाक होइत अछि। साहित्यकार समाजकेँ प्रेम, न्याय, करुणा आ भायचाराक जे मूल्य दैत अछि, ओकर मानवीय दृष्टिमे सेहो ओइ मूल्यक उपस्थिति आवश्यक अछि। साहित्यकार पूर्ण अथवा त्रुटिहीन मनुक्ख होअए, ई अपेक्षा नहि। मुदा ओकरा भीतर आत्मपरीक्षण, अपन भूल स्वीकारबाक साहस आ टुटैत सम्बन्धकेँ जोड़बाक आकांक्षा अवश्य रहबाक चाही।

साहित्यकारक पहचान केवल भाषाक चमक, कृतिक संख्या वा चर्चाक विस्तारसँ नहि होइत अछि। देखबाक ई अछि जे ओकर रचना मनुक्खकेँ जोड़ैत अछि आकि तोड़ैत, पीड़ितक गरिमाकेँ मजगूत करैत अछि आकि ओकर दुःखकेँ प्रदर्शनक वस्तु बनबैत। असली साहित्यकार ओ अछि जे अन्यायक विरोध करितो घृणाकेँ लक्ष्य नहि बनबए, संघर्षक कठिन परिस्थितिमे सेहो मानवीयता बचौने रहए आ मनुक्खक भीतर प्रेम तथा भायचाराक सम्भावना जगबए।

साहित्यक गरिमा अहीठाम अछि जे ओ मनुक्खकेँ छोट नहि करैत, ओकरा भीतरसँ पैघ बनबैत अछि। ओ रोषकेँ अन्हार नहि बनए दैत, बल्कि ओकरा विवेकक दिशा दैत अछि। ओ संघर्षकेँ घृणामे नहि बदलए दैत, ओकरा न्याय, करुणा आ मानवीय सम्बन्धसँ जोड़ैत अछि। मण्डलजीक साहित्य समाजक टुटल सम्बन्धकेँ देखैत अछि, मुदा सम्बन्धक सम्भावना नहि छोड़ैत।

मण्डलजीक साहित्य पाठककेँ दया माँगब नहि सिखबैत। ओ ओकरा अपन अवस्था चिन्हबाक, परिस्थिति बुझबाक, श्रमक मूल्य मानबाक आ जीवनक दिशा चुनबाक साहस दैत अछि। हुनकर पात्र केतेको बेर अभाव, संकट आ सामाजिक दबावक बीच रहैत अछि। तैयो ओकरा भीतर कोनो-ने-कोनो

रूपमे जीबाक, सोचबाक, बदलबाक आ उठिकऽ ठाढ़ हेबाक बीआ बँचल रहैत अछि। साहित्य अही बीआकेँ चेतना, आत्मसम्मान आ संघर्षक तागत दैत अछि।

"अपने लगसँ जिनगी शुरू" करब बेकतीगत जागरणक आरम्भ अछि, मुदा ओकर लक्ष्य सामाजिक पुनर्निर्माण अछि। जे मनुक्ख अपने जागत, वएह पारिवारिक सम्बन्धकेँ जिम्मेदारीसँ देखत। जे परिवार जागत, वएह समाजमे सहयोग आ सद्भावना मजगूत करत। जे समाज जागत, वएह अपन भाषा, साहित्य, संस्कृति, समानता आ न्यायकेँ जीवित राखत। अही क्रममे आत्मजागरण सामाजिक जागरणक आधार बनि जाइत अछि।

साहित्यक असली तागत दुःखक दृश्य देखाकऽ क्षणिक भावुकता जगबैमे नहि, मनुक्खक भीतर संवेदना आ विवेक जागरित करैमे अछि। ओ दुःखक कारण बुझबाक नजैर दैत, पीड़ित मनुक्खक गरिमाकेँ सामने अनैत आ प्रेम, करुणा तथा भायचाराक आधारपर समाधानक दिशा सोचबाक प्रेरणा दैत अछि। ओ अन्यायकेँ अलग घटना मानिकऽ नहि छोड़ैत, बल्कि ओकर पाछू काज करैत असमान बेवस्था आ सम्बन्धक टुटनकेँ सामने अनैत अछि।

ऐ दृष्टिसँ मण्डलजीक साहित्य लोक-जागरणक साहित्य अछि। ओ लोकजीवनकेँ करुण दृश्य बनाकऽ नहि छोड़ैत। ओ गामक साधारण मनुक्खमे सोचबाक आ निर्णय लेबाक अधिकार देखैत अछि। खेतमे श्रम करैबला हाथमे समाजक निर्माणकारी तागत देखैत अछि। महिलाक अनकहल अनुभवमे परिवार आ लोक-संस्कृतिक स्मृति देखैत अछि। उपेक्षित समाजक जीवनमे न्यायपूर्ण भविष्यक आधार देखैत अछि।

पयस्विनी हमरा ई सिखबैत अछि जे साहित्यक तागत अलंकार, हल्ला वा प्रसिद्धिमे नहि। ओकर तागत ऐ बातमे अछि जे ओ पाठककेँ अपन जीवनक सोझाँ ठाढ़ करए, ओकरा सोचबाक लेल बाध्य करए, ओकरा भीतर दबल साहस जगबए आ ओकरा समाजक प्रेम, भायचारा तथा उत्तरदायित्वसँ जोड़ए।

साहित्यक मूल स्वर प्रेम आ भायचारा अछि। एकर साधना अपने लगसँ, अपन विचार, भाषा, बेवहार आ सम्बन्धसँ शुरू होइत अछि। मण्डलजीक लेखन मनुक्खकेँ भीतरसँ जगबै छैथ, मुदा ओकरा असगर नहि छोड़ै छैथ। ओ आत्मजागरणकेँ परिवारक दायित्व, समाजक प्रेम आ न्यायपूर्ण परिवर्तनसँ जोड़ै छैथ। साहित्यक वास्तविक गरिमा अहीमे अछि जे ओ मनुक्खकेँ मनुक्खक विरुद्ध नहि, मनुक्खक पक्षमे ठाढ़ करैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 46

जीवनक प्रति प्रेम साहित्य अछि,

जीवनक लड़ाइ ओकर सृजन

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "प्रचार कम हुअए आकि बेसी, मूल प्रश्न अछि जे हमर रचनासँ केते गोटेकेँ जीवन-दिशा भेटलैन। जे कियो अपना जिनगीमे उताइर लाभ उठबै छैथ वएह उपलब्धि भेल। जेते अधिकमे हेतैन तेते अपना सृजनकेँ सार्थक बुझि सन्तुष्ट जरूर हएब।" (पृ. 73)

ई कथन मण्डलजीक साहित्य-दृष्टिक मूल केन्द्रकेँ स्पष्ट करैत अछि। हुनका लेल साहित्यक सफलता प्रचार, प्रशंसा, पुरस्कार अथवा बिक्रीक संख्यासँ निर्धारित नहि होइत। मूल प्रश्न ई अछि जे रचना मनुक्खक जीवनमे कोन इजोत अनलक। ओ ओकर सोचकेँ केतेक व्यापक बनौलक, अन्यायकेँ चिन्हबाक दृष्टि देलक कि नहि आ अपन जीवनकेँ बेसी मानवीय बनेबाक प्रेरणा जगौलक कि नहि।

साहित्य जीवनक प्रति प्रेम अछि, कारण साहित्यकार जीवनकेँ गहींरतासँ देखैत अछि। ओ मनुक्खक सुखमे प्रसन्न होइत अछि, ओकर दुखसँ विचलित होइत अछि, ओकर संघर्षकेँ बुझैत अछि आ ओकरा भीतर नुकाएल सम्भावनाकेँ शब्द दैत अछि। मुदा ई प्रेम केवल भावुकता नहि। जे प्रेम अन्यायकेँ देखितो चुप रहैत अछि, ओ अधखड़ुआ रहि जाइत अछि। वास्तविक प्रेम मनुक्खक जीवनकेँ अपमान, शोषण, डर आ अन्धविश्वाससँ मुक्त देखए चाहैत अछि।

ऐ कारण साहित्य-सृजन जीवनक लड़ाइ सेहो अछि। ई लड़ाइ मनुक्खक विरुद्ध नहि, मनुक्खकेँ छोट बनेनिहार विचार, मूल्य-बोध आ व्यवस्थाक विरुद्ध अछि। ई जातीय ऊँच-नीच, सामन्ती दम्भ, आर्थिक स्वार्थ, महिलाक अवमूल्यन, श्रमक उपेक्षा, धार्मिक डर, बौद्धिक जड़ता आ संस्थागत अन्यायक विरुद्ध वैचारिक संघर्ष अछि। साहित्य ऐ लड़ाइमे तलवार नहि उठबैत। ओ प्रश्न, संवेदना, तर्क, अनुभव आ मानवीय सम्बन्धक माध्यमे अन्यायक वास्तविकताकेँ सोझाँ अनैत अछि।

मण्डलजीक साहित्यिक दृष्टि हुनकर जीवनसँ अलग नहि अछि। हुनकर यथार्थवाद केवल रचना-पद्धति नहि, जीवन आ समाजकेँ देखबाक दृष्टि अछि। खेती आ ग्रामजीवनसँ जुड़ाव हुनका श्रमक मूल्य बुझौलक। जनवादी संघर्ष

शोषणक सामाजिक संरचनाकेँ चिन्हबाक दृष्टि देलक। सूदखोर महाजन आ जमीनदारी प्रभुत्वक विरुद्ध दीर्घ संघर्षसँ हुनका ई अनुभव भेल जे व्यवस्था बदलनाइ कोनो एक दिनक घटना नहि, अपितु नमहर सामाजिक आ वैचारिक प्रक्रिया अछि।

करीब पैंतीस बर्खक सामाजिक सक्रियतामे अर्जित अनुभव हुनकर रचनात्मक ऊर्जाक आधार बनल। कथा, उपन्यास, नाटक, कविता आ विचारक माध्यमे ओ ग्रामजीवनक ओझरी, अभाव, श्रम, अपमान, प्रेम, प्रतिरोध आ परिवर्तनक सम्भावनाकेँ अभिव्यक्ति देलखिन। ऐ अर्थमे साहित्य हुनका लेल जीवनसँ पलायन नहि, लोक-अनुभवकेँ व्यापक मानवीय अर्थ देबाक माध्यम बनल।

हुनकर यथार्थवादी दृष्टि दुखक चित्रण धरि सीमित नहि रहैत। ओ ओइ दुखक पाछाँ काज कऽ रहल आर्थिक, सामाजिक आ वैचारिक कारणकेँ सेहो उजागर करैत अछि। ओ गरीबीकेँ भाग्यक परिणाम मानि नहि छोड़ैत, ओकर आर्थिक आ सामाजिक आधारकेँ सोझाँ अनैत अछि। जातीय भेदकेँ परम्पराक सोभाविक हिस्सा मानि स्वीकार नहि करैत, ओकरा भीतर काज कऽ रहल प्रभुत्व-बोधकेँ चिन्हैत अछि। अन्धविश्वासकेँ आस्थाक नाम दऽ ओकर बचाव नहि करैत, ओकरा ज्ञान, स्वास्थ्य आ मानवीय स्वतन्त्रताक कसौटीपर परखैत अछि। महिलाक पीड़ाकेँ परिवारक निजी विषय मानि उपेक्षित नहि करैत, ओकरा जन्म दइबला सामाजिक संरचना दिस नजैर दैत अछि।

ऐ कारण हुनकर रचना उपदेशात्मक कथनमे सीमित नहि रहैत। पात्रक परिस्थिति, निर्णय, संवाद आ पारस्परिक सम्बन्धक माध्यमे सामाजिक सत्य धीरे-धीरे खुलैत अछि। पाठक दुख देखैत अछि, मुदा तैसंग ओइ दुखकेँ जन्म दइबला कारण आ ओकरा बदलबाक सम्भावना सेहो बुझैत अछि। यथार्थक ऐ कलात्मक प्रस्तुति हुनकर विचारकेँ केवल अवधारणा नहि रहए दैत, जीवनक अनुभव बना दैत अछि।

मण्डलजीक साहित्य पाठकपर पूर्वनिर्धारित उत्तर नहि थोपैत, अपितु ओकरा आत्मपरीक्षणक स्थिति धरि अनैत अछि। पात्रक निर्णय, दुविधा आ संघर्षक संग चलैत पाठक ई विचारए लगैत अछि जे ओकर अपन बेवहार कोन मूल्यक पक्षमे ठाढ़ अछि। तइ कारण हुनकर रचना पाठ समाप्त भेला-पछाइत

सेहो प्रश्नक रूपमे मनक भीतर जीवित रहैत अछि।

ई सभ प्रश्न हुनकर साहित्यकेँ जीवनक वास्तविकतासँ जोड़ैत अछि। हुनकर रचनामे किसान, मजदूर, महिला, दलित, गरीब आ आन उपेक्षित मनुक्ख करुणाक निष्क्रिय पात्र नहि रहैत। ओ सभ अपन अनुभव, ज्ञान, श्रम आ संघर्षशीलताक बलपर परिवर्तनक सक्रिय वाहकक रूपमे उभरैत अछि। मण्डलजी हुनका दयाभावसँ नहि देखै छैथ, अपितु हुनकर जीवनानुभवक भीतर प्रवेश कऽ मानवीय गरिमा, बुधि आ आत्मबलकेँ चिन्है छैथ।

हुनकर मानवीय पक्षधरता कोनो एक वर्गक पीड़ा धरि सीमित नहि रहैत। किसानक श्रम, महिलाक आत्मसम्मान, दलितक समानता, गरीबक अधिकार आ प्रश्न उठौनिहारक स्वतन्त्रता एक्के नैतिक धरातलपर जुड़ैत अछि। ई दृष्टि बतबैत अछि जे न्याय खण्ड-खण्डमे स्थापित नहि होइत। एक मनुक्खक गरिमा दोसराक गरिमासँ जुड़ल रहैत अछि आ कोनो एक वर्गक अपमान अन्ततः सम्पूर्ण समाजक मानवीयताकेँ कमजोर करैत अछि।

साहित्यकारक जीवन आ साहित्यक बीच दूरी बढ़लासँ रचनाक विश्वसनीयता कमजोर पड़ैत अछि। साहित्यकार जँ रचनामे समानताक समर्थन करए, मुदा जीवनमे ऊँच-नीच मानए; श्रमक महत्त्व लिखए, मुदा श्रमिकक अपमान करए; स्वतन्त्रताक पक्ष लैत, मुदा संस्थाक भीतर उठैत प्रश्नक विरोध करैत, तँ ओकर कथनी आ करनी अलग-अलग भऽ जाइत अछि। मण्डलजीक विशिष्टता ई अछि जे हुनकर साहित्यिक दृष्टि जीवन-संघर्षसँ विकसित भेल अछि। तँए हुनकर शब्द केवल वैचारिक कथन नहि रहैत, जीवनानुभवसँ अर्जित विश्वास बनि उठैत अछि।

जीवनानुभव, मानवीय प्रेम आ वैचारिक दृढ़ताक ऐ मेलक कारण हुनकर साहित्य अन्यायक विरोध करितो मनुक्ख-विरोधी नहि बनैत। ओ शोषणक संरचनाकेँ उजागर करैत अछि, मुदा पात्रक भीतर आत्मबोध, प्रतिरोध आ परिवर्तनक सम्भावनाकेँ सेहो बँचौने रहैत अछि। संवेदना ओकर आरम्भ अछि, विवेक ओकर पद्धति आ न्यायपूर्ण जीवन ओकर दिशा।

रचनाक वास्तविक उपलब्धि तखन बनैत अछि, जखन पाठक ओकरा पढ़ि प्रभाविते भऽ नहि रहि जाए, अपितु अपन जीवन, बेवहार आ सामाजिक दायित्वपर पुनर्विचार करए। प्रचार रचनाक नाम लोक धरि पहुँचा सकैत अछि,

मुदा ओकर सार्थकता ओइ जीवन-दिशामे अछि, जे पाठककेँ अपन विवेकसँ निर्णय लेब आ बेसी मानवीय आचरणक दिस बढ़बैत अछि। ऐ अर्थमे मण्डलजीक सृजन जीवनक प्रति प्रेम आ जीवनकेँ न्यायपूर्ण बनेबाक सतत प्रयास दुनू अछि।

मण्डलजीक साहित्य ऐ जीवन-दिशाक खोज अछि। ओ पाठककेँ कोनो महंथक अनुयायी नहि बनबैत, अपितु ओकरा अपन विवेकसँ जीवन आ समाजकेँ देखबाक सामर्थ्य दैत अछि। सार्थक साहित्य आसनक ऊँचाइ नहि, आचरणक सच्चाइ देखैत अछि; प्रचारक चमक नहि, कर्मक उपयोगिता परखैत अछि; आ मनुक्खकेँ प्रभुत्वक बाटपर नहि, प्रेम, न्याय आ समानताक बाटपर आगू बढ़बैत अछि।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 47

विचारक संघर्षमे साहित्य

सभसँ प्रभावशाली अस्त्र

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "दुनियाँक नक्शामे जेकरा शीतयुद्ध (cold war) कहल गेल अछि वएह वैचारिक संघर्ष छी। जेकरा लेल साहित्य प्रमुख अस्त्र छी।" (पृ. 78)

ई कथन साहित्यक सामाजिक शक्ति आ ऐतिहासिक भूमिकाकेँ स्पष्ट करैत अछि। दुनियाँक पैघ परिवर्तन केवल युद्ध, शासन-परिवर्तन अथवा कानून बनेलासँ नहि भेल अछि। ओकर पाछाँ मनुक्खक सोच, विश्वास, मूल्य आ भविष्य-दृष्टिक संघर्ष सेहो सक्रिय रहल अछि। कोनो व्यवस्था ताधैर चलैत रहैत अछि, जाधैर लोकक चेतनामे ओकर सोभाविक आ उचित हेबाक विश्वास बनल रहैत अछि। तँए समाजमे गहींर परिवर्तनक लेल बाहरी व्यवस्थाक संग मनुक्खक सोच बदलब सेहो आवश्यक अछि।

वैचारिक संघर्षक अर्थ केवल दू राजनीतिक विचारधाराक टकराव नहि अछि। परिवार, समाज, धर्म, शिक्षा, संस्कृति आ साहित्य सभ ठाम पुरान आ नव विचारक बीच संघर्ष चलैत रहैत अछि। एक दिस जन्मक आधारपर ऊँच-नीच, सामन्ती दम्भ, महिला-पुरुष असमानता, श्रमक उपेक्षा आ अन्धविश्वास अछि, तँ दोसर दिस समानता, न्याय, स्वतन्त्रता, विवेक आ वैज्ञानिक दृष्टि। ई संघर्ष बाहरी

टकरावसँ बेसी गहींर अछि, कारण एकर वास्तविक मैदान मनुक्खक सोच, विश्वास आ चेतना अछि।

सामन्ती व्यवस्था कमजोर पड़लाक बादो सामन्ती मानसिकता बँचल रहि सकैत अछि। आधुनिक साधनक उपयोग करितो लोक पुरान प्रभुत्व-बोधसँ संचालित भऽ सकैत अछि। कानून समानताक घोषणा कऽ सकैत अछि, मुदा बेवहारमे जाति, लिंग, सम्पैत आ पदक आधारपर भेदभाव जारी रहि सकैत अछि। बाहरी व्यवस्था बदललासँ मात्र मनुक्खक भीतर बैसल संस्कार नहि बदलैत। जाधैर परिवर्तन ओकर सोच, विश्वास आ बेवहारमे नहि उतरैत, ताधैर समाजक मूल सम्बन्धमे वास्तविक बदलाव नहि अबैत।

साहित्य मनुक्खक ऐ भीतरी चेतनामे प्रवेश करैत अछि। ओ आज्ञा नहि दैत, मुदा प्रश्न उठबैत अछि। ओ पाठकपर विचार थोपैत नहि, जीवनक एहेन यथार्थ सोझाँ अनैत अछि, जेकरा देखलाक बाद पाठक अपन मान्यता, विश्वास आ बेवहारपर पुनर्विचार करए लगैत अछि। कथा शोषित मनुक्खक जीवनक भीतर लऽ जाइत अछि, उपन्यास सामाजिक सम्बन्धक जटिलता खोलैत अछि, कविता संवेदनाकेँ जाग्रत करैत अछि आ नाटक विचारक टकरावकेँ जीवन्त रूपमे प्रस्तुत करैत अछि।

साहित्यकेँ अस्त्र कहबाक अर्थ ओकरा घृणा, प्रतिशोध अथवा हिंसाक साधन बनाएब नहि अछि। साहित्य मनुक्खक देहपर नहि, ओकरा भीतर बैसल अज्ञान, पूर्वाग्रह, डर, अन्याय-बोधक अभाव आ वैचारिक ठहरावपर प्रहार करैत अछि। ओकर वास्तविक शक्ति तर्क, संवेदना, अनुभव आ जीवन-सत्यसँ उत्पन्न होइत अछि। ओ मनुक्खक विरुद्ध नहि, मनुक्खकेँ छोट बनौनिहार विचार, मान्यता आ व्यवस्थाक विरुद्ध ठाढ़ होइत अछि।

मण्डलजीक रचनामे ई वैचारिक संघर्ष कोनो अमूर्त सिद्धान्तक रूपमे नहि अबैत। ओ खेत, घर, परिवार, विद्यालय, धार्मिक स्थल, साहित्यिक संस्था आ गामक सामाजिक सम्बन्धक बीच जीवन्त रूपमे प्रकट होइत अछि। किसानक श्रमक अवमूल्यन, महिलाक स्वतन्त्रतापर रोक, जातिक आधारपर अपमान, गरीबक विवशता, धर्मक नामपर डर आ संस्थामे पदक दुरुपयोग हुनकर साहित्यमे केवल अलग-अलग घटना नहि रहैत। ई सभ समाजक भीतर काज करैत ओहन विचार आ मान्यताक रूपमे चिन्हित होइत अछि, जे अन्याय

आ प्रभुत्वकेँ बनौने रखैत अछि।

हुनकर रचनामे किसान, मजदूर, महिला, दलित, गरीब आ आन उपेक्षित मनुक्ख केवल दया अथवा करुणाक पात्र नहि रहैत। ओ सभ अपन अनुभव, ज्ञान, श्रम आ स्वाभिमानक बलपर व्यवस्थासँ प्रश्न करैत आ परिवर्तनक सक्रिय वाहकक रूपमे उभरैत अछि। ऐ रूपमे मण्डलजीक साहित्य विचारकेँ जीवनसँ आ जीवनकेँ ओकर वास्तविक संघर्षसँ जोड़ैत अछि।

साहित्यक प्रभाव सदिखन तुरन्त देखाइत नहि। कोनो रचना पढ़िते शासन अथवा समाज बदैल नहि जाइत। मुदा ओ पाठकक भीतर प्रश्नक एकटा बीआ रोपि सकैत अछि। वएह प्रश्न धीरे-धीरे विवेकक रूप ग्रहण करैत, विवेक बेवहारमे बदलाव अनैत आ बदलल बेवहार नव सामाजिक संस्कारक आधार बनैत अछि। साहित्यक वास्तविक शक्ति ऐ धीमा, मुदा गहींर आ दीर्घकालीन परिवर्तनमे अछि।

प्रत्येक लिखल सामग्री एहेन वैचारिक शक्ति अर्जित नहि करैत। जे साहित्य अन्यायपर पर्दा दैत, प्रभुत्वक महिमा गबैत अथवा जाति-धर्मक आधारपर मनुक्खकेँ एक-दोसरक विरोधमे ठाढ़ करैत अछि, ओ परिवर्तनक बाट नहि खोलैत। साहित्यक सार्थकता तखने प्रकट होइत अछि, जखन ओकर पक्ष मनुक्खक स्वतन्त्रता, समानता, न्याय, श्रम आ गरिमाक संग रहैत अछि।

जे समाज प्रश्न उठेबाक क्षमता गमा दैत अछि, ओ अपन परिवर्तनक सम्भावना सेहो कमजोर कऽ लैत अछि। साहित्य असहमति, आत्मपरीक्षण आ नव सम्भावनाक दुआर खोलैत अछि। ओ लोककेँ पूर्वनिर्धारित उत्तरक अनुयायी नहि बनबैत, अपन विवेकसँ प्रश्न बुझबाक आ उत्तर खोजबाक सामर्थ्य दैत अछि। तँए विचारक संघर्षमे साहित्यक विजय कोनो विरोधीकेँ समाप्त करब नहि, मनुक्खक भीतर मानवीयता, न्याय-बोध आ विवेक विकसित करब अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 48

रचनाक दशा-दिशा नीक रहत,

तँ साहित्यक धारा बनबे करत

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “जहिना उत्तरबरिया पहाड़सँ निकलल छोट-छीन धारा सभ दछिन मुहेँ टघरैत नदी-नालामे मिलैत

आगू बढ़ैत गंगामे पहुँच समुद्रमे समाहित भऽ जाइत अछि तहिना जँ साहित्यक (रचनाक) दशा-दिशा नीक रहत तँ साहित्यक धारा बनबे करत। ई बिसवास अछि।" (पृ. 79)

ई उपमा साहित्य-सृजनक विकासकेँ प्रकृतिक सहज बिम्बसँ स्पष्ट करैत अछि। पहाड़सँ निकलैत छोट धारा आरम्भमे क्षीण देखाइत अछि। ओकरा ई ज्ञान नहि रहैत जे आगू चलि ओकर विस्तार केतेक हएत, मुदा ओ निरन्तर प्रवाहित रहैत अछि। बाटमे आन धारासँ मिलैत, बाधाकेँ पार करैत आ अपन जलकेँ व्यापक प्रवाहमे जोड़ैत ओ नदी बनि जाइत अछि। अन्ततः वएह जल गंगासँ होइत समुद्र धरि पहुँचैत अछि।

तहिना कोनो रचना आरम्भमे छोट आ सीमित भऽ सकैत अछि। मुदा जँ ओकर दशा नीक, दिशा स्पष्ट आ आधार जीवन-सत्य अछि, तँ ओ एकाकी नहि रहैत। ओ पाठकक अनुभवमे प्रवेश करैत, समान चेतनाक आन रचनासँ जुड़ैत आ धीरे-धीरे व्यापक साहित्यिक धाराक अंग बनैत अछि। रचनाक आकारसँ बेसी महत्त्वपूर्ण ओकर जीवन-दृष्टि अछि। छोट कथा, कविता अथवा विचार-बिन्दु सेहो सामाजिक चेतनामे दीर्घ प्रभाव छोड़ि सकैत अछि।

रचनाक दशाक सम्बन्ध ओकर भीतरी गुणवत्तासँ अछि। विषयक सार्थकता, जीवनक गहींर अवलोकन, भाषाक सोभाविकता, संवेदनाक प्रामाणिकता, विचारक स्पष्टता आ कलात्मक गठन मिलि रचनाक दशा निर्धारित करैत अछि। केवल शब्दक समूह रचना नहि बनैत। शब्द जखन अनुभव, चिन्तन आ जीवन-सत्यसँ जुड़ैत अछि, तखने ओ पाठकक चेतनामे प्रवेश करबाक सामर्थ्य अर्जित करैत अछि।

रचनाक दिशाक अर्थ अछि जे ओ केकरा पक्षमे ठाढ़ अछि आ समाजकेँ कोन दिस लऽ जाए चाहैत अछि। ओ मनुक्खक स्वतन्त्रता बढ़बैत अछि आकि डरकेँ मजबूत करैत अछि? समानताक बाट खोलैत अछि आकि ऊँच-नीचकेँ सोभाविक मानैत अछि? विवेक जगबैत अछि अथवा अन्धविश्वासकेँ बल दैत अछि? श्रमक सम्मान करैत अछि आकि प्रभुत्वक महिमा गबैत अछि? ऐ प्रश्नक उत्तरसँ रचनाक दिशा निर्धारित होइत अछि।

नीक दशा, मुदा अनुचित दिशा रचनाकेँ कलात्मक चमक दऽ सकैत अछि, मानवीय सार्थकता नहि। तहिना उचित दिशा रहितो कमजोर रचना-

विन्यास विचारकेँ प्रभावी रूपमे पाठक धरि नहि पहुँचा सकैत अछि। साहित्यक धारा तखन बनैत अछि, जखन जीवनक प्रति उत्तरदायित्व आ रचनात्मक कौशल एक-दोसरसँ जुड़ैत अछि। विचार रचनाकेँ दिशा दैत अछि आ कला ओकरा प्रभावी, पठनीय आ दीर्घजीवी बनबैत अछि।

नीक दिशा केवल नीक भावनाक नाम नहि। एकरक लेल जीवनक गहींर अध्ययन, सामाजिक यथार्थक समझ, भाषाक इमानदारी आ मनुक्खक प्रति उत्तरदायित्व आवश्यक अछि। लोकहितकारी उद्देश्य तखन विश्वसनीय बनैत अछि, जखन संवेदना अनुभवसँ, विचार विवेकसँ आ उद्देश्य कलात्मक अभिव्यक्तिसँ जुड़ैत अछि। जीवनक वास्तविकताकेँ बुझने बिना रचना भावुक उपदेश बनि रहि सकैत अछि।

जहिना धारा बनबाक लेल जलक निरन्तरता आवश्यक अछि। तहिना साहित्यक निर्माण नियमित अध्ययन, लेखन, आत्मपरीक्षण आ समाजसँ जीवन्त सम्बन्धक आधारपर होइत अछि। साहित्यकारक जीवनमे उपेक्षा, आलोचना, प्रकाशनक अभाव, संस्थागत पक्षपात आ आर्थिक कठिनाइ आबि सकैत अछि। मुदा प्रवाह आ दिशा बनल रहए तँ धारा बाधाक बीचो नव बाट खोजि लैत अछि। तहिना सृजनक विश्वास रचनाकारकेँ निरन्तर आगू बढ़बैत रहैत अछि।

छोट-छीन धारासभ मिलि पैघ प्रवाह बनबैत अछि। तहिना कोनो साहित्य केवल एक लेखकक बलपर विकसित नहि होइत। अनेक क्षेत्र, वर्ग, पीढ़ी आ अनुभवसँ आएल रचनाकार अपन-अपन जीवन-सत्यकेँ शब्द दैत अछि। पाठक, सम्पादक, आलोचक, प्रकाशक आ सांस्कृतिक कार्यकर्ता सेहो ऐ प्रवाहक निर्माणमे भाग लैत अछि। प्रत्येक स्वर अपन क्षेत्रक माटि, भाषा, अनुभव आ शैलीक विशिष्टता संग अनैत अछि। साहित्यिक धारा प्रतियोगितासँ नहि, विविध आ सार्थक योगदानक संगमसँ समृद्ध होइत अछि।

लेखकक काज समुद्रक आकारक चिन्ता करब नहि, अपन स्रोतकेँ निर्मल रखब, रचनाक दशा निखारब, दिशा स्पष्ट करब आ निरन्तर प्रवाहित रहब अछि। दशा-दिशा नीक रहत, तँ रचना अपन बाट खोजत, आन सार्थक रचनासँ जुड़त आ साहित्यक धारा बनबे करत।

'पयस्विनी'सँ विचार-बिन्दु 49

मूल्यांकन समय करत,

साहित्यकार सृजन करैत रहत

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- "कोनो रचनाक मूल्यांकन समय करैत अछि। समयानुकूल रचना छी वा नहि, ई समय आँकि कएल जा सकैत अछि। रहल पुरस्कारक बात? प्रेमचन्द सन उपन्यास सम्राट आ कलमक जादूगरकेँ कोन पुरस्कार भेटलैन। मुदा ओ अपना श्रमकेँ निरर्थक कहाँ बुझलैन। अन्तिम साँस धरि सेवा करैत रहला।" (पृ. 81)

ई कथन साहित्यिक मूल्यांकन, पुरस्कार आ सृजनक वास्तविक उद्देश्यक बीचक अन्तरकेँ स्पष्ट करैत अछि। कोनो रचनाकेँ तत्काल प्रशंसा, प्रचार अथवा पुरस्कार भेटब ओकर उपलब्धि भऽ सकैत अछि, मुदा साहित्यिक महत्त्वक अन्तिम प्रमाण नहि। समय रचनाकेँ तात्कालिक चर्चा आ प्रभावसँ बाहर निकालि बेर-बेर परखैत अछि। प्रत्येक नव पीढ़ी ओकरा अपन अनुभव, प्रश्न आ सामाजिक आवश्यकताक आधारपर पढ़ैत अछि। जे रचना ऐ पुनर्पाठमे अर्थवान बनल रहैत अछि, सएह समयक कसौटीपर अपन सार्थकता प्रमाणित करैत अछि।

समयानुकूलताक अर्थ केवल अपन समयक चर्चित विषयपर लिखब नहि। मूल प्रश्न ई अछि जे रचना अपन युगक जीवन-सत्य, अन्तर्विरोध, दुख, संघर्ष आ सम्भावनाकेँ केतेक गहराइसँ चिन्हैत अछि। प्रचलित विषयक आकर्षण समयक संग समाप्त भऽ सकैत अछि, मुदा जीवनक मूल प्रश्नकेँ इमानदारीसँ सामने अननिहार रचना अपन युगक सीमा पार कऽ आगूक पीढ़ी लेल सेहो अर्थवान बनल रहैत अछि।

समयक मूल्यांकन तुरन्त नहि होइत। केतेको महत्त्वपूर्ण रचनाकेँ अपन युगमे उचित स्थान नहि भेटैत, कारण साहित्यिक संस्था, प्रचार-माध्यम अथवा प्रभावशाली समूह ओकर पक्षमे नहि रहैत अछि। दोसर दिस, सम्बन्ध, प्रचार अथवा पुरस्कारक बलपर किछु सामान्य रचनाकेँ तत्काल बेसी महत्त्व भेटि सकैत अछि। मुदा ई स्थिति स्थायी नहि रहैत। तात्कालिक प्रभाव कमजोर पड़लाक पछाइत रचना अपन आन्तरिक सामर्थ्यक आधारपर परखल जाइत अछि।

अही कारण साहित्यकारक श्रमकेँ केवल तत्काल परिणामसँ नहि मापल जा सकैत अछि। लेखन कोनो एहेन व्यापार नहि, जइमे प्रत्येक श्रमक प्रत्यक्ष प्रतिफल निश्चित हो। साहित्यकार अपन समाजक अनुभव, स्मृति, प्रश्न, संघर्ष आ भविष्यक आकांक्षाकेँ शब्द दैत अछि। ओकर रचना अपन समयमे सीमित पाठक धरि पहुँच सकैत अछि, मुदा ओकरा भीतर जीवन-सत्य अछि तँ ओ पछाइत नव पाठक खोजि लैत अछि। प्रत्येक रचना अन्तिम उपलब्धि नहि, निरन्तर सृजन-यात्राक एकटा डेग अछि।

मण्डलजी प्रेमचन्दक उदाहरण दऽ ऐ सृजनात्मक निष्ठाकेँ स्पष्ट करैत अछि। प्रेमचन्दक साहित्यिक महत्त्व कोनो पुरस्कारसँ निर्धारित नहि भेल। हुनकर रचना भारतीय समाजक विषमता आ मानवीय संघर्षकेँ एहेन रूपमे अभिव्यक्त करैत अछि, जे आइयो पाठककेँ अपन समाजपर विचार करबाक लेल बाध्य करैत अछि। पुरस्कारक अभाव हुनकर श्रमकेँ निरर्थक नहि बना सकल। ओ अन्तिम साँस धरि साहित्य-सृजनकेँ समाजक सेवाक रूपमे करैत रहला।

पुरस्कार साहित्यकारक सम्मान आ प्रोत्साहन अबस्स छी। उचित रचनाकेँ भेटल पुरस्कार समाजक धियान महत्त्वपूर्ण साहित्य दिस आकृष्ट करैत अछि। मुदा जखन पुरस्कार सृजनक मूल लक्ष्य बनि जाइत अछि, तखन रचनाकारक दृष्टि जीवनसँ हटि मान्यता देनिहार संस्थादिस केन्द्रित हेबाक खतरा बढ़ैत अछि। मण्डलजीक कथन पुरस्कारक विरोध नहि, ओकरा उचित स्थान देबाक आग्रह अछि। पुरस्कार भेटए तँ ओकर सम्मान कएल जाए, नहि भेटए तँ सृजनकेँ निरर्थक नहि मानल जाए।

रचनाकारक वास्तविक दायित्व निरन्तर अध्ययन करब, जीवनकेँ बुझब, अपन दृष्टिक समीक्षा करब आ समाजक प्रति इमानदारीसँ लिखैत रहब अछि। मूल्यांकनक चिन्ता सृजनपर एतेक भारी नहि पड़ए जे लेखकक ऊर्जा लेखनक बदला मान्यता जुटेबामे लगि जाए। “अन्तिम साँस धरि सेवा”क अर्थ अपन सृजनात्मक सामर्थ्यकेँ लोकजीवनक हितमे लगाएब अछि।

समय रचनाक मूल्यांकन करत। साहित्यकारक काज समयक निर्णयक प्रतीक्षा करब नहि, अपन वर्तमानकेँ गहराइसँ बुझैत निरन्तर सृजन करब अछि। पुरस्कार एक क्षणक सम्मान भऽ सकैत अछि, मुदा जीवनसँ जुड़ल साहित्य पीढ़ी-दर-पीढ़ी पाठकक चेतनामे जीवित रहैत अछि।

‘पयस्विनी’सँ विचार-बिन्दु 50

समाजक साँस जाधैर चलत,

साहित्यक धारा ताधैर बहत

पयस्विनीमे श्री जगदीश प्रसाद मण्डल लिखै छैथ- “साहित्य समाजसँ जुड़ल चीज छी। जहिना समाज अछि तहिना साहित्य अछि। समाज रहत, साहित्य रहबे करत। तँए सम्भावना अछिए आ रहबे करत।” (पृ. 112)

ई कथन साहित्यक उद्गम, स्वरूप आ भविष्यकेँ अत्यन्त सहज शब्दमे स्पष्ट करैत अछि। साहित्य कोनो एक लेखक, संस्था, पुरस्कार अथवा युगक निजी सम्पैत नहि। ओकर मूल स्रोत समाज अछि। समाज साहित्यकेँ विषयक संग भाषा, संवेदना, कल्पना आ दृष्टि सेहो दैत अछि। मनुक्ख जइ शब्दमे हँसैत, कनैत, प्रेम करैत, विरोध करैत आ भविष्यक कल्पना करैत अछि, साहित्य ओही भाषिक आ सामाजिक जीवनसँ जन्म लैत अछि। जाधैर मनुक्ख अपन अनुभव, संघर्ष, स्मृति आ सपना संग जीवन जीबैत रहत, ताधैर साहित्यक आवश्यकता आ सम्भावना बनल रहत।

“जहिना समाज अछि तहिना साहित्य अछि”क अर्थ ई नहि जे साहित्य समाजक निष्क्रिय दर्पण मात्र छी। साहित्य समाजक रूप देखबैत अछि, मुदा ओकरा भीतर नुकाएल प्रश्न, अन्तर्विरोध आ सम्भावनाकेँ सेहो सोझाँ अनैत अछि। ओ केवल ई नहि कहैत जे समाज एहेन अछि। ओ ई प्रश्न सेहो उठबैत अछि जे समाज एहेन किएक अछि, एकरा केना नीक बनाएल जा सकैत अछि आ ऐ परिवर्तनमे मनुक्खक भूमिका की हएत।

समाज बदलैत अछि, तँ साहित्यक विषय, रूप, भाषा आ अभिव्यक्तिक माध्यम सेहो बदलैत अछि। मौखिक परम्परासँ लिखित पोथी, पत्र-पत्रिकासँ डिजिटल माध्यम आ एकान्त पाठसँ सार्वजनिक संवाद धरि साहित्य अपन रूप बदलैत रहल अछि। प्रत्येक पीढ़ी प्रेम, न्याय, स्वतन्त्रता, समानता, श्रम, परिवार, प्रकृति आ सामाजिक सम्बन्धकेँ अपन समयक दृष्टिसँ पुनः देखैत अछि। माध्यम बदलैत अछि, अनुभव नव अर्थ ग्रहण करैत अछि आ साहित्य अभिव्यक्तिक नव बाट ताकि लैत अछि।

नव रचनाकारक लेल अवसर बाहरसँ देल जाइबला वस्तु नहि। समाजक भीतर साहित्यक सम्भावना सदिखन उपस्थित रहैत अछि। बदलैत ग्राम्यजीवन,

सामाजिक असमानता, प्रवास आ तकनीकसँ उत्पन्न नव सम्बन्ध तथा मनुक्खक भीतरी एकाकीपनमे अनकहल कथा आ अनुत्तरित प्रश्न उपस्थित अछि। आवश्यकता ओकरा देखबाक नजैर, बुझबाक संवेदना आ व्यक्त करबाक सृजनात्मक साहसक अछि।

मण्डलजीक साहित्य-दृष्टिमे व्यक्ति समाजक इकाइ मात्र नहि, दुनियाँक इकाइ सेहो अछि। एक मनुक्खक जीवन अपन परिवार, गाम अथवा भाषा धरि सीमित नहि रहैत। ओकर श्रम, विचार, निर्णय आ बेवहार व्यापक मानवीय जीवनसँ जुड़ैत अछि। तहिना अपन माटि आ भाषासँ जन्मल साहित्य स्थानीय अनुभवकेँ अभिव्यक्त करितो व्यापक मानवीय प्रश्नसँ जुड़ि सकैत अछि। साहित्यक व्यापकता अपन जड़िसँ कटबामे नहि, अपन विशिष्ट अनुभवक भीतर मानवीय सत्यकेँ चिन्हबामे अछि।

साहित्य आ समाजक सम्बन्ध एकमुखी नहि। समाज साहित्यकेँ जन्म दैत अछि आ साहित्य समाजक स्मृति, आत्मबोध आ भविष्य-दृष्टिक निर्माण करैत अछि। ओ वर्तमानक विसंगतिपर प्रश्न उठबैत, बीतल अनुभवकेँ सुरक्षित रखैत आ आगूक सम्भावनाक कल्पना करैत अछि। ऐ रूपमे साहित्य समाजक चेतनाकेँ केवल व्यक्त नहि करैत, ओकरा विकसित सेहो करैत अछि।

जाधैर जीवनमे दुख, अन्याय, प्रेम, श्रम आ परिवर्तनक आकांक्षा रहत, ताधैर साहित्य ओकर अर्थ खोजैत आ ओकरा शब्द दैत रहत। साहित्यक सम्भावना अही कारण अक्षय अछि, किएक तँ समाज आ जीवन दुनू परिवर्तनशील आ सृजनशील अछि।

समापन : सृजनसँ जीवन धरि

✳

दोसर खण्डक पचास विचार-बिन्दुक यात्रा 'हम केकर रचनाकार छी?' प्रश्नसँ आरम्भ भऽ 'समाजक साँस जाधैर चलत, साहित्यक धारा ताधैर बहत' निष्कर्ष धरि पहुँचैत अछि। आरम्भक प्रश्न रचनाकारक सामाजिक परिचय आ पक्षधरता खोजैत अछि; अन्तिम विचार साहित्यक मूल स्रोत जीवनकेँ चिन्हैत अछि। ऐ दुनू छोरक बीच शब्द, दृष्टि, सत्ता, हाशिया, पाठक, साहित्यिक संस्था, भाषा, डिजिटल माध्यम, प्रतिष्ठा, नियमितता, संघर्ष आ समय-मूल्यांकनसँ जुड़ल अनेक प्रश्न सामने अबैत अछि। मुदा ई प्रश्न अलग-अलग दिशामे छिड़िआएल नहि अछि; सभ एक-दोसरसँ जुड़ैत सृजन आ समाजक गहींर सम्बन्धकेँ स्पष्ट करैत अछि। सभ अन्ततः एक्के मूल सम्बन्ध खोलैत अछि : समाज सृजनक भीतर केना प्रवेश करैत अछि आ सृजन फेर मनुक्खक जीवन तथा समाजकेँ केना प्रभावित करैत अछि?

ऐ खण्डक प्रत्येक विचार-बिन्दु 'पयस्विनी'सँ चुनल कोनो विचार-सूत्रसँ आरम्भ भेल अछि। मूल कथन एतए अन्तिम निष्कर्ष नहि, विचारक प्रवेश-दुआर छी। ओ दुआर खुलिते प्रश्न वर्तमान जीवनक विस्तृत क्षेत्रमे प्रवेश करैत अछि। केतौ रचनाकारक पक्षधरता सामने अबैत अछि, केतौ साहित्यिक बेवस्थाक अन्तर्विरोध, केतौ भाषिक आत्मविश्वास, केतौ पाठकक भूमिका आ केतौ समयक कसौटी। मूल कथन बीआ दैत अछि; विमर्श ओकरा वर्तमान अनुभवक माटिमे रोपि ओकर अर्थ आ सम्भावनाकेँ विकसित करैत अछि।

'हम केकर रचनाकार छी?' केवल लेखकक नाम, भाषा वा साहित्यिक रचनारूपक प्रश्न नहि। ई ओकर सामाजिक दृष्टि आ नैतिक दायित्वक प्रश्न छी। रचनाकार केकर जीवन देखैत अछि, केकर आवाज सुनैत अछि, केकर पीड़ा, श्रम आ संघर्षकेँ महत्त्व दैत अछि आ केकर अनुभव ओकर दृष्टिसँ बाहर रहि जाइत अछि, ऐ सभसँ ओकर वास्तविक परिचय बनैत अछि। नामक संग उपाधि,

पुरस्कार आ संस्थागत पद जुड़ि सकैत अछि, मुदा रचनाकारक मूल पहचान ओकर दृष्टि, पक्षधरता आ रचनात्मक इमानदारीसँ बनैत अछि।

कोनो रचनाकार समाजसँ बाहर नहि बनैत। भाषा समाजसँ भेटैत अछि, अनुभव जीवन आ सम्बन्धसँ बनैत अछि, स्मृति परिवार तथा समुदायसँ आकार पबैत अछि आ कल्पनाक सामग्री सेहो देखल, सुनल, भोगल आ जानल-बुझल संसारसँ जुड़ल रहैत अछि। लेखक एकान्तमे लिखि सकैत अछि, मुदा ओकर एकान्तो सामाजिक अनुभवसँ रिक्त नहि। ओ जे शब्द चुनैत अछि, जइ घटनाकेँ महत्त्व दैत अछि, जे पात्र रचैत अछि आ जइ भविष्यक कल्पना करैत अछि, सभमे ओकर समय आ समाज कोनो-ने-कोनो रूपमे उपस्थित रहैत अछि। अही अर्थमे समाज सृजनक बाहरी विषय नहि, ओकर अन्तर्निहित आधार अछि।

जगदीश प्रसाद मण्डलजीक जीवन ऐ सम्बन्धकेँ बुझबाक एक सजीव सन्दर्भ दैत अछि। हुनकर साहित्य जीवनसँ अलग कोनो निरपेक्ष संसारमे उपजल नहि; खेती, माटि, श्रम, गामक सम्बन्ध, सामाजिक विषमता आ परिवर्तनक संघर्ष हुनकर अनुभवक मूल भूमि रहल छैन। व्यवस्थित साहित्य-सृजन जीवनक पछिला चरणमे आरम्भ भेलैन, मुदा ओकर वैचारिक तैयारी बहुत पहिनेसँ जीवनक भीतर चलैत रहल। खेत, गाम आ सामाजिक संघर्षमे अर्जित अनुभव जखन शब्दक रूप ग्रहण केलक, तखन साहित्य हुनकर पहिल कर्मभूमिसँ दूरी नहि बनल; बल्कि ओही कर्मभूमिक अनुभव, चेतना आ संघर्षक रचनात्मक विस्तार बनि गेल।

एतए 'स्वनिर्मित'क अर्थ कोनो एक बेकतीक आत्मसफलता नहि। मण्डलजीक जीवन परिवार, गाम, किसान, सहकर्मी, सामाजिक संघर्ष, पाठक आ साहित्यिक सहयोगक बीच विकसित भेल। प्राप्त परिस्थितिकेँ ओ केवल निष्क्रिय रूपसँ स्वीकार नहि केलैन; ओकरा बुझलैन, प्रश्न केलैन आ अपन कर्मक दिशा चुनलैन। स्वनिर्माणक अर्थ सामूहिक योगदानकेँ नकारब नहि, बल्कि परिस्थिति, अनुभव आ सहयोगकेँ विवेकपूर्ण तथा जिम्मेदार कर्ममे बदलब होइत अछि। समाज मनुक्खकेँ आरम्भिक आधार दैत अछि, मुदा ओइ आधारपर जीवनक दिशा केना विकसित हएत, से ओकर निर्णय, श्रम आ बेवहारपर सेहो निर्भर करैत अछि।

रचनाकार लेल समाजकेँ गहींर नजैरसँ देखब आ अनुभवकेँ कलात्मक

अनुशासनमे ढालब, दुनू आवश्यक अछि। केवल सामाजिक उद्देश्य अपने-आपमे प्रभावी साहित्य नहि बना सकैत, तहिना केवल शिल्पक चमक जीवनसँ कटि गेलापर रचनाकेँ मानवीय सार्थकता नहि दऽ सकैत अछि। अनुभवकेँ उपयुक्त भाषा, संरचना आ कलात्मक रूप भेटए, आ रचना जीवनक जटिलताकेँ इमानदारीसँ चिन्हए, तखने साहित्यिक प्रभाव गहींर होइत अछि। सामाजिक दृष्टि आ रचनात्मक कौशल एक-दोसराक विकल्प नहि, पूरक अछि।

समाज देखबाक लेल दृष्टिक साफ रहब सेहो आवश्यक अछि। जाति, वर्ग, लिंग, क्षेत्र, आत्मीयता, निजी वैमनस्य, पद वा प्रतिष्ठाक पूर्वाग्रह रचनाकारक नजैरक निष्पक्षताकेँ बाधित कऽ सकैत अछि। समदृष्टिक अर्थ सभ घटना, सभ विचार आ सभ पक्षकेँ एक्के नैतिक स्थान देब नहि। अन्याय करैबला आ अन्याय सहैबलाकेँ समान कहि देब निष्पक्षता नहि। समदृष्टि रचनाकारकेँ प्रिय-अप्रियक प्रभावसँ ऊपर उठि तथ्य, परिस्थिति आ मानवीय गरिमाक आधारपर जीवनकेँ देखबाक अनुशासन दैत अछि।

मण्डलजीक कथन ‘कथा नहि, जीवन हुनका पकड़ने अछि’ सृजनक ऐ प्रक्रियाकेँ गहींर अर्थ दैत अछि। लेखक सदिखन कथा खोजबाक लेल जीवनसँ बाहर नहि जाइत। कखनो कोनो घटना, पीड़ा, सम्बन्ध, अन्याय वा मानवीय अनुभव चेतनामे एतेक गहींर उतरैत अछि जे ओकर पूर्ण अभिव्यक्ति भेटबा धरि मन झुझुआइत रहैत अछि। ई झुझुआहट रचनात्मक बेचैनी अछि। ओ लेखककेँ सतही वर्णनपर सन्तोष करबासँ रोकैत आ अधिक उपयुक्त शब्द, संरचना तथा दृष्टिक खोजमे लगबैत अछि।

शब्द अही कारण भाषाक खाली बाहरी रूप नहि। प्रत्येक महत्त्वपूर्ण शब्द अपना संग अनुभव, इतिहास, सम्बन्ध आ सामाजिक स्मृतिक अनेक तह लऽ कऽ अबैत अछि। किसान, मजदूर, महिला, भूख, संघर्ष, प्रेम, मातृभूमि, स्वतंत्रता वा न्याय लिखैत काल लेखक केवल शब्द नहि चुनैत; ओइ शब्दसँ जुड़ल जीवनक संसारकेँ स्पर्श करैत अछि। असावधान शब्द वास्तविक जीवनकेँ सरल, विकृत वा रूढ़ छविमे बदैल सकैत अछि। संवेदनशील शब्द-चयन साहित्यिक शिल्पक संग सामाजिक जिम्मेदारी सेहो अछि।

रचनाकारक सामाजिक दृष्टि केन्द्र आ हाशियाक सम्बन्धमे आरो स्पष्ट होइत अछि। साहित्यिक केन्द्र केवल श्रेष्ठ रचनासँ नहि बनैत; संस्था, प्रकाशन, मंच, प्रचार, आर्थिक सामर्थ्य, परिचय आ सत्ता-समीपता सेहो ओकर निर्माणमे

भूमिका निभा सकैत अछि। फलतः किछु समर्थ रचनाकार, अनुभव आ आवाज अभिव्यक्तिक पर्याप्त अवसरसँ वंचित रहि सकैत अछि। साहित्यक दायित्व स्थापित केन्द्रक आवाज दोहराएब मात्र नहि, ओइ जीवन दिस सेहो देखब अछि जे पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहि पाबि सकल।

मुदा हाशियाक मनुक्खकेँ साहित्यिक विषय बना देब मात्र पर्याप्त नहि। आ तहिना ओकरा दया, असहायता वा करुणाक निष्क्रिय पात्र बना देलासँ ओकर जीवनक सम्पूर्णता सामने नहि अबैत। किसान, मजदूर, महिला, दलित, गरीब आ आन उपेक्षित समुदाय अपन श्रम, बुधि, अनुभव, प्रेम, असहमति आ परिवर्तनक सामर्थ्यक संग उपस्थित हो, तखने साहित्य ओकर मानवीय गरिमाकेँ स्वीकार करैत अछि। रचनाकार ओकर आवाजक मालिक नहि बनए; ओकर जीवन-सत्यकेँ सुनबाक, बुझबाक आ जिम्मेदारीसँ अभिव्यक्त करबाक प्रयास करए।

अही ठाम स्वतंत्र कलमक प्रश्न उठैत अछि। जखन लेखकक निर्णय पद, पुरस्कार, मंच, गुट, सत्ता-समीपता वा निजी लाभक अपेक्षासँ अत्यधिक प्रभावित हुअ लगैत अछि, तखन कठिन सत्य कहबाक ओकर सामर्थ्य कमजोर पड़ि सकैत अछि। स्वतंत्रताक अर्थ सभ सम्बन्धसँ कटि जाएब नहि; ओकर अर्थ ई अछि जे बाहरी लाभ लेखकक विवेकपर अधिकार नहि जमा लिअए। रचनाकार अपन निर्णयक मूल आधार अनुभव, अध्ययन, मानवीय दायित्व आ रचनात्मक इमानदारीकेँ बनेने रहए।

लोभसँ दूरी सम्मानक विरोध नहि। उचित सम्मान रचनाकारकेँ प्रोत्साहन दैत अछि आ समाजक धियान महत्त्वपूर्ण रचनादिस लऽ जा सकैत अछि। समस्या तखन उत्पन्न होइत अछि, जखन सम्मान सृजनक परिणाम रहबाक बदला ओकर मूल लक्ष्य बनि जाइत अछि। पुरस्कार एक समयक सामाजिक स्वीकृति भऽ सकैत अछि; रचनाक दीर्घजीवी मूल्य ओकर कलात्मक शक्ति, जीवन-सापेक्षता, पाठकीय सम्बन्ध आ समयक बदलैत कसौटीसँ विकसित होइत अछि।

प्रचारो ऐ अर्थमे एक तरहक साधन अछि, मुदा ओहो मूल्यक प्रमाण नहि। प्रचार रचनाकेँ दृश्य बना सकैत अछि, पाठक धरि पहुँचेबाक अवसर बढ़ा सकैत अछि, मुदा केवल दृश्यता रचनाकेँ सार्थक नहि बना दइत। रचना पाठकक

अनुभव, प्रश्न आ संवेदनासँ कोन सम्बन्ध बनबैत अछि, से अधिक महत्त्वपूर्ण अछि। जे कृति अपन समयक दबाएल अनुभवकेँ स्वर दैत, जीवनकेँ नव नजैरसँ देखबाक अवसर दैत वा मनुक्खक भीतर प्रश्न उत्पन्न करैत अछि, ओकर प्रभाव तात्कालिक प्रसिद्धिक सीमासँ बहुत आगू जा सकैत अछि।

वर्तमानक कर्म भविष्यक साहित्यक आधार बनैत अछि। साहित्यक इतिहास केवल विगतमे प्रतिष्ठित भऽ चुकल नामसभसँ नहि बनैत; आइ लिखल जा रहल, सीमित पाठक धरि पहुँचल अथवा तत्काल पर्याप्त स्वीकृति नहि पाबि सकल रचनासभ सेहो आगूक साहित्यिक स्मृतिक हिस्सा बनि सकैत अछि। समय प्रचारक केतेको परत हटा कऽ रचनाकेँ फेर परखैत अछि। अही कारण रचनाकारक मुख्य दायित्व तत्काल परिणामक हिसाब राखब नहि, अपन समय आ जीवनक प्रति सजग रहैत सृजन करब अछि।

संघर्ष जखन साहित्यक रूप ग्रहण करैत अछि, तखन ओ केवल टकरावक अभिलेख नहि रहैत। रचना संघर्षक कारण, पीड़ा, सम्बन्धक जटिलता आ परिवर्तनक सम्भावनाकेँ खोलैत अछि। अन्यायक विरोध आवश्यक अछि, मुदा घृणाकेँ अन्तिम मूल्य बना देलासँ नव विभाजन जन्म लऽ सकैत अछि। साहित्य प्रतिरोधकेँ न्याय, प्रेम, भायचारा आ पुनर्निर्माणक व्यापक मानवीय सन्दर्भ देबाक सामर्थ्य रखैत अछि। ओकर उद्देश्य मनुक्खक विनाश नहि, अमानवीय विचार, सम्बन्ध आ बेवस्थाकेँ चुनौती देब अछि।

साहित्यक यात्रा लेखकसँ आरम्भ भऽ लेखकपर समाप्त नहि होइत। पाठक ओकर दोसर आवश्यक पक्ष अछि। साहित्यकेँ केवल प्रशंसक नहि, प्रश्न करैबला सजग पाठक सेहो चाही। पाठक रचनाकेँ प्रेमसँ पढ़ितो ओकर सीमा, अन्तर्विरोध आ सम्भावनापर विचार कऽ सकैत अछि। सहमति साहित्यिक संवादक एक रूप अछि; असहमति, संशोधन, पुनर्पाठ आ नव प्रश्न सेहो ओकरा जीवन्त रखैत अछि।

पढ़ैत लोक जँ बजैत नहि, तँ साहित्यिक संवाद अधूरा रहि जाइत अछि। पाठकीय मौनक अनेक कारण भऽ सकैत अछि : संकोच, मंचक अभाव, प्रतिष्ठित नामक दबाव अथवा अपन विचारक अवमूल्यन। खुल्ला साहित्यिक वातावरण पाठककेँ प्रश्न करबाक, प्रतिक्रिया देबाक आ अर्थ-निर्माणमे सहभागी बनबाक अवसर दैत अछि। पाठकक अनुभव रचनाकेँ नव सन्दर्भ दैत अछि;

केतेको बेर ओइ अर्थकेँ सेहो सामने अनैत अछि, जे लेखकक मूल अभिप्रायमे स्पष्ट नहि छल।

लोक धरि नहि पहुँचल साहित्यक सामाजिक प्रभाव सोभाविक रूपसँ सीमित रहैत अछि। मुदा पहुँचक अर्थ बिक्री, प्रचार वा सामाजिक माध्यमपर दृश्यता मात्र नहि। वास्तविक पहुँच तखन बनैत अछि, जखन पाठक रचनामे अपन अनुभव, प्रश्न वा सम्भावनाक कोनो सम्बन्ध पबैत अछि। प्रकाशन, वितरण, पुस्तकालय, गोष्ठी, समीक्षा, अनुवाद आ डिजिटल माध्यम लेखक तथा पाठकक बीच बाट बनबैत अछि। ई बाट जेतेक खुलल आ निष्पक्ष रहत, साहित्यक सामाजिक संवाद ओतेक व्यापक हएत।

साहित्यिक संस्था आ मंचक जिम्मेदारी अही ठाम महत्त्वपूर्ण बनैत अछि। मंच केकरो बपौती नहि, सामूहिक साहित्यिक स्थान छी। ओतए रचनापाठक न्यायपूर्ण अवसर, नव प्रतिभाक सम्मान, आलोचनाक गरिमा, नियमक समान प्रयोग आ सार्वजनिक संसाधनक पारदर्शिता आवश्यक अछि। जखन रचनाक स्थानपर निजी समीपता, गुट वा प्रभाव कसौटी बनैत अछि, तखन साहित्यिक वातावरणक विश्वसनीयता कमजोर होइत अछि। संस्थाक मूल्य ओकर नाम वा आयोजनक संख्यासँ नहि, ओकर न्यायपूर्ण आ रचनात्मक बेवहारसँ बनैत अछि।

साहित्यक लोकतन्त्रीकरणक अर्थ केवल अधिक लोकक लिखए लगब नहि। एकर अर्थ अछि, अलग-अलग वर्ग, क्षेत्र, लिंग, पीढ़ी आ सामाजिक अनुभवक लोककेँ अभिव्यक्ति, प्रकाशन, पाठ, समीक्षा आ संवादक उचित अवसर भेटब। साहित्यिक संसार जँ किछु परिचित नाम, समूह वा केन्द्रक भीतर बन्न भऽ जाए, तखन समाजक अनेक अनुभव रचनात्मक प्रवाहसँ बाहर रहि सकैत अछि। विविध आवाजक उपस्थिति साहित्यकेँ केवल व्यापक नहि बनबैत, ओकर आत्मपरीक्षणक सामर्थ्य सेहो बढ़बैत अछि।

मोबाइल आ डिजिटल माध्यम ऐ दिशामे नव सम्भावना खेललक अछि। पोथी, पत्रिका वा गोष्ठी धरि सीमित विचार आब तुरन्त दूर-दूरक पाठक धरि पहुँच सकैत अछि। नव रचनाकार पारम्परिक प्रवेश-दुआरक प्रतीक्षा केने बिना अपन रचना पाठकक सोझाँ राखि सकैत अछि। एतए संवादक गति आ विस्तार दुनू बढ़ैत अछि। ओ आवाजसभ सेहो सामने आबि सकैत अछि, जे पहिने मंच, प्रकाशन वा भौगोलिक दूरीक कारण कात रहै छल।

मुदा गति मात्र गहराइक प्रमाण नहि। डिजिटल माध्यम अधूरा पाठ, बिना परीक्षण तथ्य, क्षणिक प्रतिक्रिया, उत्तेजना आ सतही प्रतिष्ठाक संकट सेहो अनैत अछि। आँगुरक एक इशारासँ सामग्री दूर धरि जा सकैत अछि, मुदा विचारक परिपक्वता लेल अध्ययन, धैर्य, प्रमाण आ आत्मपरीक्षण अखनो आवश्यक अछि। माध्यम आधुनिक भेलासँ विवेक अपने-आप आधुनिक नहि भऽ जाइत। साधनक सार्थकता ओकर जिम्मेदार उपयोगसँ तय होइत अछि।

अही कारण पोथीसँ सार्वजनिक डिजिटल माध्यम धरि यात्रा करैत काल साहित्यिक जिम्मेदारी कम नहि, केतेको अर्थमे आरो बढ़ि जाइत अछि। तथ्यक शुद्धता, भाषाक मर्यादा, असहमत बेकतीक सम्मान, भूल भेलापर संशोधनक तत्परता आ संवादक दुआर खुलल रखब आवश्यक अछि। दृश्यता उपयोगी अछि, मुदा ओकरा साहित्यिक मूल्यक एकमात्र प्रमाण मानब उचित नहि। आधुनिक संचार-माध्यमक वास्तविक शक्ति तखन प्रकट होइत अछि, जखन ओ विचारक पहुँच बढ़बैत, संवादकेँ व्यापक करैत आ उपेक्षित आवाजकेँ स्थान दैत अछि।

रचनात्मक जीवनमे अवसर बहुत बेर ओइ रचनाकारकेँ सामान्य अनुभवक भीतर भेटैत अछि, जे सजग आ निरन्तर तैयार रहैत अछि। सजग नजैर ओतए प्रश्न, कथा, चरित्र आ विचारक सम्भावना देखैत अछि, जेतए सामान्य दृष्टि केवल दैनिक घटना देखैत अछि। अध्ययन, अवलोकन, समय-संयम, लेखन आ पुनर्लेखन रचनाकारकेँ अवसरक प्रतीक्षासँ आगू लऽ जाइत अछि। ई निरन्तर अभ्यास अवसरक उपयोगक सामर्थ्य बनबैत अछि।

भाषाक प्रश्न ऐ रचनात्मक आत्मविश्वाससँ जुड़ल अछि। भाषा अपने कमजोर नहि होइत; ओकरा प्रति समाजक भरोस कमजोर भऽ सकैत अछि। मैथिलीमे आधुनिक जीवन, विज्ञान, समाज, तकनीक, दर्शन आ मानवीय जटिलताकेँ व्यक्त नहि कएल जा सकत, ई भाषाक सोभाविक सीमा नहि। अभिव्यक्तिक सीमा बहुत बेर उपयोगक संकोच, अध्ययनक अभाव वा नव शब्द-संसार बनेबाक अनिच्छासँ उत्पन्न होइत अछि। निरन्तर सृजन, अनुवाद, अध्ययन आ प्रयोगसँ भाषा अपन सामर्थ्य विकसित करैत अछि।

अपन भाषापर भरोसक अर्थ अतीतक गौरवमे अँटैक जाएब सेहो नहि। अतीत स्मृति, आधार आ आत्मविश्वास दैत अछि, मुदा वर्तमानक धड़कन सुनब

साहित्यक बरबैर आवश्यक जिम्मेदारी अछि। परम्पराकेँ सँजोगैत नव अनुभव, नव ज्ञान, नव तकनीक आ बदलैत सम्बन्धक अभिव्यक्ति करब भाषा आ साहित्यकेँ जीवन्त रखैत अछि। जे भाषा केवल अपन अतीत कहैत अछि आ वर्तमानक जीवन व्यक्त नहि करैत, ओकर भविष्य धीरे-धीरे संकुचित भऽ सकैत अछि।

सत्यक प्रश्न सेहो अही ठाम जुड़ैत अछि। सत्य बहुत बेर हाशियाक नहि होइत; ओकर स्वीकृति विलम्बित रहैत अछि, कारण ओ स्थापित हित, प्रतिष्ठा वा सुविधाकेँ असहज बनबैत अछि। साहित्यक दायित्व ओइ अनुभव आ तथ्यकेँ सामने आनब अछि, जे दबाएल, टारल वा अनसुन्ना कएल गेल। मुदा सत्य कहबाक दावा अपने-आपमे पर्याप्त नहि। तथ्यक शुद्धता, सन्दर्भक इमानदारी, संवेदना आ कलात्मक अनुशासन नहि रहलापर सत्यक प्रस्तुति सेहो एकांगी आरोप वा अतिरंजनामे बदैल सकैत अछि।

रचनाकारक बेवहार ओकर लिखल मूल्यक जीवित परीक्षा बनैत अछि। समानताक पक्षमे लिखैत निजी सम्बन्धमे भेदभाव करब, संवादक समर्थन करैत असहमत आवाज दबाएब अथवा प्रेमक साहित्य रचैत साहित्यिक जीवनमे घृणा पसारब विचारक विश्वसनीयताकेँ कमजोर करैत अछि। रचना आ जीवन पूर्णतः एक्के नहि भऽ सकैत, कारण साहित्य कल्पना आ जटिल मानवीय अनुभवक क्षेत्र सेहो छी। मुदा दुनूक बीच लगातार उलटा सम्बन्ध रहबो विचारणीय अछि। लेखकक जीवन ओकर रचनाक प्रमाणपत्र नहि, मुदा ओकर घोषित मूल्यक सामाजिक सन्दर्भ अवश्य अछि।

आत्मीयता, सहयोग आ विचार-साम्य साहित्यिक जीवनक सोभाविक हिस्सा अछि। समस्या तखन उत्पन्न होइत अछि, जखन आत्मीयता गुटमे बदैल अपन लोकक कमजोर रचनाकेँ आगू बढ़बैत आ दोसर समर्थ रचनाकेँ कात करैत अछि। एहेन बेवहार साहित्यिक मूल्यांकनकेँ दूषित करैत आ नव रचनाकारक भरोस तोड़ैत अछि। गुटबाजीक विकल्प खुल्ला आ सम्मानपूर्ण विचार-विनिमय अछि। संवाद मनुक्खकेँ अपन सीमाकेँ चिन्हबाक, दोसराक अनुभव बुझबाक आ भिन्न दृष्टिकेँ ग्रहण करबाक अवसर दैत अछि। अहीसँ साहित्य बन्न घेरासँ बाहर निकैल व्यापक सामाजिक संवादक हिस्सा बनैत अछि।

सृजनक दीर्घ यात्रा नियमितताक बिना सम्भव नहि। रचना बैसारी समयक खेल नहि, जीवनक एक अनुशासित वृत्ति अछि। प्रेरणाक क्षण महत्त्वपूर्ण अछि, मुदा केवल प्रेरणाक प्रतीक्षासँ लेखनक क्रम नहि बनैत। अध्ययन, अवलोकन, समय-संयम, अभ्यास, पुनर्विचार आ पुनर्लेखन रचनात्मक तैयारीक हिस्सा अछि। जीवनक व्यस्तता आ संघर्षक बीच सृजनशील वृत्तिकेँ जीवित रखब रचनाकारक आत्मअनुशासनक परीक्षा छी।

मण्डलजीक साहित्यिक जीवन ऐ नियमितताक एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत करैत अछि। व्यवस्थित लेखन देरीसँ आरम्भ भेलोपर निरन्तर श्रमसँ विस्तृत रचनात्मक संसार विकसित भऽ सकैत अछि, ई हुनकर यात्रा देखबैत अछि। नियमितताक अर्थ केवल अधिक लिखब नहि। जीवनकेँ देखैत रहब, पढ़ैत रहब, अपन लिखलपर फेर विचार करब आ अनुभवकेँ भाषा देबाक तैयारी जीवित रखब सेहो ओतबे महत्त्वपूर्ण अछि।

खेती आ सृजनक बीच एतए एकटा अर्थपूर्ण साम्यता देखाइत अछि। खेतमे प्रत्येक दिन एक्के काज नहि होइत, मुदा खेतीक क्रम तैयारी, ऋतु, श्रम, प्रतीक्षा आ पुनः तैयारीसँ चलैत रहैत अछि। तहिना साहित्यक धारा केवल प्रेरणाक एक क्षणसँ नहि बनैत। अध्ययन, अनुभव, लेखन, संशोधन आ पाठकीय संवादक निरन्तर प्रक्रियासँ रचना परिपक्व होइत अछि। बीआ रोपिते फसिल नहि बनैत, तहिना लिखिते प्रत्येक रचना समयक स्मृतिमे स्थायी स्थान नहि पबैत।

समाजसँ कटि साहित्य अपन पूर्ण भाँज नहि पकैड़ सकैत। समय बदलैत अछि, नव समस्या, सम्बन्ध, तकनीक, संघर्ष आ मानवीय आकांक्षा जन्म लैत रहैत अछि। रचनाकार जँ ऐ बदलावसँ संवाद तोड़ि लैथ, तँ हुनकर साहित्य जीवनक चलैत प्रवाहसँ दूर भऽ सकै छैन। समाजसँ जुड़ल रहबाक अर्थ प्रत्येक घटनापर तुरन्त लिखब नहि; ओकर अर्थ समयक गहींर गति, लोकक अनुभव आ बदलैत मूल्य-बोधकेँ गहिंकी नजैरसँ देखैत रहब अछि।

साहित्य सामाजिक संवादकेँ गहींर करैत-करैत कखनो व्यापक वैचारिक आन्दोलनक हिस्सा बनि सकैत अछि। आन्दोलनक अर्थ एतए नारा, भीड़ वा क्षणिक उत्तेजना मात्र नहि। मनुक्खक नजैर, संवेदना, सम्बन्ध आ मूल्य-बोधमे दीर्घ परिवर्तन सेहो आन्दोलनक रूप छी। साहित्य ऐ परिवर्तनकेँ आदेशसँ नहि,

प्रश्न, अनुभव, स्मृति, कल्पना आ संवेदनाक माध्यमे जन्म दैत अछि।

अही कारण साहित्यक मूल मानवीय स्वर प्रेम आ भायचारा कहल जा सकैत अछि। मुदा ई प्रेम अन्यायक प्रति मौन स्वीकृति नहि। जीवनक प्रति प्रेम मनुक्खक गरिमा, श्रम, स्वतंत्रता आ न्यायक पक्षमे ठाढ़ हेबाक साहस दैत अछि। अन्यायकेँ चिन्हब, ओकर विरोध करब आ तैसंग अधिक मानवीय सम्बन्धक सम्भावना देखब, ई सभ प्रेमक व्यापक सामाजिक अर्थमे समाएल अछि। जीवनक संघर्ष जखन सृजन बनैत अछि, तखन निजी अनुभव व्यापक मानवीय अर्थ ग्रहण करैत अछि।

रचनाक दशा आ दिशा दुनू महत्त्वपूर्ण अछि। दशा ओकर भाषा, संरचना, शिल्प आ कलात्मक स्तर भेल; दिशा ओकर मानवीय दृष्टि, सामाजिक बोध आ जीवनक प्रति दायित्व। उचित दिशा कमजोर रचना-विधानक कमी पूरा नहि कऽ सकैत, तहिना कलात्मक चमक अमानवीय दृष्टिकेँ सार्थक नहि बना सकैत अछि। साहित्यक प्रभाव तखने गहींर होइत अछि, जखन रचनात्मक कौशल आ जीवनक प्रति उत्तरदायित्व एक-दोसरसँ जुड़ैत अछि।

समय रचनाक मूल्यांकन करत, मुदा साहित्यकारक काज समयक निर्णयक प्रतीक्षा करब नहि। ओकर जिम्मेदारी अपन वर्तमानकेँ गहराइसँ बुझब, अध्ययन करब, अपन दृष्टिक पुनर्परीक्षण करब आ इमानदारीसँ सृजन करैत रहब अछि। समकालीन आलोचना ओकरा अपन सीमा बुझबाक अवसर दैत अछि, मुदा कोनो रचनाक दीर्घकालीन अर्थ नव पाठक, नव समय आ नव सामाजिक प्रश्नक बीच सेहो विकसित होइत रहैत अछि। पुरस्कार भेटए वा नहि, तत्काल स्वीकृति हो वा विलम्बसँ, रचनाकारक कर्मक प्राथमिकता सृजनहि रहैत अछि।

पहिल खण्ड ‘समाजक भीतर मनुक्ख’ ई देखैत अछि जे समाज मनुक्खकेँ भाषा, सम्बन्ध, पहचान आ मूल्य दैत अछि, संगहि रूढ़ि, भेदभाव आ असमानताक सीमा सेहो। आत्मपरीक्षण, विवेक आ सामाजिक जिम्मेदारीक माध्यमे मनुक्ख प्राप्त संसारकेँ केवल स्वीकार नहि करैत, ओकर मूल्यांकन करैत आ अपन जीवनक दिशा चुनबाक प्रयास करैत अछि। दोसर खण्ड ‘सृजनक भीतर समाज’ ऐ यात्राकेँ आगू बढ़बैत अछि। चेतन मनुक्ख जखन अपन अनुभवकेँ शब्द दैत अछि, तखन ओकर रचनामे समाजक स्मृति, संघर्ष, अन्तर्विरोध आ सम्भावना सेहो प्रवेश करैत अछि।

अही ठाम दुनू खण्डक वैचारिक सम्बन्ध पूर्ण रूपसँ स्पष्ट होइत अछि। समाज मनुक्खकेँ बनबैत अछि, मुदा मनुक्ख केवल बनैत नहि रहैत; ओ प्रश्न करैत, चुनैत आ कर्म करैत अछि। ओकर अनुभव विचार बनैत अछि, विचार सृजनक रूप पबैत अछि, सृजन पाठक धरि पहुँचैत अछि आ पाठक ओकरा अपन अनुभवक संग पुन: अर्थ दैत अछि। ओइ संवादसँ समाज स्वयंकेँ नव नजैरसँ देखबाक अवसर पबैत अछि। ऐ तरहेँ जीवन साहित्यकेँ जन्म दैत अछि आ साहित्य फेर जीवनसँ जुड़ैत अपन अर्थ आ सार्थकताक परीक्षा दैत अछि।

'स्वनिर्मित जीवन'क अर्थ रचनाकार लेल अपनाकेँ अन्तिम रूपसँ निर्मित मानि लेब नहि। ओकरा निरन्तर सीखैत रहए, अपन पूर्वाग्रह चिन्हए, भाषाकेँ समृद्ध करए, लोभ आ सुविधाकेँ विवेकपर हावी होइसँ रोकए आ समाजक प्रति अपन जिम्मेदारीक समय-समयपर पुनर्परीक्षण करैत रहए पड़ैत अछि। स्वनिर्माण एक बेर प्राप्त भऽ जाइबला उपलब्धि नहि; ई जीवन भरि चलैबला आत्मपरीक्षण, अनुशासन, संवाद, संशोधन आ कर्मक सतत प्रक्रिया अछि।

अही कारण 'सृजनसँ जीवन धरि' कोनो अन्तिम साहित्यिक सिद्धान्त पाठकपर आरोपित नहि करैत। ई लेखक, पाठक आ साहित्यिक समाजसभकेँ अपन भूमिका देखबाक आग्रह करैत अछि। लेखक केकरा लेल लिखैत अछि? पाठक केना पढ़ैत अछि? संस्था केकरा अवसर दैत अछि? भाषा कोन जीवन व्यक्त करैत अछि? रचना अन्याय, प्रेम, संघर्ष आ सम्भावनाकेँ केतेक इमानदारीसँ सामने अनैत अछि? ऐ प्रश्नसभक उत्तर स्थिर नहि; समय, अनुभव आ सामाजिक परिवर्तनक संग विकसित होइत रहैत अछि।

पोथीक अन्तिम पृष्ठपर सृजनक यात्रा समाप्त नहि होइत। वास्तविक परीक्षा ओतए आरम्भ होइत अछि, जेतए पढ़ल विचार पाठकक नजैर, भाषा, बेवहार आ सामाजिक भूमिकासँ संवाद करैत अछि। जँ रचना कोनो मनुक्खकेँ अपन जीवन नव नजैरसँ देखबाक, दबाएल आवाज सुनबाक, अन्यायपर प्रश्न उठेबाक, अपन पूर्वाग्रह चिन्हबाक वा अधिक जिम्मेदार कर्म करबाक प्रेरणा दैत अछि, तँ शब्द पुनः जीवनक हिस्सा बनि जाइत अछि।

सृजन जीवनसँ जन्म लैत अछि, शब्दमे रूप पबैत अछि, पाठकक भीतर नव अर्थ ग्रहण करैत अछि आ फेर जीवनक प्रवाहमे समाहित भऽ जाइत अछि। ई पुनः जीवनसँ जुड़ब समापन नहि, बल्कि ऐगला प्रश्न, ऐगला विचार आ ऐगला

सृजनक आरम्भ अछि। समाजक साँस जाधैर चलत, मनुक्ख अपन सुख-दुःख, संघर्ष, प्रेम, स्मृति आ सपनाकेँ अभिव्यक्ति दैत रहत। साहित्यक धारा ताधैर बहत, प्रश्न उठबैत, अनुभव सँजोगैत, संवाद जगबैत आ जीवनकेँ अधिक निष्पक्ष, संवेदनशील तथा मानवीय बनेबाक सम्भावना जीवित रखैत।

स्रोत आ पाठ-सन्दर्भ

✳

‘स्वनिर्मित जीवन–2 : सृजनक भीतर समाज’क मूल वैचारिक स्रोत श्री जगदीश प्रसाद मण्डलक ‘पयस्विनी’ अछि। ऐ खण्डक अधिकांश विचार-बिन्दु ‘पयस्विनी’मे संकलित आलेख, निबन्ध, वक्तव्य, प्रश्नोत्तर आ परिसंवादसँ चुनल कथनक आधारपर विकसित भेल अछि। किछु विचार-बिन्दु आ जीवन-सन्दर्भकेँ स्पष्ट करबाक लेल श्री गजेन्द्र ठाकुर लिखित ‘जगदीश प्रसाद मण्डल : एकटा बायोग्राफी’मे संकलित मण्डलजीक जीवन-सूत्रक सेहो सहायक स्रोतक रूपमे उपयोग कएल गेल अछि। प्रत्येक मूल कथन साहित्य, सृजन आ समाजसँ जुड़ल कोनो महत्त्वपूर्ण प्रश्नक प्रवेश-सूत्र अछि; ओकर पछाइत विकसित विश्लेषण, तर्क, अर्थ-विस्तार आ समकालीन सन्दर्भ प्रस्तुत पोथीक स्वतन्त्र वैचारिक विमर्श अछि।

प्रयुक्त मूल संस्करणक विवरण : जगदीश प्रसाद मण्डल, *पयस्विनी*, पहिल संस्करण, 2021; दोसर संस्करण, 2023; पल्लवी प्रकाशन, बेरमा/निर्मली; ISBN 978-93-93135-05-6।

अन्य प्रयुक्त स्रोत : गजेन्द्र ठाकुर, **जगदीश प्रसाद मण्डल : एकटा बायोग्राफी।**

प्रत्येक उद्धरणक अन्तमे कोष्ठकक भीतर देल पृष्ठ-संख्या ‘पयस्विनी’क दोसर संस्करण, 2023 पर आधारित अछि। आन संस्करणमे पृष्ठ-संख्या भिन्न भऽ सकैत अछि। मूल कथनक व्यापक प्रसंग बुझबाक लेल पाठक उल्लिखित पृष्ठक संग ओकरा पहिनेक आ पछातिक अनुच्छेद सेहो पढ़ि सकै छैथ। जेतए विचार-बिन्दु वा जीवन-सन्दर्भ जीवनीपर आधारित अछि, ओतए सम्बन्धित स्रोतकेँ आधार मानल गेल अछि।

उद्धरण-चिह्नक भीतरक कथन मण्डलजीक अछि। ओकर पछातिक विवेचन मूल कथनसँ प्रेरित स्वतन्त्र विचार-विस्तार अछि। ऐ खण्डमे मुख्यतः रचनाकारक सामाजिक दृष्टि, जीवन आ सृजनक सम्बन्ध, साहित्यिक स्वतन्त्रता, पाठक आ संस्थाक भूमिका, भाषा तथा बदलैत माध्यमक प्रश्न, सृजनक अनुशासन आ साहित्यक सामाजिक दायित्वपर विचार विकसित कएल गेल अछि। ऐ व्यापक सन्दर्भक भीतर हाशियाक आवाज, समीक्षा, पुरस्कार, प्रचार, समय-मूल्यांकन आदि प्रसंग सेहो अबैत अछि। तँए प्रस्तुत विश्लेषण वा निष्कर्षकेँ मण्डलजीक प्रत्यक्ष कथन मानब उचित नहि। मूल कथन आ प्रस्तुत विमर्श परस्पर सम्बद्ध रहितो अपन-अपन वैचारिक उत्तरदायित्व रखैत अछि।

मण्डलजीक जीवन-सन्दर्भक उपयोग केवल ओत्तै कएल गेल अछि, जेतए हुनकर कथनक बेवहारिक पृष्ठभूमि बुझब आवश्यक छल। ई उल्लेख हुनकर सम्पूर्ण जीवनवृत्त प्रस्तुत करबाक प्रयास नहि, श्रम, संघर्ष, लोकजीवन आ सृजनक पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट करबाक सहायक आधार मात्र अछि।

उद्धरणसभ मूल पोथीक पाठसँ मिलाकऽ प्रस्तुत कएल गेल अछि। जेतए मुद्रणजनित स्पष्ट टंकणदोष, शब्दक बीच अनावश्यक रिक्ति, विरामचिह्नक असंगति अथवा कम्प्यूटर-जनित अदृश्य संकेत छल, ओतए पठनीयता लेल न्यूनतम सुधार कएल गेल अछि। मूल कथनक आशय, वैचारिक स्वर आ वाक्यक्रमकेँ सुरक्षित रखबाक प्रयास कएल गेल अछि।

'पयस्विनी' अलग-अलग समयमे लिखल सामग्रीक संग्रह अछि। ऐमे उल्लिखित किछु तथ्य, रचनाक संख्या, साहित्यिक गतिविधि आ समकालीन प्रसंग अपन मूल लेखनकालक स्थितिकेँ व्यक्त करैत अछि। तँए एहेन उल्लेखकेँ वर्तमान समयक नवीनतम आँकड़ा मानि नहि पढ़ल जाए, बल्कि ओइ सामग्रीक मूल्य ओकर ऐतिहासिक आ वैचारिक सन्दर्भमे बुझल जाए।

ई खण्ड 'पयस्विनी'क सारांश, पारम्परिक पोथी-समीक्षा वा मूल पोथीक विकल्प नहि छी। प्रत्येक विचार-बिन्दु मूल कथन वा प्रासंगिक जीवन-सन्दर्भसँ आरम्भ भऽ साहित्य, समाज आ जीवनक व्यापक प्रश्न दिस बढ़ैत अछि। पाठक मूल कथन, जीवन-सन्दर्भ आ प्रस्तुत विमर्शकेँ अपन अनुभव, विवेक आ समकालीन परिस्थितिक आधारपर पढ़ैथ, परखैथ आ अपन दृष्टि तथा नव प्रश्नक संग ऐ वैचारिक यात्राकेँ आगू बढ़बैथ।

Notes